

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180523

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. **H83**
G 98 M

Accession No. **H 2705**

Author **गुरुदत्त**

Title **माया जाल**

This book should be returned on or before the date
last marked below.

माया जाल

लखक

श्री गुरुदत्त

प्रकाशक

ओरिएण्टल बुक डिपो

१७०४, नई सड़क, दिल्ली ।

प्रकाशक—

ओरिएण्टल बुक डिपो.

नई सड़क बिल्ली

मूल्य ५)

मुद्रक—

सुपर प्रेस,

पहाड़ गंज, देहली

भूमिका

जब पुस्तक की पांडुलिपि लिख दी गयी तो एक मित्र इसे पढ़ गए और पश्चात् विस्मय में लेखक का मुख देखने लगे। उनका विस्मय करना स्वाभाविक था। वे यह समझ नहीं सके थे कि एक पढ़ा-लिखा अनुभवी लेखक मदारी और जादू के खेलों पर पुस्तकें लिख कर क्या कहना चाहता है। आज कहे जाने उन्नत समाज में इन बातों की चर्चा लज्जा की बात मानी जाती है।

परन्तु यह तो उपन्यास है। उपन्यास में पात्र, स्थान और वातावरण तो विषय को रंग देने के लिए कल्पित किए जाते हैं। शर्बत में सुगन्धि अथवा सुन्दरी में शृंगार जो अस्तित्व रखते हैं वही उपन्यास में ये काल्पनिक वस्तुएं रखती हैं।

इस पर भी कल्पना पाठक की बुद्धि की सीमा के भीतर होनी चाहिए। उन विषयों पर लिखने में भारी सतर्कता की आवश्यकता होती है जो साधारण मनुष्य की बुद्धि की सीमा-रेखा के समीपवर्ती हों। एक इञ्च भी इधर उधर हुए कि कहानी के अस्वाभाविकता के क्षेत्र में पहुँच जाने का डर होता है। कभी कहानी लिखने वाले को अपनी कल्पना पर लगाम लगाने की आवश्यकता होती है और यदि लेखक चतुर हो तो पाठक के बुद्धिक्षेत्र को विस्तृत करने की भी कभी आवश्यकता पड़ जाती है।

अतएव इस पुस्तक के उस भाग को, जिसमें सम्मोहिनी विद्या, योग, साधना इत्यादि का वर्णन है, देखकर विस्मय करने की आवश्यकता नहीं। इस सब के भीतर आशय वही है जो एक कृषक अथवा व्यापारी की जीवनगाथा को लिखने का है। संसार माया है, माया के अर्थ

‘मिथ्या’ नहीं। इसके अर्थ केवल यह है कि जो ऐसा प्रतीत होता है वह वैसा है नहीं। विज्ञान तथा ज्ञान दोनों मनुष्य को इसी परिणाम पर ले जाने के लिए यत्नशील हैं। ये मनुष्य को संसार के वास्तविक रूप का निरूपण कराने का यत्न करते हैं।

संसार का वास्तविक रूप क्या है ? उसका उत्तर अति गहन है। भगवान् कृष्ण अपनी गीता में और उससे पूर्व वेद-वेदांग इस रूप का वर्णन करने का यत्न कर गए हैं। मनुष्य की बुद्धि काली रात में एक टिमटिमाते दीपक के तुल्य है। मनुष्य उस दीपक के प्रकाश में केवल उतना ही दूर तक देख सकता है, जितनी दूर तक दीपक का प्रकाश जाता है। बुद्धि रूपी दीपक को अधिक और अधिक ज्योतिर्मय करने से मनुष्य अधिक और अधिक दूर तक देखने का सामर्थ्य प्राप्त करता जाता है। बुद्धि का विकास भी एक साधारण बात नहीं। इसके लिए भारी प्रयास और सम्भवतः जन्म जन्मान्तर के यत्न की आवश्यकता रहती है। योग, साधना इस यत्न में भारी सहायता देती हैं।

जब मनुष्य को यह विदित हो जाना है और यह बात उसके हृदय में बैठ जाती है कि मनुष्य का शरीर उस पिजड़े के समान है, जिसमें सुन्दर तोता बैठा है, तो उसका संसार को देखने का ढग सर्वथा परिवर्तित हो जाता है। तोता अर्थात् आत्मा मुख्य और पिजड़ा अर्थात् यह शरीर और बाह्य संसार गौण हो जाते हैं। तोता अपने पिजड़े के सौन्दर्य को देख-देख प्रसन्नता अनुभव कर सकता है। इस पर भी वह प्रसन्नता मिथ्या है। वह उसके लाभ में नहायक नहीं हो सकती।

पिजड़े के सुन्दर करने के प्रयत्न में ही एक महाजन धोखा-धड़ी, यहाँ तक कि झूठी बही लिखने में यत्न करता है। इसी के लिए चोर चोरी करता है और एक कारखाने का मालिक सहस्रों सेवकों को नौकर रख, दिन रात धन कमाने में लगा रहता है। कोई विवाह कर धन

प्राप्त करना चाहता है, तो कोई दूसरों से झगड़ा उत्पन्न कर अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं। यह सभी कुछ इस कारण होता है कि संसार को मुख्य और वास्तविक वस्तु, आत्मोन्नति को गौण मान लिया जाता है।

वैदिक धर्म अथवा संस्कृति संसार और आत्मा में भेद को स्पष्ट कर आत्मा को मुख्य और संसार को गौण बताती है। सांसारिक वैभव और सुविधा आत्मोन्नति में साधन रूप ही स्वीकार करती है। सांसारिक उन्नति कुछ सीमा तक आत्मोन्नति में सहायक होती है, परन्तु जब भी यह सीमा उल्लंघन होने लगती है, वैदिक धर्म उंगली खड़ी कर संकेत कर देता है कि आगे नहीं जाना।

वर्तमान युग संसार की असीम उन्नति में यत्नशील है, युग-धर्म आत्मोन्नति के विषय में सर्वथा चुप है। यह प्रवृत्ति अवैदिक है। यह विचार अनर्थक है। यह मनुष्य को उन्नति के स्थान पर अवनति की ओर ही ले जाने में यत्नशील है।

संसार साध्य नहीं, साधन है। यह विचार जब दृढ़ हो जाता है तो कार्य सन्मार्ग की दिशा में चल पड़ते हैं और जो आत्मनुष्टि और आनन्द प्राप्त होता है, वह अकथनीय है।

इस विशाल विस्मय के एक बहुत ही सीमित अंश को लेकर यह “माया जाल” लिख दिया गया है। इसमें कहाँ तक लेखक को सफलता मिली है, पाठक ही बता सकते हैं।

उपन्यास में स्थान, नाम, काल काल्पनिक होते हैं। इसमें भी वैसा ही है। किसी से प्रेम अथवा द्वेष तथा मोह और घृणा अभिप्रेत नहीं।

देहात	...	...	१
नगर का चलन	...	...	५३
संकट म सहयोगिता	...	...	१२७
माया पर आधिपत्य	...	...	१८३
जब चिड़ियां चुग गईं खेत	...	...	२४८

देहात

खेतों के आगे खेत, जहाँ तक दृष्टि जाती थी, फैले हुए थे। गाँव के बाहर खड़े होकर पश्चिम की ओर देखने से ऐसा प्रतीत होता था कि खेतों का फैलाव वहाँ तक है जहाँ आकाश भूमि से आकर मिल जाता है। बीच बीच में कहीं कहीं बबूल, आम और सिरस के पेड़ ऐसे खड़े प्रतीत होते थे जैसे खेतों में प्रहरी खड़े हों। ये उस विस्तृत दृश्य के देखने में बाधा नहीं थे प्रत्युत उसको रूप-रंग दे रहे थे।

गाँव के बाहर एक बगिया थी। उसमें एक कुआँ था जिस पर रहट लगा था और जिसको मंगल भैया के बैल चलाया करते थे। इस रहट के पानी से, गाँव भर के लोगों के पीने, स्नानादि और कपड़े इत्यादि धोने के काम के साथ साथ बगिया भी हरी-भरी रहती थी। बगिया ननकू दादा की बगिया कहाती थी। ननकू दादा को मरे सौ वर्ष से ऊपर हो गया था, परन्तु उसका नाम चलता था। बगिया में प्रायः आम के पेड़ थे। एक कोने में थोड़ी सी भूमि में गेंदा, मोतिया, चम्बेली इत्यादि फूल के पौधे भी लगे रहते थे। ये फूल बगिया के कोने में मन्दिर के देवता की पूजा के काम आते थे। कभी गाँव में किसी के पूजादि-उत्सव होता तो वह भी इस बगिया से फूल पा जाता था।

• गाँव बगिया से पूर्व की ओर था और उसमें सबसे पहला घर मंगल भैया का ही पड़ता था। बीसियों वर्षों से यह प्रथा चली आती थी कि

प्रातःकाल मंगल के पिता के घर से बैलों की जोड़ी आती और रहट चलाती। रहट की चीं-चीं सुन कर गाँव के लोग, नर-नारी, बाल-वृद्ध, अपनी नित्य-क्रिया से निवृत्त होने के लिए घर से निकल आते। खेतों में स्त्री, पुरुष और बच्चे शौच के लिये जाते तो लोटों में रहट से पानी भर कर ले जाते और वहाँ से आकर दातुन-कुल्ला करते, स्नान करते और शिवालय में जल चढ़ा घरों को चले जाते।

पुरुष, जिन्होंने खेतों में काम करना होता था, अन्धेरा रहते ही घरों से निकल आते और पौ फटने से पूर्व शौचादि से निवृत्त हो कन्धों पर हल रख, बैलों को हाँकते हुए अपने-अपने खेतों को चले जाते थे। इनके पीछे दूसरा नम्बर होता था गाँव की स्त्रियों का। वे निवृत्त हो कर चली जातीं तो सबके अंत में वृद्ध जन कुएँ पर आते। इस प्रकार जब सूर्योदय से एक प्रहर बीतने तक यह प्रथम कार्य सम्पन्न हो जाता, तो बैल रहट से निकाल आराम के लिये छोड़ दिये जाते। भूसा-दाना उनके सम्मुख डाल दिया जाता और वे आम के पेड़ के नीचे बैठ जुगाली करने लगते थे।

मध्याह्न के समय गाँव की स्त्रियाँ अपने पुरुषों के लिये खाना ले खेतों में चली जातीं और अपने घर वालों को खाना खिला-पिला कर लौट आतीं। तन्दूर की तीन चार मोटी-मोटी रोटियाँ, उन पर मेथी-आलू का साग और साथ लोटाभर लस्सी, यह प्रायः उनका भोजन होता था, जो सूर्योदय से मध्याह्न तक खेतों में काम करने वालों को मिलता था। इस समय बैलों को भी छुट्टी हो जाती थी और वे भी भूसा खाते, जुगाली करते और बैठ कर थकान निकालते थे। खेतों में काम करने वालों के लिये भी दो घंटा भर आराम करने का समय होता और वे

पेड़ के नीचे गंगी भूमि पर लेट कर, खाई हुई रोटी की मस्ती अथवा छेँ घंटे खेत में काम करने की थकान दूर करते थे ।

दो घंटे भर विश्राम करने के पश्चात् फिर बैल हलों में जुत जाते और हल खेतों में खुसुर-खुसुर चलने लगते थे । कभी खेतों में निराई करनी होती तो हँसिया लेकर खेतों में घुस जाना और छेँ घंटे बिना गंदन ऊपर उठाये मेहनत करनी होती थी ।

इस प्रकार महीनों की मेहनत के पश्चात् जब उपज पक कर, कट कर और एकत्रित हो कर घर आती तो जो आनन्द मेहनत करने वालों के मन में होता उसका अनुमान लगाना कठिन है ।

गाँव संसार का बहुत छोटा सा कोना मानना चाहिये । संसार के सुख-दुःख, शोक-आनन्द, ईर्ष्या-द्वेष, काम-मोह, लोभ-अहंकार आदि सब मनोद्गार इसमें भी पाये जाते हैं । जैसे एक दाने से दाल के पकने का अनुमान लगाया जा सकता है, वैसे ही एक गाँव के समाज का अध्ययन मानवसमाज के ज्ञान का द्योतक हो सकता है ।

बंसाख के अन्तिम दिन थे । मंगल गेहूँ की फसल कटवा, छटवा और फुकवा कर घर ला रहा था । खलियान में गेहूँ रखा जा रहा था । गाँव के कामे उसकी सहायता कर रहे थे । वह खेत में इनकी देख-भाल करता था और घर पर उसकी माँ प्रीती और उसकी बीबी मोहिनी खलिहान में रखवाली करती थीं ।

इस वर्ष चालीस बीघा में गेहूँ बोया गया था और लगभग एक हज़ार मन के उपज की आशा थी । दो सहस्र मन भूसा भी एकत्रित होना था । इस कारण बीसियों कामे काम कर रहे थे । फसल के दिनों

में मंगल को एक क्षण भी अवकाश नहीं होता था। रात को जब घर आता तो इतना थक जाता था कि भोजन कर सोने के अतिरिक्त कुछ कर नहीं सकता था। उसकी माँ और बीबी भी घर के काम-काज में, अनाज को खेतों में भरवाने में और गाय-बैल की देख-भाल में इतनी लगी रहती थी कि उनको सिर खुजलाने का भी अवकाश नहीं होता था।

अनाज घर में आ गया और संभल गया। भूसा अभी बाहर रक्खा था। मंगल चौड़ी छाती, ऊँची गरदन, विशाल मस्तिष्क, गोल परन्तु सुदृढ़ भुजदण्ड, पुष्ट जंघाएँ, दृढ़ पग और हाथ में लाठी लिये, तहमत बाँधे, कन्धे पर कुर्त्ता लटकाये सिर से नंगा खेतों से चला आता था।

बगिया के पास से गुजरा तो उसकी दृष्टि अपने छोटे भाई रामू पर जा पड़ी। वह कुएँ की जगत पर बैठा दूर खेल रही लड़कियों पर कंकड़ फेंक रहा था। मंगल आज बहुत प्रसन्न था। उसके खलिहान गेहूँ से भर गये थे। भूसा इतना हुआ था कि रखने को स्थान नहीं था। इस वर्ष वर्षा समय पर हुई थी। जाड़ा अधिक नहीं पड़ा था। गाँव में किसी प्रकार की बीमारी नहीं फैली थी। वह स्वयं और उसके खेतों में काम करने वाले प्रसन्न और स्वस्थ रहे थे। इतने सौभाग्य में किसी का प्रसन्न होना और फिर भगवान की कृपा के लिए कृतज्ञ होना स्वाभाविक ही है। रामू को रेशमी कुर्त्ता और धोती पहिने लड़कियों से कल्लोल करते देख उसे विचार आया कि मन्दिर में देवता को प्रणाम करता चलूँ तो ठीक रहे। उसके पीछे पीछे भूसे से भरी दो गाड़ियाँ खेत से घर की ओर आ रही थीं। मंगल ने रामू को आवाज दी, “ओ रामू !”

“हाँ भैया !” रामू ने जगत पर बैठे-बैठे आवाज़ दी ।

“अबे चलो ! इस भूसे को घर पहुँचा आओ । मैं मन्दिर से होकर आता हूँ ।”

“मुझे अवकाश नहीं है ।” रामू ने छोटी-छोटी लड़कियों को, जो कुछ दूर बैठी गीटे खेल रही थीं, एक कंकड़ मारते हुए कहा ।

मंगल ने उसको कंकड़ फेंकते देख लिया था । उसने समीप आते हुए कहा, “कौन समर विजय कर रहे हो यहाँ बैठे ?”

“मैं नहीं जाऊँगा भैया !” इतना कह उसने एक और कंकड़ उठाया ।

इस समय मंगल बहुत समीप आ गया था । उसको अब रामू के कंकड़ों का लक्ष्य गीटे खेलती तीन लड़कियाँ भी दिखाई दे गई थीं । “अरे ! अरे !! यह क्या कर रहे हो ?” मंगल ने रामू का कंकड़ फेंकने के लिए हाथ उठता देख कर कहा । रामू रुका नहीं और उसने अपना प्रहार कर दिया । इस समय कंकड़ निशाने पर बैठा । एक लड़की के सिर पर लगा और उसके मुख से निकल गया, “आह !”

मंगल को यह बात बहुत बुरी लगी । वह माथे पर त्वोरी चढ़ा कर रामू के पास आ खड़ा हुआ था । लड़कियाँ उठी और मंगल को रामू की ओर घूरते देख, उत्साहित हो, समीप आ बोलीं, “दादा ! रामू मारता है ।”

“क्यों बे ! क्यों मारा है इनको ?

“ये मुझको खिलाती नहीं ।”

• “हमने कहा है,” एक लड़की ने दूर बगिया में लड़कों को गुल्ली-डंडा खेलते हुए दिखा कर कहा, “उन लड़कों में जा कर खेल ।”

“मेरा मन इनके साथ खेलने को करता है।”

मंगल को और भी क्रोध चढ़ गया। उसने रामू का कान मरोड़ कर कहा, “अरे गधे ! लड़कियों के साथ खेलने में लज्जा नहीं आती तुझको ? बड़े लाट साहब बने घूमते हो। जबरदस्ती खेल में साथी बनना चाहते हो !”

“आ—आ—।” रामू के मुख से कान मरोड़े जाने पर निकल गया।

“बताओ फिर ऐसा करोगे ?” मंगल ने पूछा।

“छोड़ो मुझको भैया ! मैं माँ से जाकर कह दूँगा।” रामू का कहना था।

“माँ को कह देगा !! क्या कह देगा ?”

“कि तुम मुझको पीट रहे हो।”

“और तुमने जो इस लड़की के कंकड़ मारा है ?”

“यह तुम्हारी क्या लगती है ? मैं जिसको चाहूँगा मारूँगा।”

मंगल इस उत्तर को सुनकर चकित रह गया। उसके मन में आया कि रामू को पीटे, परन्तु वह सोचने लगा कि जो कुछ रामू ने अब कहा है, किसी की सीख पर कहा है। ऐसा विचार कर उसने रामू के कान को छोड़ दिया और स्वयं कुएँ की जगत पर बैठते हुए रामू को कहा, “तुम जिसको चाहोगे मारोगे ?”

“हाँ।” इतना कह रामू घर की ओर चल पड़ा। मंगल ने उसको आवाज़ दी, “ओ रामू ! ठहरो।”

रामू अपने कान को मल रहा था। उसने माथे पर त्योरी चढ़ा कर अपने बड़े भाई की ओर देखा और बिना उत्तर दिये घर की ओर

चलता गया। इस समय तक भूसे की गाड़ियाँ घर के दरवाज़े पर पहुँच चुकी थीं। मंगल का चित्त मन्दिर में जाने को नहीं हुआ। वह वहीं कुएँ की जगत पर बैठा रामू की इस मनोवृत्ति पर विचार करता रहा।

यह क्या हुआ ? वह मन में सोच रहा था। इस बात पर विचार करने पर उसको अपने पिता के देहान्त का समय स्मरण हो आया। उसके पिता ने मरने से पूर्व, रामू का हाथ उसको पकड़ाते हुये कहा था, “मंगल, यह बालक मुझे बहुत प्यारा है। इसको कष्ट न पहुँचे। इसे अपना बेटा मान प्यार करना और पालन-पोषण करना।”

इस बात को एक वर्ष से अधिक हो चुका था। रामू अब चौथी श्रेणी में पढ़ता था। वह गाँव से एक कोस भर के अन्तर पर नगर के स्कूल में पढ़ने जाया करता था। इस वर्ष कई मसों से खेत अधिक जोत लेने के कारण, मंगल काम में इतना व्यस्त रहता था कि उसको घर की बातों पर विचार करने को अवकाश ही नहीं मिला था। उसको यह धुन सवार थी कि इस वर्ष इतना रुपया पैदा करूँ कि एक नया मकान बन जाय और उसमें जाकर रहूँ। इस कारण रामू की ओर उसका ध्यान ही नहीं गया था। प्राज्ञ उसकी विद्रोहात्मक प्रवृत्ति का दर्शन कर वह गम्भीर विचार में पड़ गया। वह अपने पिता की बात का स्मरण कर, उसको अपना बेटा मानता था। अब वह यह विचार कर रहा था कि वह इसको कैसे बिगड़ने से रोके, परन्तु इसके लिए उसको ताड़ना करनी होगी और ताड़ना करने पर माँ क्या कहेगी। वह रामू से बहुत प्यार करती है। माँ के लिए उसके मन में बहुत आदर का भाव था। तो क्या करूँ ? इस प्रकार के विचारों में वह वहीं जगत पर बैठा रह गया। प्रकाश घुसमुसा हो गया था। इस समय शिवालय का पुजारी मंदिर बन्द

कर गाँव को जाते हुए, कुएँ की जगत पर किसी को बैठा देख वहाँ आ गया। समीप आने पर मंगल को पहिचान कर पूछने लगा, “मंगल भैया, यहाँ कैसे बैठे हो ?”

“पंडित जी, आज सब अन्न सिमट गया है, इस कारण चित्त प्रसन्न तथा हलका प्रतीत हुआ तो यहाँ एकान्त में बैठ भगवान का धन्यवाद करने लगा था।”

“हाँ, भैया ! भगवान का धन्यवाद है कि इस वर्ष उपज बहुत अच्छी हुई है। ऋतु भी अच्छी रही है। तुम्हारे पर ईश्वर की कृपा की चर्चा पूर्ण गाँव में चल रही है।”

मंगल मन में विचार कर रहा था कि वह ईश्वर की कृपा रामू जैसे आचार-व्यवहार के लड़के के रहते रह सकेगी क्या ? इससे वह चुप था। इस पर पुजारी ने कहा, “पर भैया, एक बात कहूँ ? बुरा न मानना।”

“अजी पंडित जी ! कैसी बात कहते हैं आप। मैं आपका बहुत आदर करता हूँ। आप मुझसे विद्या में, अनुभव में और आयु में बड़े हैं। आपकी बात का मैं उल्लंघन नहीं कर सकता।”

“मंगल भैया, सारे गाँव में तुम्हारी प्रशंसा हो रही है। तुम्हारा शील-स्वभाव, शुद्ध चरित्र और दयावृत्ति सब पर प्रकट है। पर भैया, यह रामू तुम्हारे उज्ज्वल नाम को कलंकित किये बिना न रहेगा।”

“क्या किया है उसने पंडित जी ?”

पंडित बृजलाल कुछ कहना चाहता था, परन्तु कह नहीं सका। बहुत विचार कर उसने अपने मन में उठ रहे विचार का संकेत कर दिया। “भैया, मैं ब्राह्मण हूँ। भगवान ने मुझको कुछ दीर्घ दृष्टि दी है। मैं पत्रा देखता हूँ। हस्त तथा मस्तक की रेखाओं से भविष्य का अनु-

मान लगाता हूँ। और इतनी आयु में प्राप्त अनुभव के भरोसे संसार की गति को भी पहिचानता हूँ। मैं कहता हूँ कि रामू को नियन्त्रण में रखो। बहुत पढ़ चुका है। अब उसको नित्य अपने साथ खेत में ले जाया करो और उससे बारह घण्टे काम लिया करो। नहीं तो घड़ा चिकना हो जावेगा और फिर पानी भरने योग्य नहीं रहेगा।”

मंगल ने बात समझते हुए भी न समझी और कहा “पंडित जी ! पहेलियाँ डालने से तो कुछ समझ नहीं आता। स्पष्ट बताइये कि क्या हो गया है ?”

“बढ़िया बढ़िया अन्न खाने से गाँव की आवश्यकता से अधिक कोमल हो गया है वह। अच्छा ! जैराम जी की भैया, तुम समझदार ही हो।”

२

मंगल का पूरा नाम मंगलदास और रामू का पूरा नाम रामदास था। उनका पिता, दुर्गादास, बहुत समझदार और मेहनती किसान था। अपने जीवन में मेहनत और विचारशीलता के व्यवहार से छोटी सी जमींदारी को बढ़ाते बढ़ाते उसने सौ बीघा भूमि जमा कर ली थी। मरते समय उनके तीन बच्चे थे। दो लड़के और एक लड़की। सबसे बड़ा मंगल था। मंगल से पाँच वर्ष छोटी बहिन, सोहिनी थी। और रामू अपनी बहिन से दस वर्ष छोटा था। सोहिनी का विवाह नगर में हो गया था। लड़के का बाप गेहूँ की मण्डी में आढ़त की दुकान करता था। दुर्गादास उसके पास अपने खेतों की उपज बेचने के लिए ले जाया करता था। दुकान पर परिचय होने से यह सम्बन्ध हो गया। मंगल का विवाह दुर्गादास के मरने से एक मास पूर्व गाँव की ही एक लड़की मोहिनी से हो गया था। मोहिनी का बाप साधारण सा जमींदार था। विवाह के समय दुर्घटना यह हुई कि मोहिनी की डोली आते ही दुर्गादास को ज्वर आना प्रारम्भ हो गया और वह उसकी जान लेकर ही गया।

इससे मंगल की माँ और बहिन मंगल की स्त्री को घर में अपशकुन मानने लगी थीं।

दुर्गादास को मरे हुये एक वर्ष हो चुका था और इस एक ही वर्ष में मोहिनी बेचारी की काफी दुर्दशा हो चुकी थी। वह घर का सारा काम करती थी। गाय-बैलों को चारा देना, दाना डालना, दूध दुहना, दही मथना, मक्खन निकालना, इस प्रकार का सारा काम वही करती थी, इस पर भी उसकी सास उससे सीधे मुँह बात नहीं करती थी, और समय कुसमय उसे डायन, समुर को खाने वाली, चुड़ैल इत्यादि उपाधियाँ मिलती रहती थीं। जब कभी मोहिनी मायके में होती तो उसकी दुर्दशा की पराकाष्ठा हो जाती। ऐसा प्रायः होता रहता था। मोहिनी कहती, “मोहिनी ! कितनी दूर से आई हूँ, क्या रोटी पानी भी पूछोगी या नहीं ?”

“लाई बहिन जी। अभी लाई।”

“अभी लाई! बड़ा अभिमान हो गया है न तुम्हें। कंगालो की बेटी राजसी घर में जो आ गई है !”

इतना कहते ही मोहिनी और उसकी माँ दोनों रो पड़तीं और मोहिनी कहती, “न तुम हमारे घर आती न मेरे पिता मरते।”

मोहिनी यह सभी कुछ सुन कर भी भीतर ही भीतर पी जाती थी। उसने कभी भी अपने पति से अपने कष्ट का वर्णन नहीं किया था कि कहीं उसे भी कष्ट न हो। अतः उससे वह सदैव बहुत ही विनीत और प्रेममय व्यवहार रखती थी। चाहे मोहिनी और उसकी माँ उससे ऐसा व्यवहार करती थीं, तो भी गालियों और उलाहनों का उसने कभी उत्तर नहीं दिया था। पर एक बात उसने की थी। वह यह कि एक दिन उसने चुपके से अपने पति को कहा, “हमें एक नया घर बनवाना चाहिये।”

“क्यों ?”

“भगवान ने धन दिया है सुख भोगने के लिये । मेरी लालसा है कि सोहिनी बहिन के नगर वाले मकान जैसा अपना मकान बनवायें और उसमें रहें । आप पलंग पर बैठे, मैं आपके पाँव दबाऊँ । आप सोयें, मैं पंखा करूँ । वहाँ एक स्नानागार हो, एक हवादार रसोईघर हो, बैठने की अलग बैठक हो, जिससे हमारे बाल-बच्चों को भी अपने बाप की कमाई का सुख-भोग मिल सके ।”

“तुम ठीक कहती हो मोहिनी । यह काम कठिन नहीं है । केवल एक वर्ष मेहनत से काम करने की आवश्यकता है । यदि मुझे दस हजार ही मिल जाय तो जैसा तुम चाहती हो वैसा मकान बन जायगा । पर उतना रूपया जमा करने में तुम्हें भी मेरे साथ खून-पसीना एक करना पड़ेगा ।”

“मैं दिन रात एक कर दूंगी । पर एक बात है, यह बात माँ जी अथवा बहिन को तब पता लगे, जब मकान बनने लग जाय ।”

“इसमें क्या बात है ?”

“माँ जी पुराने विचार की हैं । वे इसको व्यर्थ का खर्च समझेंगी । उनके सामने मैं यह न कह सकूंगी कि हमारा चित्त सुख भोगने को करता है ।”

मंगल मान गया और उसने अबकी बार चालीस बीघा ज़मीन में गेहूँ बो दिया । उस अकेले ने दिन रात एक कर दिया । दस आदमियों के बराबर अकेला काम करता रहा । मोहिनी ने भी अपनी चोटी का पसीना एड़ी तक बहा दिया । इस पर जब सास और ननद ताने देती तो वह उन्हें एक कान से सुन कर दूसरे कान से निकाल देती ।

सब कामों और नौकरों को उनका भाग दे दिलाकर एक सहस्र मन से ऊपर गेहूँ खेतों में डाल दिया गया। भूसा भी दे दिला कर दो सौ गाड़ी के लगभग निकला। एक गाड़ी में दस मन भूसा आता था और बाज़ार में दस रुपये में गाड़ी बिक जाती थी। उसके पास चार बैल गाड़ियाँ थी और सबकी गिनती-मिनती कर वह यह योजना बना रहा था कि किस प्रकार दो मास में सब भूसा और वर्षा ऋतु के पीछे गेहूँ नगर में बेचने को ले जा सके। उसका विचार था कि इस फ़सल से छै-सात हजार रुपया मिल जायगा।

खेती से उसे जो रुपये मिलते उन्हें जमा करता रहता था। अपने खाने पहनने का उसने घर पर ही प्रबन्ध कर लिया था। मोहिनी रात भर सूत कातती जिससे घर के कपड़े बनते थे। बगिया के कुएँ से एक आड़ निकाल कर भूमि का छोटा सा टुकड़ा सब्जियों, भाजियों के बोने के लिये अलग बना लिया था। शेष गेहूँ, चावल, दाल, घी, दूध, मक्खन और छाछ घर के थे ही, महीनों ही निकल जाते थे और एक पैसे की वस्तु भी बाज़ार से लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी।

जिस दिन फसल कट कर घर पहुँची थी उस दिन वह अभिमान से भूमता हुआ देवता के मन्दिर में धन्यवाद करने जाना चाहता था, परन्तु रामू के व्यवहार से हतोत्साह हो कुएँ की जगत पर ही बैठा-बैठा रह गया।

जब मन्दिर का पुजारी उसको यह कह कर, “भैया, तुम समझदार ही हो” चला गया तो वह पुनः विचारमग्न हो गया। बगिया में अन्धेरा हो गया, पर उसका विचारसूत्र नहीं टूटा। दो गाड़ियाँ भूसे की और निकल गईं, पर वह अब भी बैठा था। बार-बार उसके मन में पंडित की यह बात ‘घड़ा चिकना हो जायगा और फिर पानी भरने योग्य नहीं रह जावेगा।’ आ रही थी।

उसका ध्यान तब टूटा जब सियार खेतों में घूमते हुए कुएँ की आड़ में अटका हुआ पानी पीने के लिये आने लगे। उसने लम्बी साँस ली और घर को चल पड़ा।

घर की ड्योढ़ी में मोहिनी को दीवार के सहारे बैठे अपनी प्रतीक्षा करते देख उसको अनुभव हुआ कि उसे आने में बहुत देर हो गई है। इससे उसे लज्जा का अनुभव हुआ। जब वह ड्योढ़ी में आया तो उसको ऐसा प्रतीत हुआ कि मोहिनी ने एक लम्बी साँस ली है। अँधेरे में वह उसके मुख को देख नहीं सका था। उससे उसने पूछा, “यहाँ खड़ी हो?”

“आप कहाँ रह गये थे? गाड़ीवान ने कहा था कि आपको खेत से आये घंटा भर से अधिक हो गया है।”

“हाँ! चलो, भोजन बना है क्या?”

“बना है। पानी यहीं लाती हूँ। आप मुँह धो लीजिये।”

“भीतर क्या है?”

“आप दिन भर मेहनत कर लौटे हैं, थकावट हुई होगी। भीतर जाना ठीक नहीं है।”

मंगल को संदेह हो गया। उसने सतर्क हो पूछा, “रामू आया है क्या?”

“उस ही की बात तो कह रही हूँ। बच्चा भूल कर देता है। आप को शान्त होकर उसकी बातें सुननी चाहिये थीं।”

“तो उसकी कुछ बात है? पहिले वही न सुन लूँ?”

“मैं आपके पाँव पड़ती हूँ। पहिले कुछ शान्त हो जाइये।”

इस समय मंगल की माँ भीतर से निकल आई। आते ही उसने कहा, “क्या सिखा रही हो अपने घरवाले को?”

मोहिनी चुप रह गई। मंगल ने समझा रामू ने घर आकर कुछ कहा होगा। इससे माँ क्रोध में है। इस कारण उसने माँ से कहा, “माँ ! तुम ही बताओ न, क्या हुआ है ?”

“इसी डायन से क्यों नहीं पूछ लेते ?”

अपनी स्त्री के लिए वे कटु वचन उसने आज पहिले दिन ही सुने थे। इस पर ही यह विचार कर कि शायद मोहिनी ने कुछ कह दिया हो, इस कारण उसे सुनने के लिये ड्यूटी में रखे तख्तपोश पर बैठ गया। “हाँ तो, माँ बताओ। इस डायन ने कहा क्या है ?”

मोहिनी का पूर्ण शरीर काँप रहा था। वह समझती थी कि माँ का कहना बेटा अवश्य मानेगा। इसका परिणाम उसके लिये अच्छा न होगा। इस कारण वह एक ओर हट कर खड़ी हो गई, जिससे माँ पहले अपनी बात बता ले तो फिर वह भी अपनी बात कहे।

बेटे के मुख से अपनी स्त्री के लिये डायन का शब्द सुन कर उसकी माँ उत्साहित हो कहने लगी, “तुमने रामू को आज पीटा है न ?”

“नहीं तो।”

“तो तुम्हें इस डायन की संगत से झूठ बालने का स्वभाव हो गया है ?”

“माँ ! मैंने उसको नहीं पीटा। केवल कान मरोड़े हैं।”

“मैंने स्वयं देखा है। उसकी पीठ और गालों पर तुम्हारे तमाचों के निशान बने हैं।”

“तुमने स्वयं देखा है माँ ?”

“हाँ ! हाँ !! हाँ !!!”

“तो माँ ! वह किसी अन्य से मार खा आया है और मेरा नाम यू ही व्यर्थ में ले रहा है ।”

“वह झूठ बोलता है क्या ? इतना छोटा बालक झूठ बोलना कैसे सीख गया है ? ऐसा प्रतीत होता है कि तुम्हारी बीबी ने तुम्हें उल्टा बना रखा है ।”

“माँ, इसका नाम क्यों ले रही हो ? इसने क्या किया है ?”

“इसने घर का सत्यानाश किया है । यह डायन तुम्हारे बाप को खा गई है ।”

मंगल जैसा सीधी बुद्धि का आदमी भी समझ गया कि मन के आवेश में विचारहीनता उत्पन्न हो रही है । इससे उसने माँ की बात का उत्तर नहीं दिया और अपने कमरे में जिसे कोठरी ही कहा जा सकता था, चला गया । मोहिनी उसके पीछे-पीछे वहाँ जा पहुँची । मंगल वहाँ रखी खाट पर बैठ गया और मोहिनी खाट के नीचे भूमि पर बैठ गई । हरीकेन लालटेन कमरे में जल रही थी । उसके प्रकाश में मंगल ने देखा कि मोहिनी की आँखें रोने से लाल हो उठी हैं । उसने इससे चिन्तित हो कहा, “क्या हुआ है तुमको ?”

“कुछ नहीं ! अपने भाग्य का भोग है । मैं नहीं समझ सकी कि मेरा दोष क्या है ? सारा दिन यही सोचती रहती हूँ कि कैसे माँ जी को प्रसन्न कर सकूँ ।”

“देखो मोहिनी ! आज मेरा मन अति विक्षुब्ध हो उठा है । ऐसी पहेलियाँ डालना छोड़ दो । मुझे स्पष्ट बताओ कि क्या हुआ है, जो आज माँ इतनी क्रोध में है ।”

“मैं सौगन्धपूर्वक कहती हूँ कि मैंने कुछ नहीं कहा । एक घंटा हुआ है कि रामू रोता हुआ आया था और माँ को कह रहा था कि आपने

उसको पीटा है। उसने मुँह दिखाया था। वह सास हो रहा था। माँ जी को यह देखकर क्रोध चढ़ आया और मुझे गाली देने लगीं।”

“पर तुमको डायन क्यों कहती हैं?”

“यह नई बात नहीं है। पिता जी के देहान्त होते ही मुझको यह उपाधि मिली है। पहले पहल तो मन को दुःख होता था। अब मैं उन्हें आशीर्वाद मान चुप कर रहती हूँ। माँ की गाली भी आशीर्वाद ही बन जाती है।”

“तो फिर तुम रो क्यों रही हो?”

“मैं समझी थी कि रामू को आपने ही पीटा है। वह कोमल बालक है। उस पर आपके इन दृढ़ हाथों के प्रहार को विचार कर रोना आ गया था।”

“पर मैंने उसको पीटा नहीं। केवल कान मरोड़ा था। उसने कुछ ऐसी बातें कहीं थीं, जिनके कारण वह पीटा जाना चाहिये था, परन्तु मैंने केवल धमका कर ही छोड़ दिया था।”

“तो यह तो बहुत ही बुरी बात हो गई है जो उसने झूठ बोला है। झूठ बोलना तो पाप है न?”

मंगल को आज ज्ञात हुआ कि घर में भारी संघर्ष चल रहा है। उसकी बीवी से माँ अत्यन्त घृणा करती है। पर अब तो वह यह सोच रहा था कि रामू आवारा क्यों हो गया है।

रात को उसने भोजन नहीं किया। माँ ने भी नहीं खाया और मोहिनी तो पहले भी कभी-कभी, जिस दिन माँ अधिक क्रुद्ध होती थी, भूखी ही सो रहती थी।

अगले दिन, बिना खाये पिये खेत में काम के लिए जा सकना कठिन-समझ, मंगल ने रात की बासी तीन रोटियाँ खाईं और ताज़ी लस्सी का

लोटा पिया। मोहिनी बहुत प्रातःकाल ही उठी थी और शौचादि से निवृत्त हो, हाथ-मुख धो, दही बिलो, लस्सी बना लाई थी। पश्चात् लाठी कंधे पर रख कर मंगल खेत में से भूसा दुलवाने के लिए चल पड़ा। रामू भी रोटी और लस्सी खा-पी, किताबों का बस्ता कंधे पर से लटका, स्कूल जाने के लिए तैयार हो गया। जब मंगल बाहर निकला तो रामू भी बाहर आ गया था। रामू को देख मंगल ने पूछ लिया, “रामू ! किसने मारा था तुमको ?”

रामू का दिल काँप उठा। उसका बोझ हुआ झूठ उसके सिर चढ़ उसको भयभीत करने लगा था। उसको झुप देख मंगल ने कहा, “क्यों बच्चू ! बोलने क्यों नहीं ! किसने मारा था तुमको ?”

रामू को एक बात सूझी। उसने जोर से आवाज़ दी, “माँ ! माँ ! देखो भैया मारते हैं।” इतना कहता हुआ वह माँ के कमरे में भाग कर चला गया। तुरन्त ही माँ बाहर चली आई और रामू को आगे सरका कर बोली, “मार डालो न इसको। बेबाप का बेटा है। वह डायन इसके बाप को लेकर अब इसके पीछे पड़ गई है।”

मोहिनी घर के पीछे पशुशाला में गाय और बैलों को भूसा और दाना डालने गई हुई थी। उसके पास समय ही नहीं था कि इस प्रकार के भगड़े में पड़े। दाना-पानी दे बैलों को खेत में भेजना था। भूसे को उठा कर घर लाने का काम अभी बहुत पड़ा था। गऊओं को दाना-पानी दे दूध दुहना था और फिर दूध को गरम करना था। मक्खन, जिसे वह पहले ही निकाल चुकी थी, उसे गरम कर घी बनाना था। इतना करने के पश्चात् स्नान करना और कपड़े धोने का काम था। भूसा तो माँ को रखवाना होता था और उसे रोटी बनानी होती थी। पीछे वह रोटी या

तो स्वयं या किसी कामे के हाथ खेत में पति के लिए भेजती थी। माँ को रोटी खिला और स्वयं खा कर एक घंटा भर आराम का समय मिल सकता था।

आराम करने के पश्चात् वह चर्खा कातती थी। इस समय यदि भूख और प्यास लग आती तो एक रोटी खा कर लस्सी का गिलास पी लेती। जब सांयकाल हो जाती और गाएं और बैल आने लग जाते तो उनके दाना-पानी का प्रबन्ध और दूध दुहने का काम भी उसे करना होता। इस प्रकार सूर्यास्त हो जाता। तब मंगल भी घर आ जाता था और मुख-हाथ धोकर दिन भर के परिश्रम से थक कर चूर हुआ भूखे बाघ की भांति खाने को जुट जाता था।

मंगल ने जब इस प्रकार माँ को अकारण गाली देते सुना तो वह भीचक्का हो उसका मुख देखता रह गया। जब माँ रामू को आगे सरका कर यह कह रही थी कि मार डालो इसे तो वह उसकी इस दुःखद मनो-वृत्ति को देखकर मुँह लटकाए हुए, खेत की ओर चल पड़ा। जाते जाते उसने माँ को कहते सुना—“जोरू का गुलाम !”

भूसा ढोने के लिए बैलगाड़ी अभी खेत को नहीं गई थी। इस कारण वह बगिया में मन्दिर के सामने जा पहुँचा। पुजारी फूल तोड़ने फुलवारी में गया हुआ था। वह जूता उतार कर मन्दिर पर चढ़ गया और मूर्ति के सामने नन्दी के समीप बैठकर मन में उठ रहे विचारों को समझने का यत्न करने लगा।

पुजारी जब आया और उसने मंगल को इस प्रकार विचारमग्न देखा तो विस्मय में खड़ा रह गया। पश्चात् उसने फूलों की भरी टोकरी को मन्दिर की चौखट के बाहर रखा और मंगल के सामने बैठ पूछने लगा, “मंगल भैया ! किस गम्भीर विचार में बैठे हो ?”

“पंडित जी ! आज माँ ने कहा है कि मैं औरत का गुलाम हूँ । अब मैं बैठा सोच रहा हूँ कि मैं ऐसा हूँ अथवा नहीं ।”

मंगल की मोटी बुद्धि में यह बात आ नहीं रही थी । वह यह विचार कर रहा था कि मैंने कौन सी बीबी की दासता की है जो माँ ने मुझे यह उलाहना दिया है । पंडित मंगल की ओर देखता हुआ मुस्करा रहा था । उसके मुस्कराने पर मंगल विस्मय में उसकी ओर देखने लगा । आखिर पंडित ने मुख खोला । उसने पूछा, “मंगल भैया ! भूसा कितना रह गया है खेत में ?”

“अभी पहली चार गाड़ी आई हैं । लगभग दो सौ गाड़ियाँ कुल होंगी ।”

“तो भैया, जल्दी करो । वर्षा के पहले भूसा घर लाना ही नहीं, प्रत्युत बेच डालना होगा । जिस मेहनत और लगन से तुमने पिछले छः मास में काम किया है, सारा गाँव उसका साक्षी है । मैं तो यह विचार कर रहा हूँ कि तुम्हारे पास अपनी माँ की बात सुनने को समय ही कहाँ है ?”

“पंडित जी, मेहनत तो की है, पर उसका फल मिलने से पूर्व ही उसमें विष घोला जा रहा है । इससे उत्साह भंग हो रहा है ।”

“ओ भोले मंगल ! देखो हमारे गाँव में तुम होगे तो सब गाँव वालों को प्रसन्नता होगी । मैं सत्य कहता हूँ कि तुम्हारा उत्साह देख कर गाँव वालों की छातियाँ चौड़ी हो जाती हैं । भैया, पुरुषों को इन औरतों की बातों में न पड़ना चाहिए ।”

“पर मैं जोरू का गुलाम हूँ क्या ?”

“अरे हो भी तो बुरा क्या है ? मैं तो भैया, पंडिताइन की चरणरज

सिर चढ़ाऊँ तो अपने को धन्य मानूँ । कठिनाई तो यह है कि वह पाँव छूने ही नहीं देती ।”

इससे मंगल की मुस्कराहट निकल गई । वह बोला, “वह तुमको अपने पाँव छूने नहीं देती ?”

“हाँ भैया, मैं जब प्रातः स्नान कर घर जाता हूँ और पंडिताइन लस्सी का भरा लोटा, जिस पर एक गुप्फा मक्खन का तैर रहा होता है, पीने को देती है तो गद्गद् हो उसका धन्यवाद करता हूँ । मेरा धन्यवाद सुन कर वह बेचारी लज्जा के मारे भूमि में गड़ी जाती है । जानते हो तब वह क्या कहती है ? सौ वर्ष जिए मंगल चौधरी और उसकी बहू मोहिनी । यह सब उनकी ही कृपा है ।”

“मैं मंगल चौधरी को तो जानता नहीं, मेरे लिए तो पंडिताइन हा अन्नपूर्णा देवी है । भैया, उस लोटे भर लस्सी के लिए तो मैं जन्म भर उसके पाँव दबाने को तैयार हो जाता हूँ । पर वह कन्न देती है, ‘सौगन्ध है मेरे सिर की, जो मेरे पाँव को छुआ ।’ उस लस्सी को विवश हो गट-गट पी जाता हूँ और अपनी श्रद्धा-भक्ति को अपने मन में ही संचय करता रहता हूँ ।”

“पर पंडित जी महाराज ! यहाँ तो बात ही उल्टी है । वह मेरे पाँव दबाती है, मेरे लिए खाना पकाती है, मेरे कपड़े साफ करती है और प्रत्येक प्रकार का सुख पहुँचाती है, परन्तु मैं उसके लिए कुछ भी नहीं करता ।”

“ठीक है, ठीक है । यह लो फूल और चढ़ाओ देवता पर और हाथ जोड़ कर देवों के देव महादेव से याचना करो कि वह तुम्हारे घर में सूर्य जैसा तेजस्वी पुत्र दे ।”

मंगल को पुत्र की बात सुन कर लज्जा आ गई । वह अभी सोच ही

रहा था कि पुत्र होने से क्या होगा कि पुजारी ने टोकरी में से कुछ फूल ले कर उसके हाथ में पकड़ा दिए और कहा ।

“आओ भैया !”

दोनों खड़े हो गये और देवता की ओर मुख किये आँखें मूँद प्रार्थना करने लगे । पुजारी शिवस्तोत्र पढ़ता रहा और पश्चात् देवता पर फूल चढ़ा, हाथ जोड़, आँखें मूँद, धीरे-धीरे मानों देवता के कानों में कह रहा था, “भगवन् ! शीघ्र मंगल भैया के घर चाँद जैसा सुन्दर, सूर्य जैसा ओजस्वी, कुबेर जैसा धनी और वरुण जैसा उदार पुत्र हो ।”

जब वह अपनी प्रार्थना कर चुका तो मंगल की ओर देखने लगा । वह अब भी आँखें मूँदे हाथ जोड़ कर देवता की ओर मुख किये श्रद्धा के भाव में खड़ा था । पुजारी ने कहा, “भैया मंगल, अब खेत में जाने का समय हो गया है ।”

मंगल ने आँखें खोलੀं और विस्मय में पुजारी की ओर देख कर पूछा, “बस !”

“तो और क्या चाहते हो ?”

“पंडित, तुमने अपने लिए पुत्र नहीं माँगा ?”

पंडित खिलखिला कर हँस पड़ा । बोला, “मैं तो बूढ़ा हो गया हूँ । अब पुत्र क्या होगा और फिर उसको क्या करूँगा? न घर है न घाट । जाओ भैया, दिन चढ़ रहा है ।”

३

उस सायं रामू स्कूल से नहीं लौटा । जब मंगल सायंकाल घर आया तो मोहिनी ने बताया, “रामू स्कूल से नहीं लौटा ।”

“सोहिनी के घर रह गया होगा ।”

“मैंने माँ जी से पूछा था । उन्होंने कहा है, उसका यहाँ कौन है ? किसके पास आयेगा ?”

“तो इसका अर्थ यह है कि माँ ने उसको वही रहने को कह दिया है ।”

“है तो यही, पर आप माँ से पूछ तो लें ।”

मंगल माँ के कमरे के बाहर जा कर बोला—“माँ ! रामू नहीं आया क्या ? कह गया है वह तुमको कुछ ?”

“कह नहीं गया । पर मैंने उसे कह दिया है कि कुछ दिन बहिन के घर ही रह ले ।”

“कब तक ?”

“जब तक तुम्हारी बीबी का तुम पर से जादू का प्रभाव हटे नहीं । यहाँ तो उसने पीटा ही जाना है ।”

“माँ ! तुम कैसी बाने करती हो ?”

“बेटा ! ये बाल धूप में सफेद नहीं किये । सब समझती हूँ ।”

“तो माँ, फिर हमें पृथक् घर बना लेने दो ।”

“यही तो वह चाहती है । उसी ने ही तो तुम से पिटवाया है उसे ।”

“और कुछ ?”

“तो यह क्या कम है ? अब मुझे पिटवायेगी क्या ?”

मंगल समझ गया कि और बात करना व्यर्थ है । वह जानता था कि न तो उसने रामू को पीटा है और न ही वह माँ को कभी पीट सकता है । इस कारण माँ के मन की प्रतिक्रिया को समझ न सकने से, चुपचाप मुख लटकाये हुए अपने कमरे में लौट आया और

हाथ-मुँह धो कर रोटी खाने बैठ गया। इस समय तक मोहिनी माँ को रोटी दे आई थी। मंगल ने पूछा, “माँ ने रोटी खाई है ?”

“खा रही है।”

“तो तुम भी खा लो न।”

“आप खाइए, पीछे मैं भी खा लूंगी। यह पेट जब तक साथ लगा है खाना कभी छूट सकता है ?”

“तो यह बताओ, माँ तुम्हारे इतनी विरुद्ध क्यों है ?”

मोहिनी ने आँखें नीचे किए हुए कहा, “मैं कुछ नहीं जानती, मेरे भाग्य ही ऐसे हैं। मैं निर्धन की लड़की हूँ, इस कारण माँ जी को मुझ से घृणा है।”

इतना कहते मोहिनी की आँखें डबडबा आईं। मंगल भोजन करते हुए और कुछ नहीं बोला। जब वह भोजन कर चुका तो मोहिनी ने अपने लिये भोजन परस लिया। मंगल ने अपनी खाट पर बैठे बैठे कहा, “जीवन का मजा किरकिरा हो गया है। बहुत यत्न से खीर बनाई थी, मालूम होता है कि इसको कुत्ता ही खायेगा।”

मोहिनी ने खाते हुए कहा, “छोड़िए इस बात को। मेरा कहा मानिये। कल नगर चले जाइए। वहाँ भूसा बेचने का प्रबन्ध कर आइये। और आते हुए रामू को साथ लेते आइए।”

“उसने झूठ बोला है। मैंने उसको पीटा नहीं, इन कारण वह मेरे साथ नहीं आयेगा।”

“फिर भी आपको जाना चाहिये।”

“अच्छी बात। तुम कहती हो तो जाऊँगा। पर कल नहीं, तीन-चार दिन पीछे जाने का प्रबन्ध हो सकेगा। आज चालीस गाड़ियाँ भूसा घर आ गया है। तीन-चार दिन में सब भूसा सिमट जायगा।

गाड़ियाँ खाली हो जायेंगी। बाद में नगर को ले जाने का प्रबन्ध करूँगा।”

मंगल माँ का बहुत आदर करता था, परन्तु जो कुछ उसने पिछले दो दिन में देखा था वह उसको चकित करने के लिए बहुत था। जेठ आरम्भ हो गया था और काम केवल प्रातः और सायं हो सकता था। इस पर भी सब किसान अपना-अपना भूसा और अनाज गाह, छाँट और फूँक अपने अपने मकानों में रख रहे थे। कामों को काम की मजदूरी अनाज और भूसे के रूप में मिल रही थी। इस समय सबका मन प्रसन्नता से भरा हुआ था।

मंगल का काम करने में कामों को बहुत प्रसन्नता होती थी। उसने मजदूरी देने में कभी कंजूसी नहीं की थी। काम डाँटकर लेता था। स्वयं उनके साथ बैठ कर काम करता था और फिर मजदूरी दिल खोलकर देता था। गाँव के लोग भी उसको फलता-फूलता देख कर प्रसन्न होते थे। वे जानते थे कि विपत्ति के समय वह सबकी सहायता करने में संकोच नहीं करता। उसका बलिष्ठ शरीर, सरल स्वभाव और उदार हृदय देखकर गाँव के लोग उसको गाँव की चीज समझते थे।

भूसा लगभग सिमट गया था। दोपहर के समय कामे ग्राम की बगिया में आकर पेड़ों की छाया में सो जाते थे। आजकल मंगल भी दोपहर को घर चला जाया करता था, और सायं चार बजे से रात के आठ बजे तक फिर काम करता था।

प्रथा के अनुसार भूसे के सिमट जाने पर मंगल के घर सब कामों को और गाँव के अन्य बिरादरी के लोगों को भोज दिया जाता था। भोज के एक दिन पूर्व वह नगर जाकर रामू को ले आना चाहता था। उस दिन प्रातःकाल उठ कर और स्नानादि से निवृत्त हो कर वह नगर

जाने के लिए तैयार हो गया। “माँ !” उसने माँ के सामने जाकर आवाज़ दी, “मैं रामू को लेने जा रहा हूँ।”

“क्यों ? क्या ज़रूरत पड़ गई है उसकी ?”

“कल घर में न्योता है। उसके बिना यह कैसे हो सकता है ?”

“रहने दो उसको। यहाँ आयेगा तो पीटा जायेगा।”

“कौन पीटेगा उसे ? माँ, तुम्हें मेरा विश्वास नहीं आता क्या ? उससे मेरे सामने पूछो। देखूँ कैसे कहता है कि मैंने उसको पीटा है ?”

“उसके तो तुम्हें देखकर प्राण सूख जाते हैं। तुम्हारे सामने कैसे कहेगा ?”

“देखो माँ ! मैंने उसको नहीं पीटा। और मैं उसको लेने जा रहा हूँ। कल वह यहाँ रहेगा और फिर जो चाहे करना।”

“मैं तो यही कहती हूँ कि उसे बुलाने की कोई आवश्यकता नहीं।”

फिर भी मंगल नगर में गया और सोहिनी के समुर की दुकान पर जा खड़ा हुआ। “आओ मंगल भैया ! कैसे हो ? अब के उपज कैसी है ? तुम्हारी माँ ठीक है ?”

“हाँ लाला जी ! सब ठीक है। मैं आया था कि पिछला हिसाब तय कर लूँ और आगे के लिए माल भेजना आरम्भ कर दूँ।”

“हाँ ! हाँ ! बैठो न।” जब मंगल बैठ गया तो लाला जी ने दुकान के मुनीम को आज्ञा दी कि मंगल के पिछले हिसाब का पर्चा बना दो। मुनीम ने बही खोली। मंगल के पिता दुर्गादास का पन्ना खोला और एक खाली कागज़ पर लिख दिया। मंगल पढ़ा-लिखा नहीं था। इस कारण पर्चा बन जाने पर मुनीम को ही उसे समझाना पड़ा। उसने बताया, “देखो मंगल चौधरी जी, जो पिछले कार्तिक में हिसाब किया

गया था उसका यह व्यौरा है : -- एक हजार दो सौ अस्सी रुपये आप के जमा थे । दो सौ मन आपकी मक्की आई । उसकी कीमत छे सौ रुपया । तिलहन पचास मन । उसकी कीमत दो सौ रुपया । अलसी साठ मन । उसकी कीमत तीन सौ रुपया । गुड सौ मन । उसकी कीमत चार सौ रुपया । इस प्रकार कुल जमा हो गया दो हजार सात सौ अस्सी रुपया । खर्च की तरफ पचत्तर रुपये आढत के और सताईस रुपये आठ प्राने तुलवाई के और इतना ही धर्मार्थ । शेष छब्बीस सौ रुपया आपका जमा है ।’

“अच्छा तो लाला जी, दो हजार रुपया इसमें से दे दीजिए ।”

“दो हजार ! क्या करोगे इसे !”

“मेरा विचार है कि एक पक्का मकान बनवाऊँ ।”

“क्या करोगे मकान को ? पहले मकान को क्या हो गया है ?”

“वह तो है ही । उसे गौशाला बना दूँगा । उसमें गडए रख कर घी का व्यापार करूँगा ।”

“हमारा विचार है,” लाला जी ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा कि “इसमें तुम्हें घाटा ही रहेगा । घी का निर्माण फालतू समय में तो ठीक है, पर लाभ के विचार से ठीक नहीं रहेगा ।”

“मेरा विचार तो इससे उल्टा है । जितनी मेहनत हम लोग खेतों में करते हैं यदि उसका एक अंश मात्र भी दूसरी ओर कर सकें, तो लाभ हुए बिना नहीं रहेगा ।”

“मंगल भैया ! हमें तुम्हारी बात समझ नहीं आ रही ।”

“मुझे शोक है । मैं पढ़ा-लिखा तो हूँ नहीं, इससे अपने मन की बात आपको समझा नहीं सकता । परन्तु मैं इसे ठीक मानता हूँ । मेरी इच्छा

है कि आपके नये मकान जैसा मैं भी एक मकान बनवा लूँ और भगवान की कृपा बनी रही तो जीवन में कुछ सुख भोग सकूँ ।”

“मंगल ! तुम नहीं जानते । देहात में एक तो ऐसा मकान बना सकना ही असम्भव है । परन्तु यदि बन जाय तो उसको रख सकना ही कठिन है । और रख भी सकोगे तो इतना खर्च बैठेगा कि दो वर्ष में सब खेती-बाड़ी बिक जायगी ।”

“आपकी इस सुमति पर मैं आपका धन्यवाद करता हूँ । पर मेरी छोटी बुद्धि में यह बात समा गई है कि मुझे इतने बड़े परिश्रम के फल में सुख भोगने का अधिकार है ।”

“तो ठीक है । पर रुपया दो-तीन सौ कहो तो दिलवा दूँ, अधिक तो नहीं मिल सकेगा ।”

ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था । रुपये का टोटा कभी नहीं हुआ था । यह ठीक है कि उसने या उसके पिता ने कभी रुपया अग्रिम नहीं लिया था, परन्तु वह यह जानता था कि आदत की दुकानों का यह नियम है कि माल जब दुकान पर पहुँच गया तो उसके आधे दाम तक रुपया अग्रिम मिल जाता था । इस अवस्था में तो माल कभी का बिक चुका था ।

“बात यह है कि मकान की नींव मैं अभी खुदवा देना चाहता हूँ । मकान वर्षा के पीछे आरम्भ होगा । परन्तु नींव खुदवाने के पूर्व उसका नकशा बनवाना चाहता हूँ । और यह सब काम दो-तीन सौ रुपये से नहीं हो सकेगा ।”

लाला जी कुछ काल तक विचार कर बोले, “ठीक कहते हो तुम मंगल ! पर तुम जानते हो कि यह सम्पत्ति तुम्हारे अकेले की नहीं है ।

तुम्हारे बाप की सम्पत्ति का कोई और भी हकदार है। मकान पर इतना धन व्यर्थ लगा देने से पहले उसकी राय भी तो लेनी चाहिये। मुझे मालूम है कि वह इससे सहमत नहीं है।”

जैसे किसी पर वज्राघात हुआ हो, वैसे मंगल सन्न हो बैठा रह गया। उसकी मोटी बुद्धि में भी बात कुछ-कुछ स्पष्ट होने लगी थी। कितनी ही देर तक वह लाला जी का मुख देखता रहा। उसके मन में तूफान उठ रहा था। परन्तु उसकी रूपरेखा बन नहीं पाती थी। वह उन अस्पष्ट धुँधले भावों को व्यक्त करने के लिये शब्द ढूँढ़ रहा था। उसे चुप बैठा देख कर लाला जी ने कहा “भैया, धमा करना। मुझे यह कटु कर्तव्य पालन करना पड़ रहा है, पर एक नाबालिग के अधिकारों की रक्षा का उत्तरदायित्व मुझ पर आ पड़ा है।”

बात कुछ स्पष्ट हुई और मन में उठ रहे तूफान का रूप दिखाई देने लगा। इस पर भी उसको प्रकट करने की शक्ति मंगल में नहीं थी। उसने केवल यह पूछा, “यह उत्तरदायित्व किसने आप पर डाला है?”

“जो डालने का अधिकार रखता है।”

मंगल उठ पड़ा और बोला “जैसे आपकी इच्छा। आप मेरे पूज्य हैं। मैं आपकी बात का उल्लंघन नहीं कर सकता। मुझे दो-तीन सौ रुपये नहीं चाहियें।”

“कल हमारे यहाँ न्योता है। बहिन को लेने आया हूँ। आप आज्ञा दे दीजिये, फिर घर होता हुआ उसको लेते आऊँगा।”

सोहिनी के ससुर का नाम नत्थूमल्ल था। दो-तीन पीढ़ी पहले ये लोग भी गाँव के रहने वाले थे। नत्थू के बाबा ने अपने खेतों का माल

तुम्हारे बाप की सम्पत्ति का कोई और भी हकदार है। मकान पर इतना धन व्यर्थ लगा देने से पहले उसकी राय भी तो लेनी चाहिये। मुझे मालूम है कि वह इससे सहमत नहीं है।”

जैसे किसी पर वज्राघात हुआ हो, वैसे मंगल सन्न हो बैठा रह गया। उसकी मोटी बुद्धि में भी बात कुछ-कुछ स्पष्ट होने लगी थी। कितनी ही देर तक वह लाला जी का मुख देखता रहा। उसके मन में तूफान उठ रहा था। परन्तु उसकी रूपरेखा बन नहीं पाती थी। वह उन अस्पष्ट धुँधले भावों को व्यक्त करने के लिये शब्द ढूँढ़ रहा था। उसे चुप बैठा देख कर लाला जी ने कहा “भैया, क्षमा करना। मुझे यह कटु कर्तव्य पालन करना पड़ रहा है, पर एक नाबालिग के अधिकारों की रक्षा का उत्तरदायित्व मुझ पर आ पड़ा है।”

बात कुछ स्पष्ट हुई और मन में उठ रहे तूफान का रूप दिखाई देने लगा। इस पर भी उसको प्रकट करने की शक्ति मंगल में नहीं थी। उसने केवल यह पूछा, “यह उत्तरदायित्व किसने आप पर डाला है?”

“जो डालने का अधिकार रखता है।”

मंगल उठ पड़ा और बोला “जैसे आपकी इच्छा। आप मेरे पूज्य हैं। मैं आपकी बात का उल्लंघन नहीं कर सकता। मुझे दो-तीन सौ रुपये नहीं चाहियें।”

“कल हमारे यहाँ न्योता है। बहिन को लेने आया हूँ। आप आज्ञा दे दीजिये, फिर घर होता हुआ उसको लेते आऊँगा।”

सोहिनी के समुद्र का नाम नत्थूमल्ल था। दो-तीन पीढ़ी पहले ये लोग भी गाँव के रहने वाले थे। नत्थू के बाबा ने अपने खेतों का माल

तुम्हारे बाप की सम्पत्ति का कोई और भी हकदार है। मकान पर इतना धन व्यर्थ लगा देने से पहले उसकी राय भी तो लेनी चाहिये। मुझे मालूम है कि वह इससे सहमत नहीं है।”

जैसे किसी पर वज्राघात हुआ हो, वैसे मंगल सन्न हो बैठा रह गया। उसकी मोटी बुद्धि में भी बात कुछ-कुछ स्पष्ट होने लगी थी। कितनी ही देर तक वह लाला जी का मुख देखता रहा। उसके मन में तूफान उठ रहा था। परन्तु उसकी रूपरेखा बन नहीं पाती थी। वह उन अस्पष्ट धुँधले भावों को व्यक्त करने के लिये शब्द ढूँढ़ रहा था। उसे चुप बैठा देख कर लाला जी ने कहा “भैया, धमा करना। मुझे यह कटु कर्तव्य पालन करना पड़ रहा है, पर एक नाबालिग के अधिकारों की रक्षा का उत्तरदायित्व मुझ पर आ पड़ा है।”

बात कुछ स्पष्ट हुई और मन में उठ रहे तूफान का रूप दिखाई देने लगा। इस पर भी उसको प्रकट करने की शक्ति मंगल में नहीं थी। उसने केवल यह पूछा, “यह उत्तरदायित्व किसने आप पर डाला है?”

“जो डालने का अधिकार रखता है।”

मंगल उठ पड़ा और बोला “जैसे आपकी इच्छा। आप मेरे पूज्य हैं। मैं आपकी बात का उल्लंघन नहीं कर सकता। मुझे दो-तीन सौ रुपये नहीं चाहियें।”

“कल हमारे यहाँ न्योता है। बहिन को लेने आया हूँ। आप आज्ञा दे दीजिये, फिर घर होता हुआ उसको लेते आऊँगा।”

सोहिनी के समुर का नाम नत्थूमल्ल था। दो-तीन पीढ़ी पहले ये लोग भी गाँव के रहने वाले थे। नत्थू के बाबा ने अपने खेतों का माल

बेचने के लिये नगर में दुकान की थी और उसमें उन्नति होते-होते लाखों का कारोबार चलता था ।

नत्थूमल्ल के लड़के और सोहिनी के पति का नाम शंकरदास था । वह कुछ अंग्रेजी-हिन्दी पढ़ा था । इससे उसमें अहंभाव की मात्रा अपने अन्य घर वालों से कुछ अधिक ही थी । लाला नत्थूमल्ल यह जानते थे । इस कारण कहने लगे, “अपने बहनोई से भी पूछ लेना । जैसा वह कहे वैसा ही करना ।”

मंगल दुकान से उठ कर बहिन के घर की ओर चल पड़ा । आज उसका मन बहुत उदास हो रहा था । वह ऐसा अनुभव कर रहा था मानों उसको किसी ने आसमान से उठा कर भूमि पर पटक दिया है । एक क्षुद्र प्राणी की भाँति वह बहिन के मकान के दरवाजे पर खड़ा हो गया । जब उसने कुंडा खटखटाया तो ऊपर खिड़की में से सोहिनी की सास ने देख कर ऊँचे से आवाज़ दी, “अरी ओ सोमा ।” यह सोहिनी का ससुरोलिया नाम था । “अरी ओ सोमा ? नीचे देखो । वह आया है ।”

मंगल को इन वाक्यों में एक नई ध्वनि का संचार प्रतीत हुआ । उसको ऐसा अनुभव हुआ, जैसे उसकी श्रवणशक्ति बेकाम हो गई है । साधारण सी बात भी उसको बुरी प्रतीत होने लगी है । वह नत्थूमल्ल और सोहिनी की सास के कहने पर विचार कर ही रहा था कि सोहिनी नीचे आ गई । उसने दरवाज़ा खोल कर पूछा, “भैया, क्या है ?”

इस सूखे प्रश्न को सुन उसने भी यही मतलब की बात कही, “तुमको और रामू को लेने आया हूँ । कल फ़सल कट जाने की खुशी में घर पर सब को न्योता है ।”

“अच्छी बात । हम सब आवेंगे । तुम्हारे जीजा जी भी आवेंगे ।”

“तो मेरे साथ नहीं चलोगी ?”

“नहीं ! वे मना कर गये हैं ।”

“रामू ?”

“वह स्कूल गया हुआ है । वह भी मेरे साथ आयगा ।”

मंगल ने इससे अधिक कुछ न कहा । न कुछ सुनने की उसमें सामर्थ्य रही थी । उसकी आँखें तरल होने लगीं तो वह यह कह कर, “अच्छा आ जाना । मेरी तरफ से जीजा जी को आने की कह देना ।” लौट पड़ा ।

४

मंगल जब नगर में आया करता था तो अनेकों काम करने को होते थे । आज भी गाँव से आते समय बहुत कुछ सोच विचार कर आया था । परन्तु जाते समय सब भूल गया । उसके मन में यही धुन सवार थी कि शीघ्र नगर से निकल किसी एकान्त स्थान में चला जाऊँ । कहीं ऐसा न हो कि मेरे आँसू पहले ही निकल जायँ और सड़क पर चलते फिरते लोग उन्हें देख लें ।

अभी मध्याह्न के खाने का समय भी नहीं हुआ था कि वह घर जा पहुँचा । उसकी माँ और स्त्री दोनों उसको समय से पहले आया देख, विस्मय में कारण पूछने चली आईं । माँ ने कहा, “मैंने कहा न था कि रामू नहीं आयगा ।”

“माँ ! वह कल सोहिनी के साथ आयगा । साथ जीजा जी भी आयेंगे ।”

माँ को इससे सन्तोष हुआ और प्रसन्नचित्त अपने कमरे में चली गई । परन्तु मोहिनी अपने पति के शब्दों को नहीं सुन रही थी, वह उसके सूखे हुए चिन्तित मुख को देख रही थी । उसको उसके हृदय के

दुःख का आभास उसके मुख पर दिखाई दे रहा था। वह माँ के चले जाने पर बोली, “आइये, भीतर आ जाइये।”

मंगल भीतर गया, तो उसने अपने आँचल से उसके पाँव पर पड़ी धूल को झाड़ना आरम्भ कर दिया। पश्चात् उसको खाट पर बिठाया और स्वयं भूमि पर बैठ पाँव दबाते हुए कहा “आपके मुख से ऐसा प्रतीत होता है कि कोई भयंकर बात हो गई है।”

“हाँ ! इतना कुछ हो गया है कि मेरे जैसे के मस्तिष्क में समा नहीं सका।”

“मुख सूख गया है। मैं कहती हूँ कि पहले थोड़ी सी लस्सी, मक्खन और रोटी खा लीजिए। फिर सुनूंगी।”

सायंकाल को मंगल पुजारी के घर जा पहुँचा। मंगल ने जब उसे निमंत्रण दिया तो पुजारी ने गद्गद होकर स्वीकार किया। इस पर मंगल ने कहा, ‘पंडितानी को भी लेते आना, काम में मोहिनी का कुछ हाथ बटा देगी। और फिर यह न्योता अन्तिम प्रतीत होता है।’

“क्यों ?” पुजारी ने आश्चर्य में पूछा।

“हम देहातियों का पेट छोटा है न। अधिक पच नहीं सकता।”

“तो बड़ा पेट किसका है ? मैं तो सात रोटियाँ एक ही बार में खाता हूँ।”

“नगर वालों का पेट निस्सन्देह बड़ा होता है। लाखों कमाते हैं और फिर डकार जाते हैं। बाहर किसी को पता भी नहीं चलता। इस वर्ष एक हजार मन गेहूँ पैदा किया है और वह हमारे पेट में रटकने लगा है।”

“ओह ! तो यह बात है ! भैया मंगल, क्या माँ ने कुछ कहा है ?”

“कल पता चल जायगा। रामू अपना भाग माँगेगा। माँ भी पृथक् गुजारे के लिए कुछ माँगेगी। और मंगल और मोहिनी कोल्हू के बेल

की भाँति अलग चक्कर काटने में लग जायंगे ।”

“भैया मंगल ! पृथक् हो जाओ अपने भाई से ।”

“यह कैसे हो सकता है ! माँ से बेटा कैसे पृथक् हो सकता है ?”

“है तो यह अनहोनी बात, पर एक बात तुम समझ नहीं रहे । माँ और बेटे में सम्बन्ध-विच्छेद नहीं हो रहा । प्रत्युत यह तो भाई भाई का सम्बन्ध टूट रहा है । माँ और बेटे में तो यह हो रहा है कि एक बेटे पर दूसरे को अधिक माना जा रहा है ।”

“मैं इतनी बारीकी नहीं जानना चाहता, न मुझ में बाल की खाल निकालने की योग्यता है । मैं तो पंडित जी ! यह जानता हूँ कि चौधरी दुर्गादास के खेतों का अन्न सिमट जाने के अवसर पर न्योता कल अंतिम होगा । इस कारण आना और खूब खाना ।”

पंडित को कही बात गाँव भर में फैल गई । घर घर चर्चा होने लगी । दुर्गादास की भूमि का बँटवारा होगा । रामू की भूमि अधिया पर दी जायगी । मंगल भैया की कमाई रामू को जायगी । रामू नाबालिग का भाग मंगल हड़प कर जाने वाला था । सोहिनी के समुराल वालों ने ऐसा होने नहीं दिया ।

अगले दिन तक गाँव के बच्चों तक को विदित हो गया कि मंगल और रामू में बँटवारा होगा । इस चर्चा के होने पर भी मंगल के आँगन में भोज का प्रबन्ध हो रहा था । आटे का हलुवा, जलेबी, पूरी, काशीफल और भिण्डी तोरी की भाजी, साथ पीने को छाँछ और खाने को मक्खन । मंगल के खेतों में पचास से ऊपर स्त्री-पुरुष काम करते थे । उनके बाल-बच्चों तक को न्योता था । इस प्रकार दो सौ के लगभग के खाने का प्रबन्ध था । जब गाँव के लोग भोजन कर रहे थे तो अपनी फिटन गाड़ी में शंकर, उसकी बीवी सोहिनी और रामू आये । साथ ही दूसरे टाँगे में शंकर का पिता नत्थूमल्ल भी आ पहुँचा ।

आँगन में सौ की पंगत को खाते हुए देख, नत्थूमल्ल के माथे पर बल पड़ गए। जब मंगल उनके स्वागत के लिए आगे बढ़ा, तो नत्थूमल्ल ने कह दिया, “यह क्या चाहियात है ! पाँच सौ रुपया बैठे-बैठे खर्च हो गया होगा। इससे तो पाँच-पाँच सेर अन्न दे देते तो ठीक रहता।”

खाने वालों में प्रायः सब जानते थे कि वे लोग किस कारण आये हैं, और उनमें से जब एक ने समधी के माथे पर त्योरी चढ़ी देखी, तो उसने डकार लेते हुए कह दिया “सूम जाये सखी का भला हो।” इस पर एक और ने कह दिया, “भगवान सखी के साथ है।”

छोटी जात के काम करने वाले, सबके सब मंगल के साथ अन्याय होता अनुभव कर रहे थे। जाटों में कुछ ऐसे भी थे जो मंगल से ईर्ष्या और डाह करते थे। इससे उसकी भूमि घँटती देख कर प्रसन्न थे। इस पर भी वे खुले में कुछ नहीं कह सकते थे।

पंगत में गुजरते हुए शंकर ने कहा, “मंगल भैया, इन लोगों को शीघ्र ही विदा कर दो। पिता जी ने शीघ्र ही लौट जाना है।”

“भैया, खा कर ही जायेगे न !”

“नहीं खाया जाता तो उठा कर ले जाएँ।” शंकर ने ऊँचे स्वर में कहा।

पास ही एक कहार सुन रहा था, जो दुर्ग चौधरी के समय से मंगल के घर में काम-काज करता आया था। वह बोल उठा, “जमाई बाबू ! तुम्हारे बाप के घर का नहीं खा रहे। अपनी मजदूरी में से खा रहे हैं।”

इस पर शंकर घूम कर और त्योरी चढ़ा कर उसकी ओर देखने लगा। उस कहार ने फिर कहा, “कभी जामींदारी की भी है ? इसे करोगे तो जानोगे।”

इस समय मंगल ने हाथ जोड़ कर कहा, “चाचा कर्म ! चुप रहो । ये जमाई बाबू हैं । हमारे पूज्य हैं ।”

मंगल ने हाथ जोड़ कर शंकर को कहा, “भैया, ये गंवार आदमी हैं, इनकी बात पर क्रोध नहीं करना ।”

मंगल शंकर को अपने साथ कमरे में, जहाँ उसका पिता और रामू जा चुके थे, ले गया । कमरे में जाकर शंकर ने कहा, “पिता जी, इस भगड़े को शीघ्र निबटा दो । मेरा तो यहाँ नाक में दम हो रहा है ।”

“हाँ, तो मंगल ! इधर आओ, बैठो ।” कमरे में दरी पर चाँदनी बिछी थी । तकिए लगे थे ।

बैठते हुए नत्थूमल्ल ने कहा, “हम यहाँ एक विशेष प्रयोजन से आए हैं ।”

“हाँ लाला जी ! यह तो कल ही मेरी समझ में आ गया था ।”

नत्थूमल्ल के एक ओर शंकर और रामू बैठ गया । इनके पीछे रामू की माँ और घूँघट काढ़े सोहिनी बैठी । नत्थूमल्ल के दूसरी ओर केवल मंगल ही बैठा था । कमरे के दरवाजे के बाहर गाँव के लोग खड़े भाँक कर भीतर देख रहे थे ।

मंगल के कहने पर नत्थूमल्ल ने कहा, “तो हमारा विचार है कि वंटवारा कर लिया जाय । फिर चाहे तुम मकान बनवाओ, चाहे महल ।”

“मुझको स्वीकार है ।” मंगल ने उत्तर दिया । परन्तु उसके मुख से अभी ये शब्द निकले ही थे कि कमरे में बगिया के शिवालय का पुजारी घुस आया । नत्थूमल्ल और शंकर उसकी ओर प्रश्न-भरी दृष्टि से देखने लगे । परन्तु पुजारी ने हाथ जोड़ कर नत्थूमल्ल को आशीर्वाद देते हुए

कहा, “लाला जी, भगवान आपको दीर्घायु करे। क्यों जमाई बाबू ! ठीक तो हैं ? हमारी लड़की को भी साथ लाए हो न ? बहुत अच्छा ! वह बैठी है। जीती रहो बेटी !”

नत्थूमल्ल पंडित को डाँट कर बाहर निकालने का विचार कर रहा था। परन्तु उसको इस प्रकार आशीर्वाद देते देव कुछ नरम हो गया, और बहुत ही नम्रता से कहने लगा, “पंडित जी ! आप तनिक बाहर चले जावें, तो ठीक रहेगा।”

“लाला जी ! मैं तो इस पंचायत में बैठने को ही आया हूँ। मैं घर का पुरोहित हूँ। इस कारण घर के बटवारे के समय मेरा यहाँ बैठने का अधिकार है।”

इतना कह कर पुजारी मंगल के पीछे बैठ गया। इस से नत्थूमल्ल बहुत ही भुँझलाया। मंगल से बोला, “इसे बाहर निकाल दो मंगल।”

मंगल को बोलने का अवसर ही नहीं मिला। पंडित ने तुरन्त उत्तर दिया, “मैं मंगल के बुलाये नहीं आया। न मंगल के कहे जाऊँगा। मैं तो जैसे मंगल का पुरोहित हूँ वैसे ही मंगल की माँ का अथवा रामू का भी पुरोहित हूँ। मैं तो घर के मामले को देखने का अधिकार रखता हूँ।”

“कहीं पंडित जी ! पिटाती न हो जाये।”

“किस की ! मेरी ! बौत करेगा ! ज़रा बाहर जा कर देख तो आओ। कितने आदमी खड़े हैं मेरी हिमायत में।”

नत्थूमल्ल ने बाहर की ओर देखा तो सत्य ही उसको बीसियों लाठियों कन्धों पर खड़ी दिखाई दे गई। उसका हृदय काँप उठा। अपने को इस प्रकार फँसा हुआ देख कर उसने बहुत यत्न से अपने

मन को काबू में रखा और मंगल से कहा, “मंगल ! तुम बड़ भाई हो । तुम बताओ, क्या देना चाहते हो अपने छोटे भाई को ?”

“जो यह माँगे ।”

“फिर भी तुम ही बताओ । रामू का क्या हक बनता है ?”

“बोलो रामू !” मंगल ने रामू की ओर देख कर पूछा, “बोलो क्या चाहते हो ?”

“वह तो नाबालिग है । वह क्या माँगेगा ?”

“तो अपनी माँ से पूछ ले ।”

“मैंने उसकी माँ से पूछ लिया है । जो कुछ मैं कह रहा हूँ उस से पूछ कर ही कह रहा हूँ । इस वर्ष की पैदावार को तीन भागों में बाँट दो । एक भाग तुम्हारी माता का, एक भाग रामू का और तीसरा भाग तुम्हारा ।”

“तो क्या माँ और रामू इससे प्रसन्न हैं ?”

“भविष्य के लिए भूमि के तीन भाग हो जायँ । यदि तुम प्रबन्ध कर सको तो उपज के तीन भाग हुआ करें । नहीं तो, तुम अपने तीसरे भाग के मालिक और शेष दोनों भागों को तुम्हारी माँ जैसे चाहे करे ।”

“मुझे कुछ भी आपत्ति नहीं । जैसे माँ चाहे करे ।”

“तो ठीक है, लिखा-पढ़ी हो जाय ।”

इस समय पण्डित बोल उठा, “घर में जो भूषणादि हैं वे भी बँट जावें ।”

“चुप रहो ।” नत्थूमल्ल ने डाँट कर कहा ।

“लासा ! न्याय की गद्दी पर बैठे हो तो पूरा न्याय करो न ?”

“मैं कहता हूँ इस प्रकार हस्तक्षेप कर तुम मंगल का भला नहीं कर रहे ।”

“पर मैं पूछता हूँ, आपको लडकी दी है, सारा घर नहीं दे दिया । आप किस अधिकार से यह सब कुछ कर रहे हैं ?”

“एक अबला विधवा ने मुझे यह निर्णय करने के लिए बुलाया है । एक अनाथ की रक्षा के लिए मैं आया हूँ ।”

“मुझको भगवान ने यह देखने के लिए भेजा है कि देखूँ किसी के साथ अन्याय न हो जाय । देखो लाला नत्थूमल्ल ! मंगल की बहू को भूषण चाहियें । इस कारण मैं उसकी ओर से कहता हूँ कि भूषण भी बँट जाने चाहियें ।”

इस समय मंगल की माँ बोल उठी, “भूषण तो जब मरूँगी तब ही बँटेंगे ।”

“देखिये पंडित जी !” मंगल ने इस विवाद को बन्द करने हुए कहा, “मैं तो सब कुछ इनकी इच्छा पर छोड़ चुका हूँ । मुझ को तो भूमि का तीसरा भाग भी, इनकी इच्छा के बिना, नहीं चाहिये । ये मेरी माँ है । रामू भाई है । चाहें तो ये सब कुछ ले सकते हैं । इनके मन में आये तो कुछ दे दें, न आये तो न दें ।”

“क्यों पंडित !” अब नत्थूमल्ल ने उसको डाँटने के विचार से कहा, “मान न मान मैं तेरा महमान ! बिना पूछे ही वकालत करने चले आये हो !”

पंडित इससे भौंरा अश्वश, परन्तु साहस पकड़ कर बोला, “मैं किसी का वकील बन कर नहीं आया । घर का पुरोहित होने के नाते और गाँव के मुखिया की आज्ञा से आया हूँ । मंगल बेवारा सीधा-सादा आदमी है और आप हैं बहुत चतुर । इससे उसकी रक्षा करना बहुत आवश्यक है ।”

“अच्छा ! अच्छा !! चुप करो अब । मंगल, तुम बताओ कि क्या चाहते हो ?”

मंगल को लाला जी की धूर्तता पर क्रोध आ रहा था, परन्तु वह सोचता था कि जब माँ ही इस भगड़े में सबसे आगे है तो वह किसी दूसरे पर गिला क्या करे ? उसने कहा, “पंडित जी मुझ पर कृपा रखते हैं, इस कारण मेरे हानि-लाभ की इनको चिंता बहुत रहती है। यूँ तो गाँव के सब लोग मुझ से प्रेम करते हैं और मैं इन सब का आभारी हूँ, परन्तु मैं कहता हूँ कि जब एक बार बँटवारे का विचार उत्पन्न हो गया तो यह होना ही चाहिये। रहा मुझे क्या मिलता है, सो मैंने सब कुछ अपनी माँ पर छोड़ दिया है। माँ, बताओ, कुछ दोगी अथवा नहीं ?”

माँ ने कहा, “देखो मंगल ! तुम्हारा पालन-पोषण हो गया है। तुम्हारा विवाह भी हो गया है। भगवान ने तुम्हें सब प्रकार से योग्य बना दिया है, इससे तुम्हें अपने छोटे भाई का ध्यान रखना चाहिये।”

“ठीक है, मैं मानता हूँ। मुख से कहो क्या कुछ देती भी हो ? मैं तो तुम्हें पिता जी के स्थान ही मानता हूँ, जो कुछ भी प्रसन्न हो कर दे दोगी, ले लूँगा।”

“तो ऐसा करो। अपने लिये पृथक् मकान ले लो। तुम्हारी बहू को देख कर मेरे मन में पृणा उत्पन्न होती है। वह नीम के पेड़ से पश्चिम को जो खेत हैं, वह तुम ले लो। भूषण, जो तुम्हारी बहू के मापके से आये थे, उन्हें वह ले ले। जो अपने घर के भूषण हैं वह कुछ तो सोहिनी को दे दिये हैं और कुछ रामू की बहू के लिये रहने दो।”

“माँ ! लाला जी के पास जो अढ़ाई हजार रुपया है ?”

“वह रामू के विवाह के लिये रहने दो। जो उपज इस वर्ष आई है उसका तीसरा भाग तुम ले सकते हो।”

इस समय तक गाँव का मुखिया भी भीतर घुस आया था। वह भी इस अन्याययुक्त बटवारे की बात सुन रहा था। इससे मंगल के बोलने से पहले बोल उठा—“मंगल, तनिक बात सुनो तो। इधर आओ।”

नत्थूमल्ल ने मंगल को मुखिया की बात सुनने के लिए जाते देख कर कहा—“हमारे पास बहुत समय नहीं है। हमें कई और भी काम करने को हैं।”

“ठहरो लाला ! जल्दी किस बात की है ! आज नहीं तो कल बात हो ही जायेगी।”

मंगल जब मुखिया के पास गया, तो वह उसे कमरे से बाहर ले गया। सारा गाँव का गाँव वहाँ उपस्थित था। युवा, वृद्ध, बालक और छोटी जाती के स्त्री-पुरुष भी। उनकी ओर अंगुली कर मुखिया ने कहा—“मंगल ! देखो, यह सारा गाँव तुम्हारी सहायता के लिए एकत्रित हो गया है। ये लोग समझते हैं कि इस लाला ने ही तुम्हारी माँ और भाई की सम्पत्ति हड़पने के लिए यह पाखंड रचा है। तुम इनकी बात मत मानो। ये लोग तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकेंगे।”

“मैं आप सब लोगों का कृतज्ञ हूँ। पर चौधरी ! एक बात तुम नहीं समझ रहे। माँ ईश्वर की एक अमूल्य देन है। उसे प्रसन्न रखना, उसकी आज्ञा को पालना पुत्र का कर्तव्य है। भूमि, मकान और धन-दौलत से बढ़कर माँ और बेटे का सम्बन्ध है। मुझसे कोई बात ऐसी नहीं होगी जिससे माँ का मन दुःखी हो। नहीं चौधरी ! ऐसा न होगा। माँ को ले लेने दो, जो वह कहती है। आखिर माँ ही तो है। उसने ही यह तन दिया है, पाला है, पोसा है, क्या उसके लिए मैं यह भी नहीं कर सकता ?”

“पर यह नीम से परे की भूमि तो आधी ऊसर है।”

“मैं उसे भी नहीं लूँगा। उसे लेकर केवल बदनाम होना ही है।”

“तो जोतोगे क्या ? गुज़र कैसे होगी ?”

“नगर में जाकर मजदूरी कर लूँगा।”

“मजदूरी करोगे तुम ?”

मुखिया का मुख खुला रह गया। मंगल उसको वहाँ ही छोड़ कर पुनः अपने स्थान पर आ गया और बोला—“मुझको मंजूर है। जो कुछ मैं कहती है, मैं उसको मानने के लिए तैयार हूँ।”

“तो यह लिखा-पढ़ी जाय। हस्ताक्षर करने होंगे।”

“आप लिखिये, मैं तैयार हूँ।”

५

बटवारे का कागज़ लिख लिया गया। मंगल, उसकी माँ और रामू के हस्ताक्षर हो गये। लाला नरभूमल और शंकर ने राक्षी भर दी। पर गाँव के किसी आदमी ने साक्षी नहीं भरी।

मंगल ने तब एक बात कही—“यदि तैयार फसल में से एक-तिहाई भी मुझे मिल जाय तो मैं इससे अपना पृथक् घर बसाने में लगा सकूँगा।”

“वह मिल जायगी।”

“कब ?” पुजारी ने बात निश्चय करने के लिए कहा।

“जब उपज बिक जायगी तो तिहाई दाम इसे मिल जावेगे।” लाला जी का कहना था।

“मुझे रुपया नहीं चाहिए। मुझे गेहूँ और भूसा मिल जाय तो ठीक होगा।”

“इस पर विचार करेंगे ।” माँ ने कह कर बात समाप्त कर दी ।

सब उठ खड़े हुए और लाला नत्थूमल्ल, रामू की माँ, शंकर और मोहिनी सब गाड़ियों में सवार हो नगर को जाने के लिए तैयार हो गये । जाने से पूर्व माँ ने मंगल को कहा—“मैं चार-पाँच दिन में आऊँगी और तब तक अपने लिये मकान का प्रबन्ध कर लेना ।”

मंगल चुपचाप देखता रह गया । वे लोग गाड़ियों में सवार हुए और चले गये ।

गाँव के लोग भोजन कर अपने-अपने घरों को चले गए । मंगल इस परिवर्तित परिस्थिति पर गंभीरतापूर्वक विचार करता हुआ लोगों को जाते देख रहा था । पुजारी और मुखिया उनके सम्मुख चुपचाप खड़े थे । जब सब लोग चले गए तो पुजारी ने मंगल के कंधे पर हाथ रख कर कहा “यह तुमने क्या किया है मंगल ! अपने पांवों पर आप ही कुल्हाड़ा चला दिया ।”

“जो किया है, ठीक किया है । पंडित जी, जीवन एक खेल है । मेरे जीवन का यह खेल अभी समाप्त नहीं हुआ । अभी तो इसका पूर्वार्ध भी पूर्ण नहीं हुआ । मैं अपने पर और भगवान पर भरोसा रखता हूँ और जानता हूँ कि मैं अपनी अवस्था फिर सुधार सकूँगा । मुझे भय इस बात का है कि यह स्वार्थी लाला, रामू का रक्त तक न चूस ले । तब क्या होगा ?”

“मैं चाहता था कि मेरे भाग की उपज मिल जाती तो उसे बेच कर आगे के काम-धन्धे का निर्णय कर पाता ।”

“अब उपज मिल चुकी मंगल ! उससे भी हाथ धो डालो ।” मुखिया ने कहा ।

“नहीं मिलेगी, तब भी मैं मेहनत-मजदूरी से अपना पेट भर लूँगा । मैं यह बता देना चाहता हूँ कि एक पुत्र अपनी माँ को प्रसन्न करने के लिए क्या कर सकता है ।”

मुखिया की बात ठीक निकली । अगले दिन पचास गाड़ियाँ नगर से आईं और भूसा लद कर ले जाने लगीं । उनके साथ पुलिस के दो कान्स्टेबल थे । तीन दिन में भूसा लद गया और फिर गेहूँ का उठाना आरम्भ हो गया ।

६

भोज के दिन सब को विदा कर मंगल जय भीतर मोहिनी के पास आया तो उसने झुक कर अपने पति के चरण स्पर्श किये । “क्या हुआ है मोहिनी !” मंगल ने पूछा ।

“आप ने मेरी लाज रख ली है । थोड़ा-सा भी भगड़ा करते तो सब यही कहते कि बीबी के लिए माँ से लड़ पड़े हो ।”

“परन्तु परिणाम का भी विचार किया है तुमने ?”

“हम निर्धन हो गए हैं, यही न ?”

“निर्धन ! सर्वथा कंगाल ! सारा गाँव चाहता था कि मैं यह बट-वारा स्वीकार न करूँ; और मैं जानता भी था कि यदि मैं इनकार कर देता तो वे मेरा कुछ विगाड़ भी नहीं सकते थे, परन्तु मेरे मुख को तुमने ताला लगा दिया था । तुमने जो अपनी सौगन्ध डाल कर कहा था कि माँ का कहना मानना, उसे मैंने मान लिया है । परन्तु माँ ने तो मुझे पानी पीने योग्य भी नहीं रखा ।”

“तो आप मुझ से नाराज़ हैं ?”

“नाराज़ तो नहीं हूँ, पर एक बात है — अब घोर परिश्रम और निर्धनता का जीवन व्यतीत करना पड़ेगा ।”

“तो आपका मन डरता है इससे ?”

“मैं नहीं डरता । मैं तुम्हारी बात कह रहा हूँ ।”

“आपके साथ रह कर मुझे परम सुख मिलेगा । इस जीवन से मैं उसे ज़्यादा पसंद करूंगी ।”

दो दिनों के पश्चात् जब भूमा लद कर नगर को जाने लगा तो मंगल को भुखिया का कहना स्मरण हो आया । तीन दिन में सब भूमा नगर को पहुँच गया । मंगल का भाग तो क्या, घर के पशुओं के लिए भी कुछ न छोड़ा गया । इसी प्रकार एक सप्ताह में सब गेहूँ और भूमा नगर में जा पहुँचे । गाँव के लोग उसे कहते रहे कि अदालत में जाकर चाराजोई करो, परन्तु मंगल ने उन सब का उत्तर दिया कि माँ से झगड़ा नहीं करूंगा । उसने किसी की बात नहीं मानी ।

पंडिताइन ने भी मोहिनी को बहुत समझाया, “तुम ही मंगल को समझाओ, तुम्हारी क्या दशा होगी ! कहाँ राज करती थी और कहाँ अब भिखारिन बना दी गई हो !”

मोहिनी का कहना था, “मौसी, वे जो कुछ कर रहे हैं, मुझ से पूछ कर ही कर रहे हैं । और मैं समझती हूँ कि जो कर रहे हैं, ठीक ही कर रहे हैं ।”

“तो अब क्या करोगी ?”

“अभी निश्चय नहीं किया । जो ईश्वर को स्वीकृत होगा ।”

गाँव के लोग मोहिनी के पिता के पास पहुँचे । उसने उत्तर दिया, “मेरा कहा वह कहाँ मानेगा जब और किसी का नहीं माना !”

जब सब गेहूँ नगर चला गया तो मंगल लाला नत्थूमल्ल की दुकान पर गया । वहाँ जा कर उसे पता चला कि नत्थूमल्ल कचहरी गये हैं । वह उसकी प्रतीक्षा करने बैठ गया । मुनीम ने पूछा,

“क्या काम है चौधरी साहब !”

“माल यहाँ पहुँच गया है। अब उस पर कुछ रुपया लेने के लिए आया हूँ।”

मुनीम ने मुस्कराते हुए कहा, “आपके नाम का खाता अब नहीं रहा। एक नया खाता रामू के नाम खोला गया है। और उसमें सब गेहूँ आदि जमा हुआ है।”

इस पर भी मंगल अन्तिम बात करने के लिए वहाँ बैठा रहा। सायंकाल से कुछ पूर्व नत्थूमल आया और मंगल को बैठा देख खड़े-खड़े ही पूछने लगा, “कैसे आये हो मंगल ?”

“अपने भाग की फसल के दाम लेने।”

“सब फसल तुम्हारे भाई के नाम लिख ली है। अब उसकी माँ के हाथ से लिखवा कर लाओगे तो रुपया मिल सकेगा।”

“मेरा भाग आपने रामू के नाम क्यों लिख लिया है ?”

“तुम्हारी माँ के कहने के अनुसार। यदि तुम्हारा भगडा है तो अपनी माँ से होगा। हमें जो कुछ वह कहेगी वही होगा। यदि वह कहेगी कि सब कुछ तुम्हें ही लुटा दूँ, तो हमें उसमें भी कोई आपत्ति न होगी।”

“वह घर पर है क्या ?”

“हाँ”

मंगल सोहिनी के घर गया। वहाँ भी उसे माँ की प्रतीक्षा करनी पड़ी। उसने नीचे उतरने में ही बहुत देर लगा दी। वह आई तो उसने पूछा, “माँ, तुमने मेरा भाग भी रामू के नाम ही लिखा दिया है क्या ?”

“तो क्या हुआ ?”

“मुझे रुपये की आवश्यकता है। अब लाला जी को लिख दो कि मेरा भाग मुझे द दे।”

‘मैं तो कुछ जानती नहीं। लाला जी घर आवेंगे तो उनसे लिखा दूंगी।’

मंगल ने समझ लिया कि खेल समाप्त हो गया है। उसने तब कहा, ‘माँ, मैं अब नहीं आऊंगा। जो कुछ तुमने किया है, तुम जानो, तुम्हारा भगवान। मैं कल घर छोड़ रहा हूँ। वहाँ गाय-बेल हैं। उनके लिए भी वहाँ भूसा नहीं रहा। कुछ दाना रखा है, पर केवल दाने से तो गुजर नहीं हो सकेगा। उगका बन्दोबस्त कर लेना। कहीं गो-हत्या के पाप की भागी न बन जाओ।’

इतना कह कर उसने प्रणाम किया और चला गया। परन्तु इस समय उसके मन में विषाद भरा हुआ था। क्रोध से आँसू टपक रहे थे। वह चुपचाप गाँव को लौट चला।

मंगल की बहुत देर तक प्रतीक्षा करते-करते मोहिनी का हृदय भीतर ही भीतर बैठने लगा। उसके मन में भाँति-भाँति के भय उठने लगे। वह मकान में अकेली होने से भयभीत थी। सायकाल हो गया। रात अन्धेरी थी, सर्वत्र अन्धेरा ही अन्धेरा छा गया था। वह हरीकेन लालटेन जला, ड्योढ़ी में प्रतीक्षा करने लगी।

मंगल जब रात को दस बजे लौटा तो उसे वहाँ अकेली उदास बैठी देख कर मन में बहुत ही दुःखित हुआ। “इतनी उदास क्यों बैठी हो तुम?” उसने पूछा।

“आधी रात हो गई और अब लौटे हो?”

“मैं बार-बार जाने से यही उत्तम समझता था कि एक बार ही निर्णय करके लौटूँ। सो कर आया हूँ। कुछ भी नहीं मिलेगा।”

“एक पैसा भी नहीं ?”

“नहीं।”

“यह तो दिन-दहाड़े लूट हुई न !”

“हाँ। इसे रोकने का एक उपाय है मुकद्दमा, जो मैं माँ से नहीं करूँगा। अब तो मुझ में मुकद्दमा करने की शक्ति भी नहीं रही।”

“क्या होगा मुकद्दमे से ? मेरे पिता जी कहते हैं किसी समय वे भी अच्छे ज़मींदार थे। उनके पिता जी ने भी एक मुकद्दमा लड़ा था और उससे ऐसे बरबाद हुए कि अभी तक दशा नहीं सुधरी।”

“मोहिनी, मैं मुकद्दमा नहीं लड़ूँगा। माँ-बेटे की बात सुन कर सब हँसेंगे। परन्तु अब विचारना यह है कि अब क्या किया जाय। घर में तो दो-तीन दिन का अन्न शेष है। पशुओं के लिए तो कल तक का भी चारा नहीं।”

“कहीं चले चलें !”

“ठीक है, पर जाने के खर्च के लिए भी तो नकद कुछ नहीं।”

“मैं अपनी माँ से कुछ माँग लाती हूँ।”

“मुझे इस प्रकार माँगते लज्जा आती है। हाँ, एक बात समझ में आ रही है। माँ के कमरे में तिजोरी गढ़ी है। उसको खोल कर देखूँ शायद कुछ मिल जाय। तुम्हारे भूषण भी तो उसी में हैं। यदि वे ही मिल जायँ तब भी काम बन जायगा।”

“तो निकाल लो, वे तो मेरे हैं ही।”

दोनों भीतर चले गये। भोजन किया और पश्चान्त लालटेन ले कर कमरे का ताला खोलने का यत्न करने लगे। बाहर का ताला तो सुगमता से खुल गया परन्तु तिजोरी का ताला खोलने में बहुत कठिनाई

हुई। उसकी ताली माँ के पास थी। दूसरी कोई ताली लगी नहीं। ताला मजबूत था अतः उसे तोड़ने में एक घण्टे से ऊपर समय लग गया। लोहे का भारी दस्ता ला कर, ताले को पीट-पीट कर चूर-चूर कर दिया गया, तब जा कर कहीं वह खुला। पश्चात् तिजोरी का ढक्कन खोला गया तो पता चला कि वह खाली पड़ी है। एक तिनका मात्र भी उस में नहीं।

इतनी मेहनत और साहस करने पर जब सब प्रयत्न निष्फल हुआ तो दोनों विस्मय से एक दूसरे का मुख देखते हुए बैठे रह गये। रात का एक बज चुका था। अन्त में मंगल स्वयं उठा और फिर उसने मोहिनी को उठाया और कहा—“यह सब कुछ सोच विचार कर ही किया गया है। इस तिजोरी के टूट जाने से हम चोर तो बन गये, पर मिला कुछ नहीं।”

६

अगले दिन गाँव में यह बात विख्यात हो गई कि मंगल अपनी स्त्री के साथ गाँव छोड़ रहा है। गाँव का गाँव दुःखी था। वे लोग भी, जो मंगल की दिन दुगुनी, रात चौगुनी उन्नति देखकर ईर्ष्या करते थे, इस प्रकार उसको जाता देख कर रो दिये। खेतों में काम करने वाले कामे तो इस समाचार को सुन कर व्याकुल हो उठे।

मंगल का विचार तो दिन निकलने से पूर्व ही गाँव छोड़ नगर चले जाने का था, परन्तु वह चाहता था कि दस-बीस रुपये किसी से मिल जायें तो नगर में एक कोठरी ले कर रहने का प्रबन्ध कर सकूँ। सबसे प्रथम मोहिनी अपने पिता के पास गई। उसके पास नकद बीस रुपये थे। उसने कहा—“बेटी ! मध्याह्न तक कुछ अनाज बेच कर तुमको रुपये ला दूँगा।”

मंगल पुजारी के पास गया तो उसने भी यही उत्तर दिया—
 “मध्याह्न तक रुपये का प्रवन्ध कर दूँगा।” पुजारी ने आग्रह किया कि
 नगर में बिना धन के जाना ठीक नहीं, वहाँ के लोग कठोर होते हैं।
 पैसे के बिना बात भी न करेंगे।

बिबश हो कर मंगल और मोहिनी ने गाँव छोड़ने की बात अगले
 दिन तक स्थगित कर दी। इससे बात गाँव भर में फैल गई। स्थान-
 स्थान पर गोष्ठियाँ होने लगी। मंगल की बात को दुहरा-दुहरा कर,
 “माँ को प्रसन्न करने के लिये पुत्र क्या कुछ कर सकता है।” लोग उस
 की भूरि-भूरि प्रशंसा करते थे।

छोटी जात वालों ने बिरादरी एकत्रित की और सब मंगल के दर-
 वाज़ के सामने जा बैठे। मंगल को जब पता लगा तो वह बाहर आया।
 स्त्री-पुरुष, दो सौ से ऊपर उसके दरवाज़े पर घरना दिये बैठे थे। मंगल
 उनको देख कर विस्मय से पूछने लगा—“क्या बात है भाई, कैसे आये?”

“मंगल चौधरी, हमारी बिरादरी ने निश्चय किया है कि तुमको
 गाँव से जाने नहीं देंगे।’

“क्यों ? मुझ से कोई अपराध हो गया है क्या ? बताओ भाई,
 मैंने क्या किया है ?”

एक वृद्ध ने आगे आकर कहा— “भैया मंगल ! तुम्हारे बिना हम
 गरीबों को पूछने वाला कौन रह जायगा यहाँ ? अतः हमने निर्णय किया
 है कि मुखिया के घर में तुम्हें रहने को जगह मिल जायगी। साथ ही एक
 मकान बगिया के दाईं तरफ बनाने के लिए हम कल से ही काम आरंभ
 कर देंगे। अगली फसल तक के लिए गाँव के लोग तुम्हारे खाने के लिये
 और बीज के लिए अन्न एकत्रित कर रहे हैं।”

मंगल इस सहानुभूति के व्यवहार से अति प्रभावित हुआ, परन्तु वह गाँव वालों की दान-दक्षिणा पर पलना नहीं चाहता था। उसने कह दिया—“भाई, आपके इस प्रेम के लिये मैं बहुत ही कृतज्ञ हूँ, परन्तु मैं आप को कष्ट देना नहीं चाहता। मैं शीघ्र ही धन कमा कर लाऊँगा और फिर से आप लोगों में बसने का यत्न करूँगा। इस समय मुझको जाने दो। मैं मरण-पर्यंत आपकी इस सहानुभूति को भूल नहीं सकूँगा।”

“नहीं भैया !” बीसियों आवाजें निकल आई—“हम तुम्हें नहीं जाने देंगे। हम तुम्हारे दरवाजे पर धरना दे देंगे। तुम्हारा रास्ता रोक लेंगे पर तुमको जाने नहीं देंगे।”

वही बूढ़ा फिर कहने लगा, “हम लोगों ने पाँच पीढ़ियों से तुम्हारे पूर्वजों का अन्न खाया है। उसका कुछ तो प्रतिफल हमें भी देने दो। तुम्हारे खाने-पीने का भार हम लेते हैं। इसमें हमारा क्या है ! तुम से और तुम्हारे पूर्वजों से दिये गये का एक अंश मात्र भी तो नहीं होगा। इस वर्ष मौसम अच्छा लगा है। फल बहुत हुई है और तुमने भी जी भर कर मज़दूरी दी है। इसलिये हमारे पास बहुत कुछ है। तुम रहोगे तो हम फूलेंगे-फलेंगे। नहीं तो भैया, सर्वनाश होगा।”

“पर दादा !” मंगल ने हाथ जोड़ कर कहा, “हम किसानों की जड़ भूमि में होती है। तुम जानते हो कि मेरे पास भूमि नहीं है। मेरी जड़ यहाँ से उखड़ गई है। हवा में नंगी हो जाने वाली जड़ के पेड़ की भाँति मैं भी सूख कर मुर्झा जाऊँगा। मुझको कहीं जा कर जड़ पकड़ने दो भैया।”

“यह भी हो जायगा। पुजारी जी बता रहे थे कि इसी गाँव में बहुत सी भूमि परती पड़ी है। वह जोतने के लिये तुमको मिल जावेगी।”

“तुम्हारा मतलब मनोहर की भूमि से है, जो बर्मा गया हुआ है ? वह बीस बीघा है, पर वह देगा जोतने के लिये मुझे ?”

इस समय पुजारी, जो कहीं छुप कर खड़ा था, आगे निकल आया । उसने मंगल के समीप आ कर उसके कान में कहा, “भैया, रुपये का प्रबन्ध तो कर आया हूँ, पर मैं कहता हूँ कि इन लोगों की बात मान लो । कहाँ भटकते फिरोगे ? दो तीन वर्ष में सब काम पूर्ववत् हो जायगा । रामू की भूमि बिकेगी । तब तक उसके खरीदने की शक्ति पैदा कर लो ।

मनोहर की भूमि का बन्दोबस्त मैं कर दूँगा । उसमें कुआँ बनवाने का भी प्रबन्ध हो जायगा । तुम यहाँ ठहर जाओ तो यह प्रजा तुम पर अपनी जान दे देगी । भैया, मान जाओ ।”

मंगल दुविधा में पड़ गया । उसने सबको कहा, “मुझे विचार कर लेने दो । मैं अपनी स्त्री से भी पूछ लूँ ।”

“भैया, सोचो अथवा न सोचो, हम तो तुम्हें नहीं जाने देंगे । एक बार ‘हाँ’ करो तो देखोगे कि हम क्या-क्या कर दिखाते हैं ।” मंगल पुजारी को ले कर भीतर चला गया । मोहिनी किवाड़ के पीछे खड़ी सब वार्तालाप सुन रही थी । इन सीधे-सादे मेहनत से पेट भरने वालों की कृनजता देख कर उसके आँसू बह रहे थे । जब मंगल भीतर आया तो उसने जल्दी-जल्दी आँसू पोछने का यत्न किया, पर पुजारी से यह बात छुपी नहीं रह सकी । उसने कहा, “मोहिनी बेटी ! क्या है? छुप कर रो क्यों रही हो ?”

मोहिनी ने अपने को प्रसन्नमन प्रगट करने के लिये मुस्कराने का यत्न किया और कहा, “काका, कुछ नहीं ।”

“कुछ नहीं ! श्री तुम्हारी गालें तो अभी भी भीग रही हैं । क्या इन लोगों का प्रस्ताव पसन्द नहीं आया ?”

इस समय तक सब भीतर के आँगन में पहुँच गये थे। पुजारी ने कमरे की दहलीज पर बैठ कर कहा, “देखो मोहिनी बेटी ! ये लोग तुम्हारी प्रजा हैं। इनके कहने की अवहेलना राजा-महाराजा भी नहीं कर सकते। इससे तुमको भी अब यहाँ से जाने का हठ नहीं करना चाहिये।”

“उनकी भावना को देख कर मेरा तो रोम-रोम पुलकित हो उठा है। मेरे मुख में बाणी नहीं, जिससे उनकी कृतज्ञता प्रकट कर सकूँ। मैं नहीं जानती थी कि मेरी सास का पुत्र इतना अच्छा है कि लोग उससे इतना नेह रखते हैं। मैं सोचती हूँ कि पूर्व जन्म में अवश्य कोई भारी पुण्य कर्म मैंने किए हैं, जिससे मुझे इनके चरणों में बैठने का सौभाग्य मिला है।”

“पर काका ! इन लोगों पर बोझा बन कर रहना क्या ठीक होगा ?” मंगल ने पूछा।

“बोझा बनने की आवश्यकता नहीं। देखो, तुम लोग रुपया उधार ले कर नगर में काम करने जाओगे, तो क्या वह बोझा नहीं है ? इनसे भी जो कुछ लो उधार मान कर लेना, फिर समय आने पर सूद सहित दे देना।”

“मनोहर वाली भूमि मिल जाय तो काम बन सकता है।”

“मैंने पटवारी से बात की है। वह कहता है कि भूमि कई वर्षों से परती पड़ी है। इससे उसको जोतने बोन से गाँव का कल्याण ही होगा। मनोहर को बर्मा में लिख कर पट्टा लिखवाया जा सकता है।”

बात तय हो गई। मंगल पुजारी के घर में जाकर रहने लग गया। उसी दिन उसने माँ को कहला भेजा कि मैंने घर बदल लिया है। दो

गायें और दो बैल मैं अपने साथ ले गया हूँ। शेष वहीं पर बँधे हैं। उनकी रक्षा का प्रबन्ध कर ले।”

लोगों ने पुरोहित के कथनानुसार बगिया के दाईं ओर शामलाट भूमि पर मकान की नींव रख दी। गाँव के चालीस-पचास मजदूरों ने मिल कर एक महीने में एक कच्चा मकान बना दिया। दीवारें भीतर और बाहर से पलस्तर कर दी गईं और छत पर खपरैल डलवा दी गई।

वर्षा आरम्भ होने से पूर्व मंगल अपनी स्त्री मोहिनी को लेकर इस नये मकान में जाकर रहने लगा। दोनों गायों और बैलों के लिये पशुशाला भी बन गई थी।

लिखने पर मनोहर चौधरी ने भूमि जोतने की स्वीकृति भेज दी। उसने लिखा कि पट्टा लिख कर मुझे भेज दिया जाय।

नगर का चलन

१

लाला नत्थूमल्ल अनाज मंडी में बड़े आड़तियों में से एक था । पाँच-दस लाख की असाधियों में समझा जाता था । नित्य बीस-तीस हजार का व्यापार करता था । सामाजिक विचार से लाला अति कंजूस था । दान-दक्षिणा में उसका हृदय कबूतर के समान दुर्बल था । कर्म-चारियों तक को वेतन देने में वह अति कठोर बन जाता था । घर-का खर्च भी बहुत सोच-विचार कर करने वाला था । यह ठीक है कि उसकी प्रति दिन की औसत आय दो सौ रुपये से ऊपर थी, परन्तु घर में दोनों समय मूँग की दाल ही बनती थी ।

लाला नत्थूमल्ल ने इतनी धन-सम्पत्ति रखते हुए भी अपने लड़के शंकर को एक साधारण स्कूल में पढ़ाया था । लड़का वहाँ आठवीं श्रेणी से अधिक नहीं पढ़ सका । इस पर उसने उसे कुछ बही-खाते के लिखने का अभ्यास करवा कर पच्चीस रुपये मासिक देकर दुकान पर बैठने का ढंग निकाल लिया ।

शंकर दास का सोहिनी से विवाह का रहस्य शंकर दास का हठ था । उसने चौधरी दुर्गादास की लड़की को एक दिन चौधरी के साथ नगर में घूमते देख कर उससे विवाह का निश्चय कर लिया । उसने अपनी माँ के द्वारा पिता को अपने संकल्प की सूचना दी और यह कहला दिया कि यदि विवाह करूँगा, तो उसी से करूँगा, अन्यथा कदापि न करूँगा ।

दुर्गादास की लड़की से शंकर का विवाह हो गया। लाला को इस विवाह से भारी हानि हुई। उसका विचार था कि शंकर के विवाह पर दस-बीस हजार की सम्पत्ति मिलेगी। यद्यपि उम मनसूबे पर पानी फिर गया, तो भी वह अपना ध्येय बदलने वाला न था। उसकी पूर्ति का उपाय उस दिन से ही सोच रहा था जिसे दिन यह विवाह सम्पन्न हुआ था, परन्तु अवसर तब मिला जब दुर्गादास का देहान्त हुआ। उसके देहान्त के समय परिस्थिति को देखा, समझा और फिर इसे अपने अनुकूल करने का यत्न करने लगा।

दुर्गादास के दाह-संस्कार से लौटते हुये नत्थूमल्ल ने अपने सुपुत्र शंकर से पूछा, “शंकर, अब कितना प्रेम है तुम्हारा अपनी बीबी से?”

शंकर ने आँखें नीची कर कहा, “उतना ही जितना किसी को अपनी बीबी से हो सकता है।”

“और वह तुम को कैसे चाहती है?”

“मैं समझता हूँ कि वह मुझे अपना आराध्य देवता मानती है।”

“तो देखो, हम हैं व्यापारी लोग। हम मिट्टी से सोना उत्पन्न करने वाले हैं। दुर्गादास की लड़की से तुम्हारा विवाह करने पर मुझे सहस्रों रुपये की हानि हुई है। यदि कही और विवाह होता तो हजारों रुपये का दहेज मिलता। अब समय आ गया है कि उस क्षति को पूरा किया जाय।”

“यह कैसे हो सकेगा?”

“इसकी विधि मैं बताता हूँ। हमें तुम्हारी सास के मन में अपने छोटे पुत्र के लिये स्वाभाविक वात्सल्य का पोषण करना चाहिये। साथ ही बड़े पुत्र के प्रति अविश्वास और द्वेष की भावना भी उत्पन्न

करनी चाहिये । बड़े लडके की बहू में धूरा उत्पन्न करने का यत्न भी करना चाहिये ।”

पिता की बात शंकर के मन में बैठ गई और उसी रात से उसने कार्य आरम्भ कर दिया । रामू जब स्कूल से लौटा तो उसे अपनी बहिन से मिल कर जाने की सम्मति दी गई और उसके बाद जब वह बहिन के समीप होता तो वह उसके लिये खेद और सहानुभूति का प्रदर्शन करती । शंकर भी दूसरे तीसरे दिन अपनी सास से मिलने जाने लगा और उसे मोहिनी के विरुद्ध बातें कह कह कर भड़काने लगा । जब रामू की माँ मोहिनी से मिलने नगर में जाती तब भी सब स्त्रियाँ उसे उसके मन को बहू के विरुद्ध कलुषित करती ।

सीधी सादी एक देहान की स्त्री को भी बरगलाने में एक वर्ष लग गया । इस पर भी शायद बात इतनी न बिगड़ती यदि रामू को नगर के खेल-तमाशे दिखा कर नगर में रहने के लिये लालापित न कर दिया जाता, और साथ ही उनके मस्तिष्क में यह अंकित न कर दिया जाता कि उसका बड़ा भाई मंगल ही उसके इस सब सुख-भोग में बाधक है ।

निरन्तर यत्न करने पर योजना सफल हुई । लाला नत्थूमल्ल तो यह समझता था कि मंगल माँ से मुकद्दमा करेगा, जिसमें हजारों रुपये व्यय होंगे और उनकी भूसी इत्यादि सब कुछ बिक जायेगी । उस लूट में उसे भी हाथ रंगने का अवसर मिल जायगा, परन्तु मंगल ने सब कुछ त्याग दिया और माँ से मुकद्दमा लड़ना उचित नहीं समझा । नत्थूमल्ल को यह बुरा प्रतीत हुआ । एक दिन रामू और उसकी माँ भूषणादि घर की सम्पूर्ण सम्पत्ति लेकर अपने जमाई के घर आ गये । भूषण तोले गये । चादी के भूषण बीस सेर के लगभग थे और सोने के भूषण तीन सेर । नकद रुपये दो सहस्र से ऊपर थे । यह सब कुछ लाला नत्थूमल्ल

ने अपनी तिजोरी में रख लिया । न रामू की माँ ने रसीद माँगी और न लाला जी ने देने की आवश्यकता समझी । लाला जी रामू के लिये इतनी सहानुभूति दिखा रहे थे और उसकी निस्सहायता पर इतने द्रवित हो रहे थे कि रसीद माँगना उनके भावों का अपमान हो जाता ।

जब मंगल का सन्देश आया कि वह मकान छोड़ रहा है और पशु वहाँ भूखे मर रहे हैं तो लाला जी ने उनको गाँव से मगवा लिया और उन्हें बाज़ार में बेच दिया । चार बैलों और दो गौवों का मूल्य उसे अढ़ाई सौ रुपये मिले । कम से कम लाला जी ने यही बताया । यह रुपया वहीं में रामू के हिमाव में लिख लिया गया ।

मंगल को पशुओं के बिक जाने का समाचार पुजारी द्वारा मिला । समाचार लाने वाले ने यह भी बताया था कि उनको खरीदने वाले बूचर थे । इससे मंगल को भारी दुःख हुआ । वह कितनी ही देर तक इस बात से अवाक् मुख बैठा रहा ।

यह समाचार गाँव में भी फैल गया । उससे तो रामू की माँ तथा उसके समधियों का रहा-सहा सम्मान भी मिट्टी में मिल गया । परिणाम यह हुआ कि कामो ने भी मन में निश्चय कर लिया कि ऐसे पापी के खेतों में काम नहीं करेंगे ।

मंगल ने नीम से दक्षिण की भूमि, जो बटवारे में उसको मिली थी, जोती नहीं । उसका विचार था कि उस पर बीज डालना व्यर्थ है । उससे मजदूरी की लागत भी नहीं निकल सकेगी । एक तो कुआँ वहाँ से दूर था और दूसरे मनोहर की भूमि कई वर्षों के पश्चात् जुतने से अधिक मेहनत माँगती थी ।

परिणाम यह हुआ कि मंगल की अपनी भूमि परती रह गई । वह भूमि, जो रामू के भाग की थी, वह भी जोती नहीं जा सकी । कारण

न तो उसके लिए प्रबन्धक मिला, ना ही गाँव के किसी कामे ने भूमि पर हल चलाना स्वीकार किया। ऋतु के अन्त में एक दिन ला० नत्थू मल्ल स्वयं आया और पटवारी की सहायता से कामों को बुलवा कर उन्हें काम करने को कहने लगा। कामों ने उन्हें अपने चौधरी से बात-चीत करने को कहा। लाला जी ने उससे पूछा, “चौधरी, बीस बीघा भूमि है, कितने हल आप दे सकते हैं इस काम के लिए ?”

“एक भी नहीं।”

“क्यों ?”

“आप जैसे गौ-हत्यारे की भूमि में हमारी बिरादरी का कोई आदमी काम नहीं करेगा।”

“बहुत मूर्ख हैं वे लोग। गौ-हत्या किसने की है ? मैंने ! कब ? तुम भूल में हो। जिनका यह काम है उन्होंने ही वह की होगी। हमारा उससे क्या सम्बन्ध ! जो काम करेंगे उनको उजरत मिलेगी।”

“हमें उजरत नहीं चाहिए। हमें धर्म चाहिए। हम आपका काम नहीं करेंगे।”

इस पर पटवारी ने, जो लाला जी के पैसे के प्रभाव में था, चौधरी को डाँटा, “चौधरी, सँभल कर बात करो ! छोटा मुँह बड़ी बात। किससे ये बातें कर रहे हो ? कल से बीस आदमी आपको देने होंगे, जो लाला जी के खेतों को जोतेंगे, बोएंगे।”

“तो यह बेगार है क्या ?”

“बेगार ही सही। कल दल बीस आदमी भेज देना, नहीं तो परिणाम अच्छा न होगा।”

चौधरी मुख लटकाये लौट गया। पटवारी ने अपनी डींग हाँकते हुए कहा, “लाला जी, आप निश्चित रहें, मैं इनको सीधा कर लूँगा। कमीन जात है न ! बिना जूता खाये इनकी बुद्धि काम नहीं करती।”

कामें बेगार में पकड़े गये और खेत जुताए गये। जो काम एक दिन में हो सकता था वह पाँच दिन में हुआ। बीज डाला गया तो सिचाई नहीं हुई। सिचाई हुई तो निराई नहीं हो सकी। फसल पक गई तो कटाई होने में दिक्कत हुई। काटी हुई फसल पशु खा गये, इकट्ठा किया हुआ अनाज चोर उठा कर ले गये। इस प्रकार फसल की बिक्री से जो रुपया आया उसमें से मजदूरी देने के बाद भूमिकर के लिए भी कुछ नहीं बचा।

रामू और उसकी माँ सोहिनी के घर पर रह रहे थे। प्रतिदिन रात को नत्थूमल्ल हिमाव की बही निकाल बैठ जाता और प्रातः से लेकर सायंकाल तक जो भी खर्च होता रामू के हिसाब में लिख लेता। आधा सेर दही रामू की माँ के लिए, चार आने का। पाव भर दही रामू के लिए, दो आने का। चीनी एक आने का। सब्जी-टिण्डे, तोरी, पालक का साग, दो आने का। मिर्च, नमक, लौंग, दो पैसे के। घी, दो आने का। इस प्रकार प्रतिदिन का खर्चा बही में लिख लिया जाता।

आमदन कम और खर्च अधिक होने लगा। साहूकारों की भाँति दूसरों से लेना लिखने में सतर्क और उनका देना लिखने में भूल करना, नत्थूमल्ल का स्वभाव था।

इस प्रकार दिन प्रति दिन रुपया व्यय होने लगा। रामू स्कूल में पढ़ता था, उसके आने जाने के लिए एक सौ चालिस रुपये की बड़ी-

सिकल ले दी गई। कपड़े, किताबें, जेब-खर्च अलग। इस प्रकार सब खर्च था और आय की कोई सुरत नहीं थी।

एक वर्ष में तीन हजार रुपया उड़ गया। रामू का यज्ञोपवीत मंस्कार हुआ तो सात सौ रुपया उस पर खर्च हो गया। मंगल को बताया भी नहीं गया और उसको कई दिन पीछे पता चला। उसकी श्रवस्था अभी स्तर पर नहीं आई थी, इस कारण उसने जब देखा कि उसे बुलाया भी नहीं गया तो वह भी चुप कर रहा।

गाड़ी ढलवान पर चल पड़ी और लाला नत्थूमल्ल का अनुमान था कि दो वर्ष और लगेंगे तब रामू को भिखमंगा बना कर घर से निकाला जा सकेगा।

२

नत्थूमल्ल दुकान पर बैठा हिसाब देख रहा था। रामू और रामू की माँ का हिसाब शंकर रखता था। इससे वह लाला जी को बता रहा था, “पिता जी, पिछली फसल में ही केवल तीन सौ पचत्तर रुपये की हानि हुई है।”

हिसाब का चक्कर ही ऐसा होता है। व्यय करते समय पता नहीं चलता, परन्तु जब हिसाब किया जाता है तो परिश्रम से संचित धन फोकट में उड़ जाता है। जब सारा व्यय हो जाता है तो मनुष्य सोचता है कि कहाँ से बचत करनी चाहिए थी, परन्तु ‘पीछे पछताये क्या होत है जब चिड़ियाँ चुग गईं खेत।’ वाली बात होती है।

वर्ष के पीछे जब खर्च का हिसाब रामू की माँ को बताया गया कि बारह हजार में से केवल छह हजार शेष रह गया है तो उसे चिन्ता लगी और उसने अपने जमाई से पूछा “जेठ की फसल का काम कैसे चल रहा है?”

“माता जी ! यह खेती का काम हम से नहीं हो सकता । मैंने इस वर्ष कुछ नहीं बुवाया ।”

“तो अपने पिता से पूछ कर यह भूमि किसी को पट्टे पर दे दो ।”

“यह ठीक रहेगा ।”

रामू की माँ कुछ पढ़ी, लिखी तो थी नहीं । वह बेचारी जैसे शंकरदास कहता उसे ठीक मानती जाती । परिणाम यह हुआ कि नगर में और ओस-पड़ोस के गाँवों में डुग्गी पिटवा दी गई कि चौधरी दुर्गादास की भूमि एक वर्ष के पट्टे पर दी जायगी । इसकी सूचना मंगल को भी मिली ।

यद्यपि मंगल ने बहुत मेहनत से काम किया था, तो भी रामू की भूमि पट्टे पर लेने की हिम्मत उसमें अभी नहीं आई थी । पोष की फसल से तो वह बहुत कठिनाई से अपने खाने भर का और मकान पर लगी लकड़ी और खपरैल का दाम दे सका था । परन्तु जेठ की फसल कुछ अच्छी रही थी । उसमें उसके पास पाँच-छे सौ रुपया बच गया था । यद्यपि उससे गाँव के सब कामें काम नहीं पा सके तो भी जब फसल कट गई तो उसने सबको बुलाया और थोड़ा बहुत प्रत्येक को दिया । इससे बहुत कठिनाई से उसने अपने पिता की मानमर्यादा की रक्षा की ।

इसी बीच मोहिनी के एक लड़का हुआ । इससे अब वह उतना काम-काज नहीं कर सकती थी जितना वह पहले किया करती थी । इस पर भी घर का बहुत सा काम एक अहीर की लड़की की सहायता से चल रहा था ।

मंगल जब गेहूँ की फसल आड़त में पहुँचा कर और अपना हिसाब गिना-गिना कर आया तो चित्त में कुछ हलका अनुभव कर रहा था ।

नत्थूमल्ल के स्थान पर अब उसने लाला बन्सीधर से अपना सम्बन्ध कर लिया था। लाला जी ने उसके हिसाब में तीन सौ मन गेहूँ, पाँच सौ मन भूसा और पौष मास की फसल का बकाया अस्सी रुपये दस आने लिख दिए। गेहूँ अभी बिक रही थी, भूसे के बेचने का प्रबन्ध हो रहा था। मंगल ने अपने हिसाब में से पचास रुपये लिए और उनसे मोहिनी के लिये दो साड़ियाँ, बच्चे के लिए चार कुर्तों का कपड़ा मोल लिया। साथ ही कुछ खिलौने और मिठाई ले कर घर पहुँचा।

मोहिनी उसको इस प्रकार लदा-फदा आते देखकर बच्चे को ले आई और उसका ध्यान मंगल की ओर खींच कर बोली, “देखिये, अब आपको पहिचानने लगा है।”

“इतने खिलौने लाने पर भी नहीं पहिचानेगा क्या ?”

“यह सब व्यर्थ खर्च क्यों कर आये हैं ? मैंने अब फिर कातना शुरू कर दिया है। दो महिनों में कपड़ा ही कपड़ा हो जायगा। यह निष्प्र-योजन खर्च क्यों किया है ?”

“खद्दर से मेरे कुर्ते और धोती ही बन सकेगी। खद्दर पहनती-पहनती तुम उकता गई होगी, आगे को तुम्हारे लिए बाज़ार से ही कपड़ा लाया करूँगा।”

“क्यों ?”

“मेरी यही इच्छा है।”

“कितने की आई है यह ?”

“छोड़ो इन कंजूसी की बातों को। ज़रा पहन कर तो दिखाओ। देखूँ तुम कैसी फबती हो इसमें ?”

मोहिनी का मुँह लज्जा से लाल हो गया। वह खाट पर बैठ गई

और बच्चे को दूध पिलाती हुई बोली, “ठीक है, बूढ़ी जो हो गई हूँ । अब फवन इन साड़ियों से ही होगी ।”

इतना कहते कहते उसका मुख उतर गया और प्रसन्नता, जो मंगल के नगर से आने पर उसके अंग-अंग से प्रस्फुटित हो रही थी, विलुप्त हो गई । मंगल ने चिंता में पूछा, “क्यों ! क्या हुआ है मोहिनी ?”

मोहिनी ने गम्भीर साँस लेकर कहा, “जिस उत्साह से पिछले वर्ष काम किया था और जितनी मेहनत आपने की थी सब की सब मिट्टी में मिल गई । माँ जी को किञ्चित्मात्र भी यदि विवेक होता तो इस समय हम बहुत सुन्दर मकान में रहने होते । मैं स्वप्न देखा करती थी कि आपका लड़का उस काल्पनिक मकान में जन्म लेगा और वहाँ ही पलेगा और एक भारी ज़मींदार बनेगा ।”

“तो वह तो अब भी होगा । जो हुआ है, अच्छा हुआ है । हम पिता जी की कमाई पर खड़ा होना चाहते थे । माता जी ने वह नहीं माना । उनका कमाई का फल उन्होंने स्वयं लेना चाहा । यह इसी प्रकार है, जैसे तुम मेरी कमाई पर अपना विशेष अधिकार समझती हो । मुझे तो इसमें तनिक भी रोप नहीं । भगवान की कृपा से और माँ के दूध के बल से मैं अपने शरीर में बल और हृदय में साहस रखता हूँ और बिना किसी की सहायता के तुम्हारे लिए महल बनवा सकूँगा, यह मेरा विश्वास है ।”

“तुम तो ठीक काम कर लोगे परन्तु मैं तो अपने विषय में सोचती हूँ । क्या मैं भी फिर वैसी ही मेहनत कर सकूँगी ? अब तो शरीर ज़रा सा काम करने पर थक जाता है ।”

“पर तुम्हारे काम करने की आवश्यकता ही नहीं है ।”

मोहिनी कुछ कहने वाली ही थी कि बाहर से पुजारी की आवाज़ आई, “मंगल भैया ।”

“पंडित जी, आइए ।” मंगल ने पुजारी को भीतर बुला लिया । यूँ तो पुजारी पहले भी घर का ही आदमी माना जाता था, परन्तु पिछले वर्ष की घटना के बाद उसने मंगल की सहायता में भारी भाग लिया था । इस कारण उसका मान घर में बढ़ गया था । वह वहाँ बेरोकटोक आता जाना था ।

पंडित जी ने अपने लिए बिछाये गये आमन पर बैठने हुये कहा, “क्या ?”

“ऐसा तो होना ही था । पौष की फसल में हानि हुई है और ज्येष्ठ की बोई ही नहीं गई । पट्टे पर देने से, कुछ तो मिलेगा ही ।”

“तो भैया, तुम ले लो ।”

“नही भैया ! वह मेरे मान की नहीं है ।”

“मेरी तो इच्छा होती है कि ले ली जाय । गाँव में ऐसी भूमि और नहीं है ।”

“ठीक है । पर पंडित जी, मेरे में इतनी भूमि को जोत सकने का दम नहीं रहा । जो मेरे पास है इसको भी मैं पूरी जोत नहीं सका ।”

“पर बैठे-वैठे कैसे उन्नति कर सकोगे ? इस भूमि को हाथ से निकलने नहीं देना चाहिये ।”

“यह ठीक है, पर इस प्रकार नहीं ! मैंने अपनी उन्नति का एक और मार्ग ढूँढ़ निकाला है । मनोहर की उस भूमि पर, जो नीची है, साग-भाजी उगवाने का विचार है । और उसमें एक कुआँ भी खुदवा लूँगा ।”

“उस भूमि में भाजी हो सकेगी क्या ?”

“होगी । क्यों न होगी ! पहले आलू लगवाऊँगा और हो सका तो चार पाँच साल में...।”

वह कहना चाहता था कि पक्का मकान बना लूँगा, परन्तु कहता कहता रुक गया । अपने मन का रहस्य मन में ही रहने दिया । पुजारी ने विस्मय से पूछा, “चार पाँच साल में क्या ?”

“भैया ! आप लोगों का ऋणी हूँ न । वह चुका दूँगा ।”

“बस, बस ! फिर वही बात ! गाँव में एक भी प्राणी ऐसा नहीं जो कह सके कि उसने तुम पर कोई ऐहसान किया है । उल्टे सभी यह मानते हैं कि वे तुम्हारे उपकारों के नीचे दबे हुये हैं । हाँ, सब लोग तो यही चाहते हैं कि तुम अपने भाई की भूमि भी पट्टे पर ले लो ।”

“यह मैं नहीं लूँगा । मुझको उसको लेने में कल्याण दिखाई नहीं देता ।”

३

जब गेहूँ बिक गया तो ला० बंसीधर के पास उसका पन्द्रह सौ रुपया जमा हो गया । उसमें से एक हजार के खर्च से, नीचे की भूमि में कुआँ खोदा गया । ज्यों ही उसे पोष की फसल से अवकाश मिला तो वह बाज़ार से गोभी के फूल, भिंडी और टमाटर के बीज ले आया और क्यारियाँ बना कर उन्हें बो दिया । अभी एक बीघा भूमि पर ही उसने सब्जियाँ लगाई थीं ।

दो मास के भीतर ही उसे इस नये आयोजन में सफलता मिलने लगी । इस खेत में काम करने के लिए उसने पाँच आदमी पृथक् लगा दिये थे । इन लोगों को पाँच रुपये मासिक, खाने को अन्न और सब्जी-भाजी देने की बात थी । जब माल बाज़ार में बिकने लगा तो डेढ़ सौ रुपये महीने की आय होने लगी । इससे

उत्साहित हो उसने और अधिक भूमि इस कुएँ के साथ लगा कर उसमें आलू बो दिये । इसमें तो उसे और भी आश्चर्यजनक लाभ हुआ । एक बीघा में दो सौ मन से ऊपर आलू हुए । अर्थात् एक बीघा में दो हजार रुपये के लगभग आय हो गई ।

रामू की भूमि को गाँव में से किसी ने भी पट्टे पर नहीं लिया । हाँ, शहर के कुछ लोगों ने मिल कर इसको ले लिया । उन्होंने मशीन से हल जोतने का प्रबन्ध कर दिया । हल जुत गया । बीज भी डल गया, पर सिंचाई और निराई की कठिनाई अब भी बनी रही । बगिया के कुएँ पर जब पम्प लगाया गया तो लोगों के कारोबार में बाधा आने लगी । पहले स्त्रियाँ नहाने-धोने वहाँ आया करती थीं । अब चौबीसों घंटे वहाँ इंजन के मिस्त्रियों का जमघट लगा रहता था । औरतें वहाँ कैसे आ सकती थीं ? यह बात हर रोज के विवाद का कारण बन गई ।

अन्त में वहाँ के निवासियों ने वहाँ कुण्ड बनवा दिया और उसके चारों ओर दीवार बनवा दी । सहस्रों रुपयों के व्यय से और ट्रैक्टर चलाने वाले तथा पम्प चलाने वाले मिस्त्रियों के वेतन पर भारी रकम व्यय कर फसल उत्पन्न की गई थी । उससे भी लाभ कुछ नहीं हुआ ।

फिर नगर के पाँच-छः आदमियों ने एक लिमिटेड कम्पनी बना कर खेती-बाड़ी करवाई । जब वर्ष के पीछे आय-व्यय का व्यौरा किया तो सब ले दे कर एक-सौ पचास रुपये ही बचे । इससे उसके मालिकों को बहुत क्रोध आया । उनका यह विचार था कि काम करने वाले मँनेजर इत्यादि फसल बेच कर खा गये हैं । इस कारण जाँच करने के लिए दो डाइरेक्टर नियुक्त किये गये । वे गाँव में आये और वहाँ पर सबसे अधिक सफल आदमी को ढूँढ़ते हुए मंगल के घर जा पहुँचे ।

मंगल का घर कच्चा था, इसके सामने एक बगिया थी। इस बगिया में फूलों के कई पेड़ थे। एक ओर आम के तीन पेड़ भी थे, दूसरी ओर दूब घास भी लगी थी। मकान के कुएँ में छोटा-सा रहट लगा था, जिसको एक बैल भी चला सकता था। वह चल रहा था। मकान की बगिया में मोहिनी दो वर्ष के बालक को उँगली से पकड़े खड़ी थी और दो औरतें वहाँ हाथ में खुरपी लिये काम कर रही थीं।

बगिया के चारों ओर बाँस की टट्टरी लगी थी जिस पर काशीफल की बेल चढ़ रही थी। दो अपरिचित पुरुषों को देख कर मोहिनी ने काम करने वाली औरतों में से एक को कहा, “बाहर जाकर पूछो तो, ये लोग क्या चाहते हैं?”

उसने जा कर उनसे पूछा, “क्या चाहते हैं आप?”

“चौधरी मंगलदास का मकान यही है क्या?”

“हाँ, यही है।”

“चौधरी घर पर हैं?”

“नहीं, वह... वह देखिये आ रहा है।” आते हुए मंगल को दिखा कर औरत भीतर आ गई। मोहिनी भीतर चली गई।

चौधरी अपने खेत की कुछ ताज़ी मूलियाँ, कुएँ के पानी से धुलवा कर उठाये हुए आ रहा था। उसके एक हाथ में पाँच-छः मूलियाँ और दूसरे हाथ में लाठी थी। वह छः फुट लम्बा, हट्ट-पुट्ट युवक इन दो नगर के लोगों को अपने मकान के दरवाज़े पर खड़े देख कर वेग से पग उठाता हुआ चला आया। जब वह वहाँ पहुँचा तो प्रश्नभरी दृष्टि में उनकी ओर देखता हुआ उनके सामने खड़ा हो गया। वे लोग विस्मय में उसको देखते रह गये। एक ने साहस बाँध कर पूछा, “चौधरी मंगल-दास आपका नाम है?”

“जी, कहिए क्या काम है ?”

“आप से एक विषय में बात करना चाहते हैं।”

“तो आ जाइए।” इतना कह कर उसने आवाज़ दी। ओ गुग्गी ! लो, यह चौधराइन को दे आओ और कहना कि अभी इन लोगों से निबट कर खाने के लिए आता हूँ।”

मकान के बाहिर एक तख्तपोश रखा था। उस पर उनको बैठा कर पूछने लगा, “बताइये साहब, क्या आज्ञा है ?”

“बात यह है कि रामू के खेत हमने पट्टे पर लिए हुए हैं।”

“यह मशीनें आप की ही चलती हैं ?”

“हाँ, हमने इस पर तीस हजार रुपया व्यय किया। इन तीस हजार रुपयों में से बीस हजार मशीनों पर लागत आई है। खिसाई पर एक हजार रुपये अलग लगे हैं। दस हजार रुपये वेतन इत्यादि में और खर्च हुए हैं। इस प्रकार बारह हजार रुपये खर्च होने पर भी फसल की कीमत बारह हजार एक सौ रुपये मिली है। थोड़े में यह कि हमें केवल एक सौ पचास रुपए का ही लाभ हुआ है। हमें पता लगा है कि आप यहाँ पर खेती से बहुत लाभ उठा रहे हैं। इस कारण हम आपसे इसका रहस्य पूछने को आए हैं।”

“मैं एक अनपढ़ व्यक्ति भला आपको क्या रहस्य बता सकूंगा। मैं तो उसी ढंग पर काम करता हूँ जिस पर मेरे बाप-दादा करते आये हैं।”

“फिर भी यदि हम आपसे कुछ पूछें तो आप उसका उत्तर देंगे क्या ?”

“क्यों न दूंगा ! इसमें छुपाने की क्या बात है !”

“आपने पिछले वर्ष कितने बीघा भूमि में गेहूँ बोया था ?”

“पन्द्रह बीघा में गेहूँ, और तीन बीघा में ज्वार-बाजरा इत्यादि।

दो बीघा नीची भूमि थी, वहाँ कुछ नहीं बो सका। इस वर्ष वहाँ कुआँ लगवा कर सब्जियाँ लगवाई हैं।”

“पन्द्रह बीघा में कितना गेहूँ हुआ है ?”

“चार सौ मन से ऊपर हुआ था।”

“तो प्रति बीघा में सत्ताईस मन के लगभग हुआ है। गेहूँ तो हमारे खेतों में अधिक हुआ है। हमारी औसत बत्तीस मन पड़ी है।”

“वह तो ठीक है ही। आपने विलायती खाद डाली थी। मैंने देसी खाद ही डलवाई थी। आपके हल बहुत बढ़िया हैं। गहरा खोदने हैं। हमारे देसी हल छै इंच से गहरे नहीं जाते।”

“इस पर भी हम कुछ नहीं बचा सके।”

“इसका कारण है। हम कृषक लोग भूमि के प्राणी हैं। भूमि सम्बन्धी सब रहस्यों को जानते हैं। हम यहाँ रहते हुए अपनी सब आवश्यकताओं को यहीं से पूरी कर लेते हैं। देखिये, मेरे खेतों में काप करने वाले मुझसे नक़द वेतन नहीं लेते, वे मेरी उपज में से हिस्सा बटाते हैं। चार सौ मन गेहूँ में से एक सौ मन मैंने काम करने वालों में बाँट दिया। भूसे में से वे अपने बैलों के लिए भूसा ले गये हैं। जब फसल बिक गई तो दम-दस रुपये प्रत्येक काम करने वाले को बाँट दिये। फिर हमारे कामे नगर में जाकर अपना धन व्यय नहीं करते। अन्यथा इतने रुपयों से उनका काम कंसे चले ?”

“आपके मशीनी हल चलाने वाले क्या वेतन लेते हैं ?”

“एक सौ बीस रुपये मासिक।”

“और कुएँ पर पम्प चलाने वाले ?”

“साठ रुपये मासिक।”

“और जमादार ?”

“एक सौ रुपया मासिक ।”

“खेत में काम करने वाले ?”

“प्रत्येक पचीस रुपये प्रति मास ?”

“आप कैसे कहते हैं कि हानि हुई है ?”

“हमको एक सौ पचास रुपये ही बचे हैं जो इतने परिश्रम और धन खर्च करने के लिए कुछ भी नहीं ।”

“इतने लोगों को जो वेतन आपने दिया है, यह क्या लाभ नहीं है ? देखिये ! मैं अपने खेत में काम करता हूँ, मेरी स्त्री भी काम करती है । जो दूसरे आदमी काम करते हैं उनमें से प्रत्येक आदमी की स्त्री, और उसके बाल बच्चे और वह स्वयं भी काम करता है । साथ ही इस उपज से हमारा निर्वाह भी होता है । जो कुछ हमें बचता है वह इस किराये के निर्वाह से ही तो बचता है ।

“जो काम करता है वही तो मजदूरी पाने का हकदार है । आपके खेतों में भी जिन्होंने काम किया है वे लाभ उठा गये हैं । आप मालिकों ने कुछ काम नहीं किया, और यदि आपको कुछ नहीं बचा तो यह स्वाभाविक बात है ।”

“रुपया लगाने वाले को कुछ नहीं मिजना चाहिये क्या ?”

“रुपया प्राणरहित वस्तु है । मनुष्य से मनुष्य उत्पन्न होता है, परन्तु रुपये को रुपया उत्पन्न करते किसी ने नहीं देखा । परिश्रम से फल मिलता है । रुपया स्वयं परिश्रम नहीं कर सकता ।”

“पर दूसरे व्यापारों में तो रुपये से रुपया बनता है ।”

“मुझको आप शहर वालों के व्यापार का तो ज्ञान नहीं । मैं तो यहाँ की बात कहता हूँ । देखिये, मेरे पास जो भूमि है वह पाँच वर्ष

परती पड़ी रही और इसने एक पैसे का अन्न पैदा नहीं किया। रुपया तो तब भी लगता था। अन्न तो मैंने और मेरे साथियों ने दिन-रात एक करके मेहनत से उत्पन्न किया है।”

“पर भूमि न होगी तो मेहनत कहाँ करोगे ?”

“ठीक है, भूमि है रामू की। उसको भूमि का भाग मिल गया। मशीन की घिसाई मशीन को मिल गई। रुपये का सूद बैंक को मिल गया। काम करने वालों को वेतन मिल गया। सरकार को भूमि-कर मिल गया। अब तुम लोगों को क्या मिले ? उसके लिए आपने किया ही क्या है ?”

वे शहर के पढ़े-लिखे लोग मंगल के सामने निरुत्तर हो कर, अपना-सा मुख ले कर चले गये। एक बात उनकी समझ में अवश्य आ गई; वह यह कि खेती-बाड़ी काम है, व्यापार नहीं है। जो करता है वह फल पाता है। इस काम में भारी वेतन भी नहीं मिल सकता।

४

रामू और उसकी माँ अब एक किराये के मकान में पृथक् रहते थे। उन्हें भूमि पट्टे पर देने से पाँच-सौ रुपया वार्षिक आय हुई थी। इसमें से अठ्ठाई सौ रुपया वार्षिक किराये पर मकान मिला था। अठ्ठाई सौ शेष रहे, उनसे वर्ष भर का खर्च कैसे चल सकता था ! इस कारण लाला नत्थूमल्ल के पास जमा हुए धन में से प्रति मास कुछ-न-कुछ निकाल कर खर्च किया जा रहा था।

इस प्रकार दो वर्ष व्यतीत हो गये। वह मक्खन, लस्सी और दूध, जो रामू और उसकी माँ को गाँव में मिलता था, वहाँ भाग्य में नहीं था। जो दो सेर दूध बाज़ार से लिया जाता था, उसमें आधा पानी मिला होता था। साथ ही दूध पर ही प्रतिमास बीस रुपये खर्च हो

जाते थे । आटा भी बाज़ार से ही आता था । दाल, चावल, सब्जी-भाजी, कपड़ा, नमक, मिर्च—अभिप्राय यह कि जीवन-निर्वाह की प्रत्येक वस्तु दाम पर मिलती थी । घर में बिजली थी, पानी का नल था, इनका भी दाम देना पड़ता था । इस प्रकार सब खर्च ही खर्च था । आय का कोई विशेष साधन नहीं था । परिणाम यह हो रहा था कि रामू और उसकी माँ दोनों दुबले होते जा रहे थे ।

एक आशा रामू की माँ को थी । वह यह कि रामू पढ़कर योग्य होगा तो रुपया कमाएगा । नगर की सफाई, नगर के पार्कों का सौन्दर्य, पक्की सड़कें, सुन्दर मकान, अजायबघर, चिड़ियाघर, गगन-भेदी कलसों वाले मन्दिर—ये सब वस्तुएं ऐसी थीं जो गाँव में नहीं थीं और न हो सकती थीं । परन्तु इन सबके सुख-स्वादन के लिए धन की आवश्यकता थी जो इसके पास था, पर दिन-प्रतिदिन कम हो रहा था । आशा यही थी कि रामू दो वर्ष में पढ़-लिखकर नौकरी कर सकेगा, तब सुख-सुविधा सफल हो जायगी ।

रामू सातवीं श्रेणी में अनुत्तीर्ण रहा, पर उसने घर में यह बात नहीं बताई । आस-पास के लड़के उत्तीर्ण होकर जब उछलते-कूदते अपने-अपने घर आए तो रामू की माँ रामू के भी इसी प्रकार आने की राह देखने लगी । जब वह सांयकाल को आया तो माँ ने उसे पूछा, “रामू, तुम भी पास हो क्या ?”

“हाँ माँ !” रामू ने निःसंकोच भाव से कहा । “मैं लड़कों के साथ घूमने चला गया था ।”

“तो अब तुम आठवीं श्रेणी में चढ़ गए हो ?”

“हाँ माँ”

“बेटा, जल्दी-जल्दी परीक्षाएं पास करो ! जो कुछ हमारे पास है

वह तो समाप्त होता जाता है । यदि तुम कुछ कमाओगे नहीं तो खाओगे कहाँ से ?”

“माँ, क्या गाँव वापिस नहीं लौट सकते ?”

“वहाँ तुम्हारी भूमि को जोते-बोयेगा कौन ?”

“भैया नहीं बोएंगे अब ?”

“उसकी डायन बीबी, तुम्हारी भाभी, उसे हमारा काम करने देगी क्या ?”

रामू चुप रह गया और माँ से कुछ रुपए लेकर किताबें खरीदने चला गया । पास तो हुआ नहीं था, इससे किताबें खरीदने की आवश्यकता नहीं थी । इतने रुपए जब हाथ में आ गए तो वह सिनेमा देखने को चला गया । वहाँ ‘अली बाबा चालीस चोर’ की फिल्म चल रही थी । रामू कई बार यह फिल्म देख चुका था, फिर भी समय टालने के लिए वहीं चला गया ।

चित्र देखने में उसकी रुचि नहीं हुई । वहाँ बैठ-बैठा मन में कल्पना करने लगा । वह भी अपने को कहीं पहाड़ की कन्दरा के सामने खड़ा ‘सिम...सिम’ कहते हुए विचारने लगा । चट्टान के मुख खोलने पर वहाँ पड़े हुए अतुल धन को पाने का स्वप्न देखने लगा ।

इस प्रकार की व्यर्थ की कल्पना करता हुआ और एक रुपया किताबों के हिसाब में से व्यय कर घर लौट आया । माँ ने उसको खाली हाथ लौटते देख कर पूछा, “किताबें नहीं लाए ?”

“आज भीड़ बहुत थी, कल खरीदूंगा ।”

अगला दिन भी गया और उससे अगला दिन भी । पुस्तकें खरीदने की रामू को आवश्यकता नहीं हुई । माँ का ध्यान भी चूक गया । घर से जो स्कूल की फीस ली थी वह भी स्कूल नहीं पहुँची । अन्त में उसने

स्कूल जाना ही छोड़ दिया । बस्ते में पुरानी किताबें भर ले जाता । घर से तो स्कूल की ओर ही जाता, परन्तु कुछ दूर जा कर वह मैदान में चला जाता और वहाँ पर बाजारू लड़कों के साथ गुल्ली-डंडा, कबड्डी, आँख-मिचौनी इत्यादि खेल खेलता रहता था ।

एक दिन जब वह खेल में मस्त था तो उसका बस्ता ही कोई और उठा कर ले गया । घर जा कर माँ से उसने बताया ही नहीं । अगले दिन जब जाने लगा तो माँ ने पूछा, “किताबें नहीं ले जा रहे रामू ?”

“माँ, आज से किताबें स्कूल में ही रखी जाती हैं ।”

माँ को कुछ आश्चर्य तो हुआ, परन्तु चुप कर रही ।

एक दिन जब वह खेल के मैदान में गया तो उसके साथी नहीं आए थे । वह अकेला बैठा-बैठा विचार करने लगा कि मेरा स्कूल में अनुपस्थित रहना एक दिन माँ को विदित हो जायगा । तब मुझे कितनी लज्जा उठानी पड़ेगी । बहिन क्या कहेगी ! जीजा जी पीटेंगे और सब लोग मुझे फटकारेंगे । इतना विचार कर वह अपने भविष्य के विषय में सोचने लगा—“अब पढ़ने में तो मेरा जी नहीं लगता । फिर भी कुछ काम तो करना ही चाहिये । क्या करूँ ?” जब ये प्रश्न उसके मन में उठे तो उनका स्वयं ही उत्तर देने लगा । “दुकानदारी तो मुझसे होगी नहीं । खेती-बाड़ी बहुत परिश्रम चाहती है । और उसके लिए फिर गाँव में जाकर रहना होगा । नौकरी ! उसके लिए मैं पढ़ा-लिखा नहीं । चपरासी की नौकरी का वेतन बहुत कम होगा । तो क्या करूँ ?” इस प्रश्न का उत्तर वह पा नहीं सका । आज वह अपने मन में उठ रहे विचारों के कारण उदास था । इससे उसका चित्त वहाँ से चल देने को हो गया । वह उठा और सड़कों पर घूमने लगा ।

आज उसके मन में भय समा गया था। वह समझता था कि मैंने महीनों ही माँ तथा बहिन को धोखा दिया है। इससे मैं पीटा जाऊँगा इसके साथ ही वह अपने बेकार जीवन से उचाट भी हो गया था। बिना काम के नित्य घूमते रहना, उसके लिए अब कठिन हो गया। एक धुन्धला सा चित्र, कि अब क्या करना चाहिए, उसके मन में बनता जाता था। यद्यपि इस चित्र की रेखाएँ अभी स्पष्ट नहीं हुई थी, तो भी वह यह समझ गया था कि मेरा अपना वर्तमान जीवन अधिक काल तक नहीं चल सकेगा।

सड़कों पर घूमता हुआ वह रेल के स्टेशन पर पहुँच गया। एक गाड़ी प्लेटफार्म पर खड़ी थी। उस गाड़ी को देख कर उसके मन में एक विचार उठा। वह सोच रहा था कि अब यहाँ से चल देना चाहिए। कहाँ ? जहाँ गाड़ी ले जाय। उसके पास टिकट के लिए भी दाम नहीं थे। हाथ जेब में डाल कर देखा तो पता चला कि केवल चार आने ही शेष हैं। इनसे क्या होगा ? इस पर भी उसका मन कह रहा था कि चलना चाहिये। वह प्लेटफार्म पर जाने के लिए स्टेशन की ड्योढ़ी में गया। वहाँ फाटक पर रेल के बावू को खड़े टिकट देखते हुए पा कर वह झिझक गया। इस बाधा ने उसकी इच्छारूपी अग्नि पर घी का काम किया। वह स्टेशन से बाहर निकल आया और रेल की सड़क के साथ-साथ चलता हुआ वहाँ तक चला गया जहाँ तक स्टेशन का जगला था। वहाँ से लाइन पर आ कर वह स्टेशन के भीतर घुस आया। गाड़ी अभी भी प्लेटफार्म पर खड़ी थी। वह बिना इस बात को जाने कि गाड़ी कहाँ जा रही है, उसमें चढ़ गया। वह थर्ड क्लास का डिब्बा था। डिब्बे में केवल तीन आदमी बैठे थे। वह भी एक कोने में बैठ गया।

गाड़ी चलने तक कई और लोग भी आ बैठे । गाड़ी चली तो उसे विचार आया कि यदि कोई टिकट देखने गाड़ी में आ गया तो क्या होगा । पास तो कुछ है नहीं, कहाँ से देगा ? तो क्या होगा ? इसका अनुमान लगाने में असमर्थ होने से उसने इस विषय में विचार ही छोड़ दिया ।

वह खिड़की के समीप बैठा था । जब गाड़ी चली तो सड़क के किनारे के खेत, पेड़ और तार के खम्भे वेग से पीछे की ओर भागते देख कर उसके मन को अचम्भा प्रतीत हुआ । वह जल्दी-जल्दी बदलते दृश्य देखने में इतना लीन हुआ कि वह अपने घर को, माँ को, बहिन को और अपनी जेब में केवल चार आनें को भी भूल गया ।

स्टेशन के पश्चात् स्टेशन आये और गाड़ी चलनी गई । रामू सो गया । रात हो गई तो उसकी नींद खुली । एक स्टेशन पर गाड़ी खड़ी हुई तो उसने दो आने खर्च कर कुछ खाया । उससे पेट नहीं भरा पर वह अपने सब पैसे खर्च करना नहीं चाहता था । पुनः गाड़ी चली और वह सो गया । दिन चढ़ने वाला था कि टिकट देखने वाला आ गया । उसने रामू को हिलाया तो उसकी नींद खुली । वह रेल के बाबू को अपने सामने खड़े, टिकट माँगते देख, आँखें मलता हुआ उसकी ओर देखने लगा । बाबू बोला, “टिकट निकालो ।”

रामू चुप बैठा रहा । बाबू ने फिर पूछा, “टिकट है ?”

रामू ने सिर हिला दिया । उसने पूछा, “कहाँ जा रहे हो ?”

रामू ने पुनः सिर हिला दिया ।

“क्या मतलब ?”

“मैं नहीं जानता ।”

“कहाँ से आये हो ?”

रामू अपने घर का पता बताना नहीं चाहता था। इससे चुप रहा। इस पर अगले स्टेशन पर टिकट बाबू ने रामू को गाड़ी से नीचे उतार लिया और वहाँ के स्टेशन मास्टर के हवाले कर दिया। लड़के को स्टेशन मास्टर ने अपने कमरे में चपरासी के पास बैठा दिया। जब गाड़ी चली गई तो स्टेशन-मास्टर ने उसके पास आ कर पूछा, “कहाँ से आये हो लड़के ?”

रामू ने जम्मू का नाम सुन रखा था। इस कारण उसने कह दिया, “जम्मू से।”

“बाप का क्या नाम है ?”

“मर गया है।”

“माँ, भाई बहिन, किसी का पता बताओ।”

“कोई नहीं है।”

“भूठ बोलते हो, यह रेशमी कुर्ता कहां से पहिना है ?”

“एक लाला की नौकरी करना था। उसके लड़के का कुर्ता है।”

“क्या नौकरी करते थे ?”

“बाजार से सब्जी-भाजी ला देता था। उसके बच्चों को खेलाता था।”

“फिर !”

“कल बीवी ने मुझे पीटा तो घर से निकल आया। कही और जगह नौकरी करने को चल पड़ा हूँ। जेब में दो आने हैं। और कुछ नहीं।”

“कहाँ जा रहे थे ?”

“जहाँ तक गाड़ी ले जाती। पास टिकट के पैसे नहीं हैं।”

स्टेशन मास्टर को रामू पर दया आ गई। उसने समझा, थोड़े से पैसों के लिए लड़के को पुलिस के हवाले करने से इसका जीवन नष्ट

हो जायगा। उसको स्वयं नौकर की आवश्यकता थी। इस कारण लड़के की आँखों में आँसू देखकर पूछा, “नौकरी करोगे ?”

रामू ने समझा बच गया। इससे उसने तुरन्त उत्तर दे दिया, “जी हाँ।”

“क्या काम करोगे ?”

“बरतन मलने के अतिरिक्त, सब कुछ।”

“भागोगे तो नहीं ?”

“पीटेंगे नहीं, तो नहीं भागूंगा।”

“चोरी तो नहीं करोगे ?”

“जी नहीं।”

“अच्छी बात, सो रहो। प्रातःकाल तुम्हें शहर भेज दूँगा। मैं जहाँ रहता हूँ वहाँ तुम्हें घर का काम-काज करना होगा। पाँच रुपये महीना और रोटी कपड़ा मिलेगा।”

रामू चुप रहा। वह मन में सोच रहा था कि पाँच रुपये तो कुछ नहीं। परन्तु वह कुछ कहना नहीं चाहता था। उस मुसीबत से बचने के लिए वह सब कुछ कर सकता था।

५

ऐमिनाबाद का स्टेशन मास्टर रामेश्वरदास गुजराँवाले में अपना परिवार रखे हुये था। यद्यपि उसको ऐमिनाबाद में क्वार्टर मिल सकता था, परन्तु उसका अपना निज का मकान गुजराँवाला में होने से, उसका परिवार वहाँ ही रहता था। रामू को रामेश्वरदास ने अपनी स्त्री के पास भेज दिया।

दो दिन में ही रामू नौकरी से उचाट हो गया। जिस लाड़-प्यार से वह अपनी माँ के पास रहता था वह यहाँ, कहाँ ! घर में तो अच्छा खाना खाने, अच्छे-अच्छे कपड़े पहनने और जब से वह फेल हुआ था, दिन-भर नगर में आवागामी करने के अतिरिक्त उसका कोई और काम ही न था। यहाँ प्रातःकाल उठने से लेकर सायंकाल तक कुछ न कुछ काम करना होता था। उसके नैतिक काम थे—प्रातः दूध लेने जाना, फिर अपने और अपनी मालकिन के कपड़े धोना-निचोड़ना, छाँटना और सुखाना। बच्चों के दस्ते उठा कर उनको स्कूल में पहुँचाना। वहाँ से लौट कर उसे सूखी रोटी मिलती और फिर दोपहर को बाज़ार से सौदा-मुल्क खरीदने को जाना पड़ता। सायंकाल को फिर बच्चों को स्कूल से ले आना पड़ता। इसके साथ सायंकाल के लिए सब्जी-भाजी खरीदने जाता। दोनों समय आग मुलगाना, रात को भोजन कर बिस्तर लगाना और कभी मालकिन के पाँव दबाने आदि काम भी करने होते।

रामू को गुजराँवाले में आये तीसरा दिन ही हुआ था कि वह इस नौकरी से ऊब गया। दोपहर के समय वह भोजन कर आराम कर रहा था कि रामेश्वरदास घर आ गया। वह सप्ताह में पूरे एक दिन की छुट्टी ले घर आ जाया करता था। अपने असिस्टेंट को डबल ड्यूटी दे कर वह गुजराँवाला में सारा दिन गुज़ारा करता था। घर आ कर उसने अपनी स्त्री से रामू के विषय में पूछा—“नौकर कैसा है?”

रामू आँखें मूँदे लेटा था। उसके कान में जब मालिक के ये शब्द पड़े तो वह आँखें मूँदे हुये पड़ा रहा और सचेत होकर सुनने लगा। मालकिन ने कहा—“मुझे तो वह किसी रईस का लड़का मालूम होता है। वह काम करना जानता ही नहीं। आग जलाने के समय रो पड़ता

है। सूखी रोटी बहुत कठिनाई से गले से नीचे उतारता है। मैं कहती हूँ कि उसके घर का पता कर उसको घर वापिस भेज देना चाहिये।’

“हमें क्या पड़ी है ?” रामेश्वरदाम ने उत्तर दिया। “इसको अच्छा खाने को दो। शेष रहा काम करना। सो कुछ दिनों में सीख जायेगा।”

“मुझको इसके माता-पिता पर दया आती है।”

“पर मैंने घर में धर्मार्थ धर्मशाला तो नहीं खोली हुई है। भूले-भटकों को घर पहुँचाने का काम मैंने अपने सिर पर तो लिया नहीं। उसको नौकरी करनी है तो करे, नहीं तो चला जाय। जब तक यहाँ रहेगा इसे वेतन और भोजन मिलता रहेगा।”

रामू ने करवट बदल कर पुनः सो जाने का बहाना किया। परन्तु रामेश्वरदास ने आवाज दी—“ओ रामू ! उठो रामू !”

रामू आँखें मलता हुआ उठ खड़ा हुआ। स्टेशन मास्टर ने कहा—
“एक गिलास पानी लाओ !”

रामू जब पानी लेने गया तो रामू के मालिक और मालकिन घूमने जाने को तैयार होने लगे। रामू पानी लाया। बाबू साहब ने पानी पिया और अपनी स्त्री के साथ घूमने चले गये। बच्चे स्कूल गये हुए थे। रामू घर की रखवाली के लिए रह गया।

एकान्त में बैठा वह अपनी अवस्था पर विचार करने लगा। उसे अपने किये पर पश्चात्ताप होने लगा। वह सोचने लगा कि क्या घर लौट जाऊँ ? अब उसके मन में उसके वियोग में माँ के रोने का विचार आया तो उसके भी आँसू टपक पड़े। वह उठा और मकान का दरवाजा

बाहर से बन्द कर निकल गया। बाज़ार में पहुँच कर उसने किसी से रेल के स्टेशन का पता किग़ा और उस ओर चल पड़ा।

स्टेशन पर पहुँच कर उसे भीतर जाने में वही कठिनाई आई जो उसे अपने नगर में आई थी। इस कठिनाई को भी उसने वैसे ही पार किया जैसे पहले किया था। और वह प्लेटफार्म पर पहुँच कर उस गाड़ी में, जो वहाँ उस समय खड़ी थी, सवार हो गया। उसको किसी से पूछने का ध्यान ही नहीं आया कि गाड़ी किधर जा रही है ?

उसके बैठते ही गाड़ी चल पड़ी और रामू दो घंटे में लाहौर जा पहुँचा। लाहौर के बड़े स्टेशन को देख कर वह चकित रह गया। कई गाड़ियाँ खड़ी थी। सैकड़ों लोग इधर से उधर और उधर से इधर आ जा-जा रहे थे। लाहौर पहुँच कर वह गाड़ी, जिसमें रामू था, खाली हो गई। विवश उसको वहीं उतरना पड़ा। उतर कर वह बाहर निकलने का उपाय सोचने लगा।

लाहौर का नाम उसने पहले ही सुना हुआ था। अब वहाँ पहुँच कर वह उसको देखने की अपनी इच्छा को रोक नहीं सका। उसकी जेब में अब दो आने भी नहीं थे, जो गुजराँवाला पहुँचने के समय थे। पिछले दिन वह उनसे मिठाई ले कर खा चुका था। कपड़े मँले हो चुके थे। इससे उसे अपनी अवस्था पर रोना आ रहा था। वह एक प्लेटफार्म से दूसरे पर और दूसरे से तीसरे पर धूमने लगा। जब भी वह बाहर निकलने लगता, फाटक पर टिकट देखने वाले बाबू को देख कर लौट जाता। इस समय उसको भूख भी लग आई थी। इस प्रकार परेशान हो वह एक बेंच पर बैठ गया।

बहुत देर तक वहाँ बैठा रहा और कुछ उपाय न पा कर वह मन

में टिकट बाबू के पास जा कर अपनी अवस्था बता कर उससे सहायता की याचना करने का विचार करने लगा। अभी वह यह करने का विचार बाँध ही रहा था कि प्लेटफार्म पर एक गाड़ी आ कर खड़ी हो गई। इस गाड़ी में से भी सहस्रों लोग उतरे थे। इस कारण वहाँ बहुत भीड़ हो गई थी। एक विचार उसके मन में यह भी आया कि उस गाड़ी में सवार हो जाय और जहाँ भी वह गाड़ी जाती है चला जाय। परन्तु भूख का प्रश्न इससे नहीं सुलझता था।

इस समय लोग गाड़ी से उतर कर अपना सामान कुलियों से उठवा बाहिर की ओर जाने लगे। भीड़ अधिक होने के कारण कन्धे से कन्धा भिड़ रहा था। रामू इस चल-चित्र को देख ही रहा था कि उसके पास से दो कुली बड़े-बड़े ट्रंक उठाये निकल गये। उनके पीछे एक युवा पति और उसके साथ गोदी में बच्चा लिये हुए उसकी पत्नी उसके आगे से निकली। औरत ने गोदी में बच्चे को कन्धे से लगाया और चलती रही। वह एक ही पग आगे बढ़ी होगी कि उसके आँचल से एक छोटी सी रुमाल में बँधी पोटली उसके पाँव के पास आ गिरी। रामू उस स्त्री की ओर देख रहा था। जब उसका ध्यान उस पोटली पर गया, तो उसने उसे उठा लिया। पहले तो उसके मन में आया कि उनको आवांज़ दे कर उसे दे दे, परन्तु उसी समय पीछे से पाँच-छै मुसाफिर अपनी गठरियाँ उठाये आ गये और उसको डाँटने लगे, “रास्ता क्यों रोके हो ? एक तरफ हट जाओ।”

रामू पोटली उठा कर एक ओर हटा और दूसरे मुसाफिर आ गये। इतने में वह युवक और उसकी स्त्री भी दूर निकल गये। और उसकी दृष्टि से ओझल हो गये।

रामू भी उसी ओर चल पड़ा, परन्तु भीड़ अधिक होने के कारण उस तक पहुँच नहीं सका। और वे फाटक से बाहिर निकल गये।

रामू भीड़ के साथ फाटक में से उनके पीछे-पीछे निकलना चाहता था, परन्तु निकल नहीं सका। इतने में एक परिवार के बहुत से लोग और बच्चे फाटक से निकलने को आये और रामू उनमें धकेला जाता हुआ बाहिर निकल गया। जब रामू से टिकट माँगा गया तो उसने हाथ से पीछे को संकेत किया। बाबू इस परिवार के बच्चों को गिनने लगा। इतने में रामू ड्योढ़ी से भी पार हो गया था। जब वह सड़क पर पहुँचा तो उसका ध्यान हाथ में आई पोटली की ओर गया। उसने एक बार फिर उस दम्पति को देखने का यत्न किया, पर वे दिखाई नहीं दिये।

अब रामू ने यह देखने का यत्न किया कि देखूँ उसमें बँधा क्या है। उसने बाहिर से दबा कर देखा। कुछ कागज़ और कुछ रुपये प्रतीत हुए। अब उसने उस गठरी को खोल डाला। उसमें आठ रुपये सात आने एक थे और तीन नोट दस-दस रुपये के और थे। रामू ने रुपये जेब में रख कर पहला काम यह किया कि एक हलवाई की दुकान पर पहुँच कर अपनी भूख मिटाई।

रामू रात बिताने की चिन्ता में था। जिस हलवाई की दुकान से उसने पूरियाँ खाई थीं वहाँ से पूछने पर उसे एक सराय का पता मिल गया। रामू वहाँ जा पहुँचा। सराय के ठेकेदार ने उसको सिर से पाँव तक देखा और उसके नैले कपड़ों को देख कर, पूछा, “क्या नाम है तुम्हारा?”

“रामदास।”

“कहाँ से आये हो?”

रामू ने फिर झूठ बोल दिया, “जम्मू से ।”

“कोई सामान नहीं है ?”

“नौकरी करने आया हूँ ।”

“रात का किराया ?”

“कितना चाहिए ?”

“कमरे का किराया तो आठ आने प्रति दिन होगा । खाट लोहे की एक आना और देना होगा ।”

रामू ने जेब में हाथ डाल कर एक रुपया निकाला और ठेकेदार के सामने रख दिया । जगह मिल गई । शेष रकम ताले की जमानत में रख ली गई । रामू जब कमरे में जा कर खाट पर लेटा तो अपनी अवस्था पर विचार करने लगा । उसने समझा कि ये अड़तीस रुपये जो उसे अनायास ही मिल गये हैं, वे परमात्मा ने दिये हैं । इससे वह परमात्मा का धन्यवाद करने लगा । उसके मन में यह विचार उठा कि गुजरांवाला में नौकरी की तो सूखी रोटी खाने को मिली और अब परमात्मा की कृपा से अनायास बढ़िया पूरी, साथ ही इतने रुपये मिले हैं । नौकरी से तो यही अच्छा है । वह भगवान से यही प्रार्थना करने लगा, क्या ही अच्छा हो, यदि इसी प्रकार मुझे कुछ मूर्ख लोग मिल जायें करें, जो रुपये मेरे सामने फेंक कर चज़ दिया करें और मेरा निर्वाह हो जायें करें ।

इन्हीं विचारों में वह सो गया और रात भर रुपये मिलने और फिर गुम हो जाने के स्वप्न देखता रहा ।

अगले दिन वह उठ कर शौचादि से निवृत्त हो कर बाज़ार से साबुन ले आया और पराय में लगे नल पर उसने कपड़े धोये, सुखाये और पहने । फिर बाज़ार को खाना खाने चला गया । सड़क पर घूमता

हुआ वह वही विचार कर रहा था कि भगवान अदि आज भी कोई अकल का अन्धा मिला दे जो उसके सामने रुपयों की पोटली फेंक जाय तो क्या ही अच्छा हो ।

दिन भर वह घूमता रहा, परन्तु वैसा अवसर उसे नहीं मिला । वह प्लेटफार्म-टिकट लेकर स्टेशन के भीतर भी गया और कई घण्टे उसी बेंच पर बैठा रहा जिस पर पिछले दिन बैठे उसे रुपये मिले थे । आज कोई ऐसी घटना नहीं घटी । रात हो जाने पर और भूख लग आने पर वह उठा और निराश बाहिर खाना खा कर सराय में जा पहुँचा । उसने ठेकेदार को कहा, 'अभी नौकरी नहीं मिली । इसलिए आज रात भी यहीं रहूँगा ।'

इतना कह कर उसने नौ आने ठेकेदार के सामने रख दिए और कमरे में जाकर लेट रहा ।

इस प्रकार दिन पर दिन व्यतीत होने लगे, रुपये कम होने लगे और उसकी घबराहट बढ़ने लगी । उसकी जेब में पाँच रुपये और कुछ आने शेष रह गये थे । वह फिर स्टेशन के प्लेटफार्म पर जा उसी बेंच की ओर जा रहा था कि उसे एक अच्छा प्रभावशाली मनुष्य सिर पर डोगराई पगड़ी बाँधे और पाँव में चमचमाता जूता पहिने चला आता दिखाई दिया । रामू ने उसकी ओर देखा तो उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि वह कोई विशेष व्यक्ति है । इस कारण वह उसको देखने को खड़ा हो गया । वह व्यक्ति जब रामू के पास से गुजरने लगा तो उसने अपनी अचकन की जेब से रुमाल निकाला और उससे नाक साफ करने लगा । रुमाल के साथ ही उसकी जेब से चमड़े का 'बटुवा' निकला और भूमि पर गिर पड़ा । रामू ने समझ लिया कि आज भगवान फिर दयालु हुआ है । जब वह व्यक्ति कुछ दूर निकल गया तो रामू ने भुक कर बटुवा उठाया और उस आदमी से उलटी ओर चल पड़ा । उस

दिन रामू ने यत्न नहीं किया कि उस आदमी के पीछे जाय और उसकी वस्तु वापिस करने का यत्न करे। एक काम बार बार करते रहने से अन्तरात्मा की आवाज़ सुनाई नहीं देती।

वह स्टेशन के दूसरे फाटक से बाहिर निकला और सराय में जा पहुँचा। उसके पहुँचने पर सराय के ठेकेदार ने पूछा, “क्यों जी रामदास, अभी नौकरी नहीं मिली?”

“नहीं। पर मैं सोच रहा हूँ कि कल ही लाहौर से किसी और शहर चला जाऊँ। शायद अमृतसर में काम बन जाय।”

रामू ने अगले दिन के नौ आने जमा किराये और अपने कमरे में चला गया। वहाँ जा कर दरवाज़ा बन्द कर उसने बटुवा खोला और देखा कि उसमें दस दस रुपये के बयालीस नोट और रेल का टिकट है। यह टिकट मियालकोट से बम्बई तक का था। एक खाने में कुछ रेज़-गारी भी रखी थी। रामू इस दिन की ऐसी प्राप्ति से बहुत प्रमत्न हुआ। उसके मन में दो विचार आये। एक तो यह कि उस टिकट से बम्बई चला जाऊँ और दूसरा यह कि रुपये को परमात्मा की देन समझ कर अपने पास रख लूँ।

एक घंटा भर वह मन में योजना बनाता रहा। फिर उसका विचार हुआ कि वह जाकर स्टेशन से मालूज तो करे कि बम्बई गाड़ी कितने बजे जाती है। इस कारण वह खाट से उठा और कमरे को ताला लगा कर सराय से बाहर जाने के लिए जब फाटक के समीप पहुँचा तो वहाँ उसी अचकन वाले व्यक्ति को दो पुलिस के सिपाहियों के साथ खड़ा देख कर घबरा गया। उसके मन में भय समा गया कि शायद पुलिस उसी को पकड़ने आई है। वह अपना मुख दूसरी ओर कर जब सराय से निकलने लगा तो उसने देखा कि उस आदमी को एक कान्स्टेबल पकड़े हुए है। इससे उसके मन का भय मिट गया और वह

यह जानने की इच्छा से उसके समीप खड़ा हो सुनने लगा कि मामला क्या है। वह काली अचकन वाला कह रहा था, “ठेकेदार साहब ! यह मेरी अंगूठी गिरवी रख लो। मैं कल तुम्हें दस रुपये दे दूंगा। आज इन्हें सात रुपये दस आने देकर मेरी जान छुड़ाओ।”

“आखिर बात क्या है ?”

“मैं सियालकोट से आ रहा हूँ। मेरा ‘पर्स’, जिसमें चार सौ से ऊपर रुपये थे और टिकट भी था, खो गया है और बिना टिकट सफर करने के अपराध में पकड़ लिया गया हूँ। मैंने इनसे कहा है कि बाजार में इसी अंगूठी को गिरवी रख कर टिकट का दाम चुका दूंगा। मेरी इच्छा इस सराय में ठहरने की है। इस कारण यह आपके पास ही गिरवी रखना चाहता हूँ।”

ठेकेदार ने अंगूठी को हाथ में पकड़ कर भली भाँति आँका। हथेली पर रख कर उसके तोल का अनुमान लगाया और फिर उसे संदूकची में रख कर सात रुपये दस आने निकाल कर पुलिस वालों को दे दिये। पुलिस वालों ने उसकी हथकड़ी खोल दी और रुपयों की रसीद दे कर सराय से चले गये।

रामू समझ गया कि मुझ पर सन्देह नहीं है। इससे उसको संतोष हुआ। वह इस संतोष से बाहर जाने वाला था कि सराय के ठेकेदार ने उस काली अचकन वाले से पूछा—

“क्या नाम है आपका ?”

“जगदीश चन्द्र।”

“यह रुपये कैसे लौटाओगे ?”

“मैं कल सराय के सामने जादू के खेल दिखाऊँगा और रुपये कमा कर तुम्हारा कर चुका दूँगा।”

“जादू के खेल ?” ठेकेदार ने पूछा।

“हाँ, तुम भी देखना, तुम्हें मुपत दिखाऊँगा।”

“तुम मदारी हो?”

“कुछ भी हूँ, मैं यह रुपया दे दूँगा। अभी मुझे सराय में ठहरने को एक कमरा और कुछ पैसे भोजन के लिए दो।”

ठेकेदार ने दस आने की रसीद काट कर जगदीशचन्द्र को दे दी और उसको कमरा दिखा दिया। रामू बाहर चला गया।

६

रामू पूछ आया था कि बम्बई को गाड़ी रात के आठ बजे छूटती है। काली अचकन वाले को उसी सराय में ठहरा देख कर वह रुपए का भेद खुल जाने की आशंका करने लगा था। इस कारण उसने निश्चय कर लिया कि रात की गाड़ी से ही चल दूँगा।

सात बजे सायं वह सराय से स्टेशन पर जा पहुँचा। बम्बई का टिकट सैकिड क्लास का था। रामू को इस बात का ज्ञान नहीं था कि सैकिड क्लास और थर्ड क्लास में क्या अन्तर होता है। उसने देखा कि उसका टिकट हरे रंग का है और अन्य लोगों के पास, जो उसके डिब्बे में बैठे थे, पीले रंग का टिकट है। उसने अपने मन में सोचा कि शायद बम्बई का टिकट इसी रंग का होता होगा।

अमृतसर के स्टेशन पर टिकट चैक करने वाला बाबू जब आया तो उसके पास सैकिड का टिकट देख कर आश्चर्य से उसका मुख देखने लगा। उसने पूछा—“कहाँ से आ रहे हो?”

रामू को स्मरण आया कि उसका टिकट सियालकोट से है। इससे उसने कह दिया—“सियालकीट से।”

“किसके बेटे हो?”

“चौधरी दुर्गादास के।”

“टिकट कहाँ से मिला है तुमको ?”

इस पर रामू घबराया । वह इस प्रश्न का कारण नहीं जान सका । इतना तो समझ गया कि इस टिकट में कुछ लिखा हो सकता है जिस कारण उससे यह प्रश्न किया जा रहा है । उसको एक बात सूझी । उसने कहा — “मेरे जीजा जी सियालकोट में आढ़त की दुकान करते हैं । उन्होंने मुझको भेजा है । यह टिकट उन्होंने ले दिया है ।”

“अरे भई ! यह टिकट दूसरे दर्जे का है । यहाँ क्यों बैठे हो ? चलो मैं तुम्हें वहाँ बैठा आऊँ ।”

इस प्रकार झूठ बोलकर वह यहाँ भी बच गया और फिर दूसरे दर्जे में जाकर नरम गद्देदार कौच पर बैठ आनन्द अनुभव करने लगा । उसको जब पता लगा कि फँसता-फँसता मैं थोड़ा सा झूठ बोलने से बच गया हूँ तो इससे उसका साहस और बढ़ गया ।

डिब्बे में तीन और यात्री थे । एक मारवाड़ी था, जो अमृतसर से ही सवार हुआ था । उसको रामू की मूरत-शकल आकर्षक प्रतीत हुई । इससे वह बातचीत करने लगा । रामू को अपने आपको एक आढ़ती का साला बनने का लाभ प्रतीत हो चुका था । इससे उसने उस मारवाड़ी को अपना परिचय ‘शंकरदास का साला’ कहकर दिया । उसने ला० नत्थूमल्ल का परिचय भी दिया और अपने को उनकी दुकान पर काम करने वाला बताया ।

इससे मारवाड़ी यात्री और भी प्रभावित हुआ । मार्ग भर दोनों में अच्छी घनिष्टता रही । जब गाड़ी बम्बई के समीप पहुँची तो दिन चढ़ आया था । सब यात्री शौचादि से निवृत्त हो चाय पान कर रहे थे । इस समय रामू पेशाबघर गया । जब वहाँ वह हाथ धोने लगा तो उसने देखा कि उस मारवाड़ी की सोने की घड़ी सामने शैल्फ पर रखी है । सोने की घड़ी के साथ सोने की चेन भी है ।

रामू ने एक क्षण तक मन में सोचा और फिर घड़ी उठा कर जेब में रख ली। बाहिर निकल कर वह खिड़की के बाहिर मुँह निकाल कर बैठ गया। उसका हृदय धक्-धक् कर रहा था और मुँह को मीच कर अपने भय को भीतर ही भीतर छुपाने का यत्न कर रहा था।

जब गाड़ी बम्बई स्टेशन पर पहुँची तो चाय के बर्तन उठाने के लिये बैरा लोग कमरे में घुस आये और उस डिब्बे के यात्री उन्हें मूल्य देने लगे। इतने में रामू, जिसके पास एक चादर के अतिरिक्त और कुछ नहीं था, तुरन्त डिब्बे से निकला और बाहिर चला गया।

बाहिर निकल कर रामू विक्टोरिया गाड़ी में बैठकर कोचवान से कहने लगा कि किसी सराय में ले चलो।

“सराय यहाँ से तीन मील के फासले पर है। दो रुपये लगेंगे।” रामू वहाँ से दूर चला जाना चाहता था, इस कारण दो रुपये देने को तैयार हो गया। गाड़ी चल पड़ी। जब गाड़ी स्टेशन से दूर निकल गई तो उसकी धड़कन बन्द हुई और उसने समझ लिया कि नच गया हूँ।

बाइकुला में एक सराय थी, जहाँ पठान, जो लोगों को रुपया उधार दे कर उनका खून चूसते हैं, अथवा जहाँ नगर के जेबकतरे और दूसरे इसी प्रकार के कारोबार करने वाले लोग रहते थे। गाड़ीवान ने रामू को वहाँ पहुँचा दिया और जब रामू सराय वाले से वहाँ ठहरने की बातचीत कर रहा था तो गाड़ीवान ने आँख के संकेत से बता दिया कि कोई अनजान आदमी है।

सराय वाले ने संकेत पा कर रामू को कमरा दे दिया। रामू अपने कमरे में चारपाई पर बैठ अपने मन में अपने भाग्य की सराहना करने लगा। उसके सामने घड़ी को बेच कर रुपया नकद कर लेने का प्रश्न

उपस्थित हुआ। कहीं वह मारवाड़ी यात्री, जो बहुत धनवान् प्रतीत होता था, उसको चलते-फिरते देख ले तो अवश्य वह उसे पुलिस के हवाले कर देगा। और फिर उसकी तलाशी में घड़ी निकल आई तो वह कैद हो जायगा। इस भय से वह घड़ी बेच डालने की योजना बनाने लगा।

रामू को घर से निकले बीस दिन के लगभग हुए थे। परन्तु उसकी बुद्धि का विकास वर्षों के अनुभव से जितना हो सकता है उससे अधिक हो गया था। वह छल-कपट करना सीख रहा था। उसे यह व्यवसाय बहुत अच्छा प्रतीत हो रहा था। इसमें न मेहनत करनी पड़ती थी और न खर्च, और रुपये हाथों-हाथ मिल जाते थे।

रामू आराम कर जब कमरे से निकला तो सराय का ठेकेदार उसकी ओर ध्यानपूर्वक देखने लगा। रामू ने सोचा क्यों न इसी ठेकेदार से घड़ी बेचने का उपाय का पता पा लूँ। इससे वह ठेकेदार के पास आ कहने लगा, “आपसे एक काम है।”

“क्या ?”

रामू ने फिर झूठ बोल दिया, “मेरे सब कपड़े रेल में चोरी हो गये हैं। इसलिए मैं चाहता हूँ कि अपनी घड़ी बेचकर कपड़े बनवा लूँ। आप बताइये कि इसे कहाँ बेच सकता हूँ।”

ठेकेदार एक क्षण के लिये चकित रह गया। उसने जान लिया कि यह चोरी का माल है। इस पर भी अपने विश्वास की परख करने के लिये पूछने लगा, “कहाँ खरीदी थी यह ?”

“लाहौर में।”

“कितने की ?”

“दो सौ रुपये की।”

ठेकेदार समझ गया कि चोरी का माल है। साथ ही यह भी जान गया कि यह अभी नौसिखिया है। इस कारण उसने उसकी अनुभवहीनता से लाभ उठाने के लिए कह दिया, “देखो छोकरे ! मैं जानता हूँ कि यह घड़ी चोरी की है। और तुम इसका असली दाम नहीं जानते। इस पर भी मैं इसके बेचने में तुम्हारी सहायता कर सकता हूँ। पर मेरा हिस्सा भी तो मिलना चाहिए। देखो, इस घड़ी का असली दाम पैंसठ रुपये है और इस सोने की चूड़ी का दाम पचपन रुपया। मैं तुम्हें इसका दाम पचास रुपया दे सकता हूँ। तुम्हारी मर्जी हो तो दे दो।”

रामू बहुत घबराया। वास्तव में वह इस वस्तु के दाम को नहीं जानता था। इस पर भी उसने कुछ बात बनाने के लिए कह दिया, “आप कैसे कहते हैं कि यह माल चोरी का है ?”

ठेकेदार हँस पड़ा। उसने रामू के कंधे पर हाथ रख कर कहा, “देखो, मैं बताता हूँ। यह घड़ी तुम्हारी नहीं है। तुम्हारे हाथ से बड़ी है। तुम इसका दाम नहीं जानते और फिर तुम इसको रखना भी नहीं जानते। हाथ पर बाँध कर दिखाओ तो मानूँ।”

रामू निरुत्तर हो गया। वह वहाँ से उठ कर जाना चाहता था कि ठेकेदार उसकी मन की बात समझ गया और मुस्करा कर बोला, “देखो छोकरे ! मैं तुम्हारी सहायता कर दूँगा। यदि इसको बाज़ार में बेचने जाओगे तो पकड़ लिए जाओगे। यहाँ तुम्हारा काम मैं कर देता हूँ।”

“पर दादा ! यह दाम कम है।” रामू ने उठते हुए कहा।

“ठहरो सुनो ! मैं भी तो इसे चोरबाज़ार में ही बेचूँगा। इसका दाम एक सौ बीस रुपया है। यह सौ रुपए मैं बिकेगी। इसमें से पच्चास

रुपए मुझे मिलेंगे और पच्चीस चोरबाज़ार वाला लेगा ।”

रामू ने कहा, “मुझे रुपए की भारी आवश्यकता है, इससे इतने ही मैं ले लूँगा ।”

इस प्रकार रामू ने अपना पहना चोरी का माल बेचा ।

रामू ने अपने कपड़े बनवाए, विस्तर मोल लिया और आराम से रहने लगा । अभी उसको सराय में टिके पाँच दिन भी नहीं हुए थे कि उसको एक और लड़के से परिचय प्राप्त हुआ । वह अपने कमरे में बैठा हुआ अपने सौभाग्य पर प्रसन्न हो रहा था कि उसके पड़ोस के कमरे में रहने वाला एक लड़का उसके कमरे में दरवाज़े पर आ खड़ा हुआ और पूछने लगा—“क्या मैं आ सकता हूँ ?”

“हाँ !”

रामू उसकी ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देख रहा था कि वह लड़का उसकी खाट के सामने खड़े स्टून पर बैठ गया । बैठते हुए उसने कहा—“मैं कई दिनों से तुम्हें अकेले आते और जाते देख रहा हूँ । अकेले रहते क्या तुम्हारा दिल नहीं धबकाता ?”

“धबराने की कौन सी बात है ! दिन भर तो मैं सैर करता हूँ । रात को थक कर आराम करता हूँ ।”

“बस सैर ही करते हो, और कुछ नहीं ?”

“और क्या ?”

“कोई और घड़ी नहीं मिली कहीं से ?”

“क्या मतलब ?”

“देखो दोस्त, मैं भी यही काम करता हूँ ।”

“क्या काम करते हो ?”

“क्यों बनते हो भाई ? देखो, मैं तुम्हें बताता हूँ ।” इतना कह कर उसने अपनी जेब से एक पर्स निकाला । वह बहुत बढ़िया चमड़े का बना था । उस लड़के ने उस पर्स को खोल कर दिखाया । उसमें सौ-सौ रुपये के बीस नोट रखे थे । रामू इतना रुपया देख कर चकित रह गया । उसने पूछा—“कहाँ से पाया है यह तुमने ?”

“वही से, जहाँ से तुमने सोने की घड़ी पाई थी ।”

रामू ललचाई आँखों से उसके रुपयों की ओर देखता रहा । उस की दृष्टि के अभिप्राय को वह लड़का समझ गया और कहने लगा—“मैं समझता हूँ कि तुम अभी नौसिखिये हो, इसी कारण पाँच दिन में तुम और कुछ भी नहीं ला सके ।”

रामू अब उस लड़के की बातों को समझ गया । वह जान गया कि यह लड़का चोर है और मुझे भी चोर समझता है । अपनी बात का उसे पता लग जाने से और उसकी बात को स्वयं समझ कर रामू की भिन्नता खुल गई । उसने बताया—“भाई, मैंने चोरी नहीं की थी । मैंने तो वह घड़ी एक स्थान पर पड़ी पाई थी, उठा कर ले आया था ।”

“तो कितने दिन तक उस पर जियोगे ?”

“जब तक चलेगी चताऊँगा । जब रुपये समाप्त हो जायेंगे तब विचार करने का अवसर होगा ।”

“ऊँ ! हूँ ! ऐसे नहीं बनेगा । तुम कल मेरे साथ चलना । मैं तुम्हें ऐसी तरकीब सिखाऊँगा जिससे प्रतिदिन नये से नया माल हथिया सकोगे ।”

रामू चुप रहा । उस लड़के ने कहना जारी रखी, “मेरा नाम शरण है । मैं किसका बेटा हूँ, नहीं जानता । मेरी माँ बम्बई की सड़कों पर भीख माँगा करती थी और रात को पटरी पर सोया करती थी । जब

मैंने होश सम्भाली तो अपने आप को उसकी उंगली पकड़ कर भीख माँगते पाया। जब मैं और कुछ बढ़ा हुआ तो मेरी माँ के एक लड़की उत्पन्न हुई। उस समय शायद मैं सात साल का था। कुछ समय बाद मेरी माँ मेरे पालन-पोषण का भार न उठा सकी, तब से मैं स्वतन्त्र घूमता रहा हूँ।

मुझे भीख माँगने से चोरी करना अधिक पसंद है। अब दो वर्षों से इसी व्यवसाय से पेट भरता हूँ। आज जो घटना हुई उससे मुझे बहुत ही आनन्द आया। मैं बंगाल बैंक के बाहर खड़ा था कि एक पारसी मज्जन उससे बाहर निकला। उसके कोट के भीतर के पाकेट में यह पर्स पड़ी थी, और बाहर से पर्स उभरा हुआ दिखाई दे रहा था। मैंने उसे उड़ाना चाहा। मैं उसके पास से गुजरा और उस्तरे के फल से उसके कोट को चीर गया। इससे भीतर की जेब भी कट गई और यह पर्स मेरे हाथ आ गई। घर आ कर देखा तो चित्त प्रसन्न हो गया।”

“मैं तो इतने साहस का काम नहीं कर सकता।”

“ठीक है, पर सीखने से कर सकोगे।”

“कैसे ?”

“देखो, मैं तुम्हारे सामने ही करके दिखता हूँ।” इतना कह कर शरण ने किवाड़ पर रामू का एक मँला सा कपड़ा लटका दिया और स्वयं कमरे के बाहर से भीतर को आया। कपड़े के पास से गुजरते-गुजरते वह दाहिना हाथ बाएँ हाथ की बगल में ले गया। इसमें एक क्षण से भी कम समय लगा होगा। वह लटके हुए कपड़े से छूता निकल गया। वहाँ से वह एक पग आगे बढ़ा ही था कि कपड़ा चिर गया और आधा कट कर नीचे भूमि पर गिर गया। शरण हँस पड़ा और रामू को बड़ा आश्चर्य हुआ और कपड़े के फटने का शोक भी।

शरण ने रामू के नेत्रों में शोक की आभा देखी तो बोल उठा, “वाह ! एक कपड़े के चीरे जाने पर इतना शोक करते हो ? मैंने तो यह करतब अपने बीसियों कपड़ों की आहुति देकर सीखा है। आओ इधर, मैं तुम्हें भी यह करतब सिखाता हूँ।”

कुछ समय के परिश्रम से रामू ने यह करतब सीख लिया। इसके अभ्यास में उसे कई वस्तुएँ नष्ट करनी पड़ी। उस दिन से शरण उसका दिली दोस्त बन गया। एक सायं वे दोनों नए कपड़े पहन कर बाज़ार गए। उन्होंने एक बड़िया होटल में खाना खाया और फिर समुद्र-तट, जुहू पर घूमने चले गए। शरण यद्यपि रामू की आयु का ही था, तो भी वह मनुष्य की निकृष्ट प्रकृतियों को रामू से अधिक समझता था। उसने किनारे पर एक सींचे वाले को नारियल का पानी बेचते देख कर कहा, “यह आदमी उसी मकान में रहता था, जिसके सामने की पटरी पर मैं और माँ रात को सोते थे। यह, जब से मैंने होश सम्भाली है, नारियल का पानी और अनानास का शर्बत ही बेचता है। परन्तु मैंने एक वर्ष के इस व्यवसाय से इतना पाया है कि मैं इस जैसी दस दुकानों की मालिकी कर सकता हूँ। यह बेचारा वैसा ही है जैसा मैं इसको दस वर्ष पूर्व देखता था।”

रामू ने कहा, “पर यह काम व्यवसाय तो नहीं कह जा सकता। यह तो चोरी है। यदि हम पकड़े गए तो ?”

“तब क्या होगा ? कैदखाने में भी तो खाने को मिलेगा ही।”

“मेरी राय है कि दो-चार चोरियाँ और कर लें और उनसे जो रुपया इकट्ठा हो उससे कोई धन्धा करें।”

“तो क्या यह काम धन्धा नहीं है ?”

“यह चोरी है।”

“तुम पागल हो। सब लोग चोरी करते हैं। हम भी करते हैं। अन्तर केवल यह है कि हम लोगों के काम को लोग चोरी कहते हैं और अपनी चोरी को व्यवसाय।”

रामू को यह युक्ति समझ नहीं आई थी। इससे प्रबल युक्ति वह स्वादिष्ट भोजन था और वह ठण्डी समुद्र की वायु थी जिसका वह आनन्द ले रहा था। शरण कह रहा था, “ये धनी आदमी जो एक-दो घण्टे भर कारखाने अथवा दफ्तर में काम कर मोटरों पर घूमते फिरते हैं, यह क्या चोरी नहीं करते? मेरा दिल भी चाहता है कि मैं भी इन की तरह मोटर में सवार हो कर जहाँ चाहूँ घूम सकूँ।”

बात करते-करते शरण चुप कर गया। रामू उसका मुख देखने लगा। शरण ने कहा, “आज तो किसी भाग्यवान का मुख देखा है। उस दिन दो हजार मिला था। आज वह देखो, एक और शिकार चला जाता है। इससे अधिक प्राप्ति की सम्भावना है।”

रामू ने उधर देखा, जिधर शरण संकेत कर रहा था। एक मारवाड़ी पुरुष पगड़ी पहिने अपनी स्त्री के साथ समुद्र तट पर टहल रहा था। स्त्री के हाथ में एक बड़ा-सा पर्स पकड़ा था। यह पर्स उसने अपने कंधों पर पीछे को लटकाया हुआ था। रामू ने कहा “औरतों के पर्स में ओठों और गालों पर लगाने की सुर्खी और बाल सँवारने की कंधी के अतिरिक्त और क्या होगा? उसे चुरा कर क्या करोगे?”

“अभी, जब मैं तुमसे बात कर रहा था तो यह आईस क्रीम वाले से आईस क्रीम ले रही थी। तब इसने नोटों का एक बंडल पर्स में से निकाला था और उनमें से एक तुड़वा कर उसका दाम चुकाया था। वही बंडल उसकी पीठ पर लटकते पर्स में पड़ा है।”

“होंगे रुपये-रुपये के नोट।”

“नहीं दोस्त ! दस-दस के नोट हैं ।”

“पर उन्हें हथियाओगे कैसे ?”

“देखो, मैं तुम्हें यह बीस रुपये देता हूँ । तुम एक काम करो । यह काम होशियारी का है । जब वे नोट मेरे हाथ में आ जायें तो तुम भाग खड़े होना । सब का ध्यान तुम्हारी ओर चला जायगा । तुम कोशिश करना टैंक्सी से सवार होकर भागने की । शायद तुम पकड़े जाओ । परन्तु तुममे कुछ वसूल नहीं होगा । जब तक वे लोग अपनी गलती मानेंगे तब तक मग्रा सुरक्षित स्थान पर पहुँच जायगा । तुम अपनी जेब में इन बीस रुपयों से अधिक मत रखो ।”

रामू ने कहा, “मेरे पास तो दो रुपये कुछ आने हैं ।”

“कोई बात नहीं । चलो चलें ।” बातें करते-करते ये उन दम्पति के पीछे जा पहुँचे । शरण रामू को छोड़ उनके पास से गुज़रा ही था कि क्षण में बटुए में से नोटों का बंडल बाहिर निकल उसके हाथ में आ गया । दूसरे ही क्षण शरण और उस दम्पति में अन्तर पड़ गया था । एकाएक उस स्त्री को पर्स कुछ हलका प्रतीत हुआ । उसने पर्स को कंधे से उतार कर देखा तो उसको नीचे से कटा हुआ पाया । ध्यान से देखा तो नोट नहीं हैं । उसने घूम कर देखना चाहा कि नोट कहाँ गिरे हैं । इस समय रामू भाग खड़ा हुआ । मारवाड़ी और उसकी स्त्री ‘चोर-चोर’ का शोर मचाते हुये उसके पीछे भागे । अन्य बीसियों लोग भी; जो सैर करने के लिए वहाँ आये हुए थे, रामू के पीछे भाग खड़े हुए । रामू टैंक्सी-स्टैंड की ओर भागा था और वहाँ पहुँच कर वह रुक गया । इस समय वह मारवाड़ी और उसकी स्त्री हाँफते हुए वहाँ आ पहुँचे । मारवाड़ी की स्त्री ने कहा, “इसकी तलासी लो ।”

रामू ने पूछा, “क्या ! मैंने क्या किया है ?”

“तुमने रुपये चुराये हैं।”

“रुपये ! तागल हो गए हो क्या ! मैं चोर नहीं हूँ।” यह कह वह अकड़ कर खड़ा हो गया। लोगों ने उसकी जेबें टटोलीं। उसकी जेब से बाईस रुपये और कुछ आने निकले। “कितने रुपये है बाई जी आप के ?” तलाशी लेने वाले ने पूछा।

उस औरत ने पर्स देख कर कहा, “छैं सौ रुपये से अधिक थे।”

“इसके पास नहीं हैं।”

“तो इसने फँक दिये होंगे।”

“मैं कहता हूँ कि मैंने लिए ही नहीं।”

“तो तुम भागें क्यों थे ?”

“मुझे घर जाना याद आ गया था। मैं बस से जल्दी जाने के लिए भागा था। जब मैंने सुना कि लोग मुझे चोर-चोर कह रहे हैं तो ठहर गया।”

सैर करने वालों ने रामू की भली-भाँति तलाशी ली और जब वह रुपया उसके पास नहीं निकला तो उसे छोड़ दिया। रामू टैंक्सी पर सवार हो नगर की ओर चला गया।

८

उस दिन रामू और शरण की साभेसारी हो गई। जितना जो कोई चुरा कर लाता दोनों बाँट लेते। इकट्ठे खाते, सैर करते, सिनेमा-थियेटर इकट्ठे देखते। इस प्रकार रामू का जीवन सुखम हो गया। रामू और शरण रहते पृथक्-पृथक् थे। शरण सराय में रहता था, रामू एक होटल में। दोनों प्रातः और सायं मिलते थे, कभी-कभी इकट्ठे भी मिलकर कार्य करते थे, कभी-कभी पृथक्-पृथक्। शरण को शराब पीने

का चस्का लग गया था परन्तु रामू अभी इस से बचा हुआ था। पंख उस के भी उाने लो थे। हराम का सया बुराइयों में ही जाता है।

रामू ने होटन में बता रखा था कि मैं सियालकोट के आड़तियों का गुमाश्ता हूँ, और उनकी ही ओर से प्रतिदिन सट्टे के बाज़ार में व्यापार के लिये जाना पड़ता है। इस प्रकार कार्य चल रहा था। उसके पास दो हजार के लगभग रुपया भी एकत्रित हो चुका था। कभी-कभी उसे यह विचार भी आता था कि इन रुपयों को लेकर सियालकोट वापिस चला जाऊँ और वह कोई छोटी-मोटी दुकान खोल कर अपना और माँ का पेट पालूँ, परन्तु इस विचार से कि कुछ और रुपया भी एकत्रित हो जाय तो अच्छा होगा, वह वहीं टिका हुआ था।

एक दिन शरण उसके पास आया और होटल का कमरा बन्द कर उसे बताने लगा, “हमने एक बड़ा भारी जोखों और साहस का काम करने का निश्चय किया है। मैं चाहता हूँ कि तुम भी इसमें सम्मिलित हो जाओ।”

“क्या काम है ?”

“एक लाख दस हजार रुपये छोटे-छोटे नोटों में रेल के बैक में जमा होने के लिये आ रहे हैं। रुपयों के बक्स विक्टोरिया स्टेशन पर उतरेगे। सरकारी ट्रक उन्हें लेने जायगा। हम इस रुपये को उड़ाना चाहते हैं।”

“कैसे होगा यह ?”

“हम पाँच आदमी कुलियों के कपड़े पहन कर स्टेशन पर जायेंगे। वहाँ का कुलियों का जमादार हमें खजाना उठाने में लगा देगा। हम बक्स उठा कर स्टेशन के बाहिर ला कर उस ट्रक में रख देंगे जो हमारे

आदमी लेकर आयेंगे। सरकारी ट्रक के देर से पहुँचने का प्रबन्ध कर दिया गया है। हमारा ट्रक हमारे नकली सिपाहियों की देख-रेख में बैंक जाने के स्थान यहाँ से तीस मील के अन्तर पर चला जायगा। वहाँ हम लोग भी पहुँच जायेंगे और वहाँ रुपया बाँटा जायगा।”

“योजना तो बहुत सुन्दर है।”

“यह सफल होगी। उस्ताद पीरू सब प्रबन्ध कर रहे हैं। रेलवे के पाँच कुलियों में तुम भी एक होगे। ट्रक के खाना हो जाने पर हम रेल में सवार होकर निश्चित स्थान पर जा पहुँचेंगे।”

बात तय हो गई। रामू और शरण हॉटल से निकले और रेल के स्टेशन पर कुलियों के वर्दी पहनने के कमरे में चले गये। इनके तीन अन्य साथी पहले ही वहाँ उपस्थित थे। जमादार ने पाँचों कुलियों को वर्दी दी और नम्बर दिये। इन लोगों ने वर्दियाँ पहन ली और स्टेशन में प्लेटफार्म पर जा उपस्थित हुए। गाड़ी आई और रेल के बाबू की आज्ञा ले जमादार ने शरण इत्यादि को माल उतारने पर लगा दिया। खजाना उतरा और दो कान्स्टेबलों की देख-रेख में स्टेशन के बाहर खड़े ट्रक में रख दिया गया। पुलिस के सिपाही भी ट्रक पर सवार होने लगे तो ड्राइवर ने कहा, “जरा हट कर खड़े हो जाओ। ट्रक को पीछे हटा कर सीधा कर रहा हूँ।” कान्स्टेबल और बाबू एक ओर हो गये। ट्रक पीछे होने के स्थान पर आगे को भाग खड़ा हुआ। ट्रक पर तीन कान्स्टेबल भी थे जो ट्रक के साथ आये थे। इससे बाहर से आई पुलिस मुँह देखती रह गई।

बाबू, जिसके पास खजाना जमा कराने का चालान था, कुछ धबराया। एक दो मिनट तक वह ट्रक के घूम कर आने की प्रतीक्षा

करता रहा। परन्तु उसको लौट कर आता न देख वह स्टेशन मास्टर के कमरे में गया और इस घटना की रिपोर्ट के लिए टेलीफोन करने की स्वीकृति माँगने लगा।

स्टेशन मास्टर भी इस समाचार को पा कर घबराया। उसने बैंक में टेलीफोन कर दिया। वहाँ से समाचार आया कि ट्रक तो अभी बैंक के बाहिर ही खड़ा है। उसके पहिये में पक्कर हो गया है, और अब ठीक हो रहा है। इस समाचार से बाबू के पाँव तले की मिट्टी खिसक गई। उसने पुलिस में टेलीफोन किया। वहाँ पर भी सारी घटना को समझाने में कई मिनट लग गये। जब थानेदार ने बात समझ ली, तो उसने कहा कि मैं पुलिस को तो ट्रक के पीछे भेजता हूँ, परन्तु इसी समय रेल का बाबू वहाँ आ कर पूरी रिपोर्ट दर्ज कराये।

रेलबाबू विक्टोरिया गाड़ी में बैठ कर पुलिस-थाने में जा पहुँचा। रामू और उसके साथी कुलियों के कमरे में चले गये। वहाँ पर उन्होंने बर्दियाँ उतारीं और स्टेशन में आ कर सबर्बन ट्रेन में सवार हो थाना स्टेशन पर जा पहुँचे। वहाँ शरण सब साथियों को एक मकान पर ले गया। वहाँ संकेत देने पर वे सब भीतर जा पहुँचे। उस मकान के कमरे में वह सँदूक, जिसमें कोष था, खोला जा चुका था और उसमें से निकले रुपये गिने जा रहे थे। हजार हजार रुपयों की गड्डियाँ बनी हुई थीं। कुछ फुटकल रुपये भी निकले। इस प्रकार एक लाख दस हजार पाँच सौ बीस रुपये छः आने निकले।

एक अघेड़ आयु का व्यक्ति, जिसकी एक आँख नहीं थी, वह भी इन पाँच अन्य व्यक्तियों में बैठा था। इनमें से एक ट्रक का ड्राइवर था। चार वे थे जो पुलिस कान्स्टेबलों के कपड़े पहने ट्रक पर सवार थे। उस कारण व्यक्ति-ने कहा, “ये लड़के तो आ गए हैं, परन्तु कुलियों

का जमादार और बैक के तीन बाबू और भी उपस्थित होने चाहियें। वे आयेगे अथवा नहीं ?”

इसी समय जमादार भी आ गया। उसके साथ एक गुजराती ढंग के कपड़े पहने पुरुष भी था। जमादार ने आते ही कहा, “उस्ताद ! बैक के बाबूओं का प्रतिनिधि यह है। उनका भाग इनको दे दिया जाय। बाबू तो आ नहीं सकेंगे। बैक में जाँच-पड़ताल आरम्भ हो गई है।”

वह कारणा व्यक्त, जिसका नाम पीरू था, एक क्षण तक विस्मय में उस गुजराती महाशय की ओर देखता रहा। पश्चात् जमादार से पूछने लगा, “इसने सकेत दिया है ?”

“हाँ, उस्ताद।”

“अच्छी बात। इन रुपयों में तीन बाबूओं का भाग पैंतान्नीस हजार रुपये, पन्द्रह हजार प्रत्येक का। ट्रक और उसमें जाने वाले चारों का, जिन्होंने कान्स्टेबलों का रूप बनाया था, दस-दस हजार। पाँच ट्रक वाले को। शेष रह गये ये पाँच कुली का काम करने वाले और मैं। इन पाँचों को तीन तीन हजार और मुझे दो हजार। यताओ किसी को आपत्ति है ?” पीरू उस्ताद की यही चतुराई थी कि उसके बटवारे पर किसी को आपत्ति नहीं होती थी। सब प्रसन्न थे। रुपया बाँट दिया गया और पीरू ने सब को आज्ञा दी कि रुपया छुपा कर ले जायें और एक-एक करके तुरन्त निम्नल जायें।

सब लोग चले गये। रामू की बारी सब से अन्त में थी। मकान पीरू का अपना था। इस समय चौकीदार ने आकर कहा, “दो आदमी बाहर खड़े हैं। प्रतीत होता है कि खुफिया पुलिस के हैं।”

पीरू ने एक क्षण तक विचार किया और रामू के कंधे पर हाथ रख कर कहा, “देखो छोकरे ! मैं तुम पर विश्वास करता हूँ। तुम मेरे भाग के दो हजार भी ले जाओ और मकान की छत से कूद कर दूसरे मकान से निकल जाओ। यह चौकीदार तुम्हें मकान का मार्ग दिखा देगा। कल मैं तुम से अपना रुपया लेने को मिलूँगा। दे दोगे न ?”

“उस्ताद ! निश्चिन्त रहो। अपने आदमियों से बेइमानी नहीं की जा सकती।”

रामू को मकान की छत पर से कूदा कर दूसरे मकान में ले जाया गया और वहाँ से उसको बाहिर की गली में निकाल दिया गया। यह मकान दूसरी गली में खुलता था।

रामू गली से निकल स्टेशन की ओर चल पड़ा। जब वह प्लेटफार्म पर पहुँचा तो उसको कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि कोई आदमी उससे कुछ अन्तर पर उसके आगे पीछे जा-आ रहा है और उसकी उस पर टेढ़ी दृष्टि टिकी हुई है। इससे रामू को सन्देह हो गया। परन्तु यह विचार कर कि बम्बई में जा कर मैं लोगों की भीड़ में विलीन हो जाऊँगा, शान्त था।

जब गाड़ी में बैठा तो वही आदमी उसके पास आ कर बैठ गया। अबी भी रामू समझता था कि वह इसको धोखा दे कर निकल सकेगा। इससे शान्त था। उसका पीछा करने वाला भी चुपचाप बिना किसी से बात किये उसके समीप बैठा था। अगले स्टेशन पर दो और आदमी भी भीतर आ गये और रामू के दूसरी ओर बैठ गये। विक्टोरिया-टर्मिनस पर रामू उतरा तो वे भी उसके आगे पीछे चल रहे थे। रामू ने समझ लिया कि आज मैं पकड़ा जाऊँगा। परन्तु अब तक वह यही विचार कर रहा था कि अभी इनको सन्देह-मात्र है, अन्यथा

मुझे कभी का पकड़ लेते। मालूम होता है ये लोग मेरे निवास-स्थान तक जाना चाहते हैं। इसी कारण मेरा पीछा कर रहे हैं। रामू अब यह विचार कर रहा था कि इनको अपने होटल में पहुँचाने से पूर्व ही धोखा दे कर भाग जाना चाहिए। अब उसने यह निश्चय कर लिया था कि यदि अब बच गया तो तुरन्त सियालकोट लौट जाऊँगा, और वहाँ इतने रूप्यों से अच्छा-खासा धन्धा कर सकूँगा।

रामू स्टेशन से निकल कर पैदल ही चल पड़ा। अपने होटल में जाने के स्थान पर वह ताज होटल को गया। वहाँ एक-दो बार चाय पीने को वह जा चुका था। इस कारण वह निधड़क बढ़ा चला गया तो उसका पीछा करने वाले बाहर ही ठहर गए, परन्तु फिर कुछ विचार कर उसके पीछे हो लिये। रामू होटल के रिसैप्शन रूम में गया। वहाँ दो सौ से ऊपर लोग बैठ अल्पाहार कर रहे थे। रामू उनमें से गुजरता हुआ उस हाल को पार कर दूसरे दरवाजे से बाहिर निकल गया। पीछा करने वाले इस कमरे में प्रवेश करने से भिन्न रह रहे थे। उनका विचार था कि रामू वहाँ बैठ कर चाय पियेगा। जब वह बैठ जायगा तब विचार कर लेंगे कि अब क्या कर करना चाहिए। उसको इस हाल से सामने के बरामदे से बाहिर जाते देख वे लोग, हाल का चक्कर काट, उसको सामने से घेरने के विचार से भाग खड़े हुए।

रामू इसी बात की आशा करता था। इस कारण समय बिताने के विचार से वह रिसैप्शन रूम के सामने के कमरे में चला गया। कमरा खाली था। वह उसके बैडरूम में चला गया। वहाँ वह पलंग के नीचे घुस कर फर्श पर सपाट लेट गया।

रामू का पीछा करने वाले जब तक हाल का चक्कर काट कर पिछले बरामदे में आए तब तक रामू सामने के कमरे में घुस कर छुप

चुका था। वे लोग उसे होटल में डधर-डधर ढूँढ़ने लगे। उन पर होटल के एक कर्मचारी को सन्देह हो गया। वह उन्हें होटल के मैनेजर के पास ले गया। वहाँ उनमें से एक ने बताया, “मैं खुफिया पुलिस का इन्स्पेक्टर हूँ। एक चोर का पीछा करते-करते हम इस होटल में पहुँचे हैं और उसको ढूँढ़ रहे हैं।”

“उसके वारण्ट हैं?”

“नहीं!”

“तो होटल से बाहर निकल जाओ। होटल के बाहिर पहरा दो। जब वह निकलेगा उसे पकड़ लेना।”

इन्स्पेक्टर कुछ कहना चाहता था, परन्तु मैनेजर एक अंग्रेज़ था, उसने कहा, “गेट आऊट।”

पुलिस वाले दुम दबा कर बाहिर हो गए। बाहिर जा कर उन्होंने होटल की देखभाल आरम्भ कर दी।

रामू को पलंग के नीचे पड़े-पड़े यह निश्चय हो गया था कि मेरे लिए अब बाहर जाना असम्भव है। मेरी जेब में जो पाँच हजार रुपये हैं क्या उन्हें यहाँ फेंक कर चल दूँ। तब भी यदि पकड़ा गया और इस कमरे के निवासी ने रुपया मैनेजर को दे दिया तो भी यह साबित हो जायगा कि रुपये मैंने फेंके हैं। इसलिए इस बार बच नहीं सकता।

इससे उसको अपने चोरी के कार्य पर पश्चात्ताप होने लगा। परन्तु इस समय पश्चात्ताप से कुछ बनता न देख कर वह घबराता रहा।

कमरे का मालिक चिरकाल तक कमरे में नहीं आया। अन्धेरा हो गया था। उसको लेटे-लेटे नींद आ गई और वहीं पलंग के नीचे सो

गया। बहुत रात गए उसकी नींद खुली। कमरे में प्रकाश हो रहा था। जब उसको अपनी परिस्थिति का पूर्ण स्मरण हुआ, तो वह पुनः विचार करने लगा कि अब क्या करूँ। उठने भुक्तुर देखा कि बाहर कोई है अथवा नहीं। एक आदमी आइने के सामने खड़ा कपड़े बदल रहा था। रामू को एक बात सूझी। उसने जेब से रुखा निकाल कर पलंग के नीचे ही डेर कर दिया और पलंग के नीचे से बाहर निकल आया। ज्यों ही वह बाहर हो खड़ा हुआ कि कपड़े उतारने वाले ने उसको आइने में देख कर घूम कर देखा। रामू उसको पहचान गया। यह वही काली अचकन वाला व्यक्ति था, जिसका पर्स लाहौर स्टेशन पर गिरा था और वह उठा कर बम्बई चला आया था। उसे, उस आदमी के पुलिस की कैद में अपनी अंगूठी सराय के ठेकेदार के पास बेचने का चित्र भी स्मरण हो आया। इससे रामू के मुख पर मुस्कराहट आ गई। उस आदमी ने पूछा, “तुम कौन हो ?”

“एक भाग्यहीन !”

“क्या मतलब ?”

“पुलिस से भागा हुआ चोर !”

वह आदमी बहुत ध्यान से रामू के मुख पर देखता रहा। रामू भयभीत सामने खड़ा था। वह विचार कर रहा था कि शायद वह पुलिस को बुला लेगा और उनके हवाले कर देगा। इससे पूर्व कि वह कोई ऐसी बात करे, रामू ने कहा, “मैं चाहता हूँ कि आप मेरी रक्षा करें और पुलिस के हवाले न करें।”

“क्यों ?”

“मैंने कोई भारी अपराध नहीं किया।”

वह आदमी मुस्कराया और पलंग पर बैठ कर रामू की आँखों में देखता हुआ पूछने लगा, “तुमने हल्का अपराध कौन-सा किया है ?”

भारी और हल्के की मीमांसा न कर सकने पर वह कुछ मुस्कराया । इस पर भी कुछ कहने के लिए वह बोला, “जब मैं दूसरों को देखता हूँ तो मेरा जी भी करता है कि उनकी तरह मैं भी मोटरों और हवाई जहाजों पर चढ़ूँ, स्वायट भोजन खाऊँ, और आराम देने वाले मुलायम और कमानीदार गद्दों पर बैठूँ । पर यह सब बिना रुपए के हो नहीं सकता । इस कारण मैं जहाँ कहीं रुपया पड़ा पाता हूँ उसे उठा लेता हूँ ।”

यह तर्क उसे शरण ने समझाया था ।

अब उसने वह वैसा का वैसा सुना दिया, “संसार में सब लोग ऐसा करते हैं । आधी दुनियाँ दूसरी आधी दुनियाँ की कमाई खाती है । यह इस कारण कि दूसरी आधी अपने कमाए धन का प्रयोग करना नहीं जानती और पहली आधी उनकी असावधानता का लाभ उठा कर उसे अपने प्रयोग में लाती है ।”

कमरे का मालिक उम लडके से, जिमके अभी मूँछ भी नहीं फूटी थी, इस प्रकार की युक्ति सुन कर चकित रह गया । उसने कहा, “देखो मैं तुम्हें बचा दूँगा । परन्तु तुम यह बताओ कि तुमने किया क्या है, जो पुलिस तुम्हें पकड़ना चाहती है ?”

रामू ने कोप लूटने की सारी घटना जैसी की तैसी सुना दी ।

“तुमने कोप लूट कर अच्छा काम नहीं किया ।”

“मैंने आपसे अपने मन की बात बता दी है कि मेरा मन भी सुख भोगना चाहता है । उसके लिए रुपया बटोरता रहता हूँ ।”

“पर बिना मेहनत किये रुपया नहीं मिलता ।”

“मेहनत तो की है। आज प्रातः आठ बजे से ही भाग-दौड़ कर रहा हूँ।”

“मेहनत से मेरा अभिप्राय योग्यता उत्पन्न करने के लिए है।”

“मैं नहीं जानता कि कैसे योग्यता उत्पन्न करूँ।”

“तुम्हारे पिता कहाँ रहते हैं?”

“वे नहीं हैं। उनका देहान्त हो चुका है।”

“तुम कुछ पढ़े-लिखे हो?”

“सातवीं श्रेणी तक। मैं गरीब हूँ। मैं और पढ़ नहीं सका।”

इस बात ने उस आदमी को गम्भीर विचार में डाल दिया। वह विचार करने लगा कि इस लड़के ने कितने गम्भीर सत्व को कितने सरल शब्दों में रख दिया है। उसका मन उड़ता चाहता है पर उसके पंख नहीं हैं।

उस आदमी को चुप देख कर रामू को आश्वासन हो रहा था कि शायद मैं बच जाऊँ। इससे विनीत भाव से कहने लगा, “मैंने आपको पहले भी देखा है।”

“कहाँ?”

“लाहौर में। सराय के ठेकेदार से रुपये उधार लेते हुए।”

“मेरी चोरी हो गई थी।”

“मैं जानता हूँ। चोरी नहीं हुई थी। लाहौर स्टेशन पर आपकी जेब में से पर्स गिर गया था। उसमें एक सियालकोट से बम्बई का दूसरे दर्जे का टिकट भी था।”

“तुम यह सब कैसे जानते हो?”

“उस पर्स में चार सौ बीस रुपए भी थे। वह पर्स मैंने भूमि पर पड़ा पाया था।”

“तुमने उसे मुझे वापिस क्यों वहीं किया ?”

“मुझे भी रुपयों की आवश्यकता थी, मुझे मिल गए और मैंने ले लिए ।”

“यह तो बहुत बुरा किया है । तुमने बिना परिश्रम किए दूसरे के रुपए ले लिए । यह तो पाप है ।”

“पाप-पुण्य मैं नहीं जानता । मुझे रुपए कमाने का दूसरा ढंग भी तो नहीं आता । यदि मैं ऐसा न करता तो भूखा मर गया होता ।”

“परन्तु आज तुमने दिन-दिहाड़े डाका डाला है । यह किस प्रकार भूला जा सकता है !”

इस पर रामू ने फिर शरण की बात दुहरा दी । उसने कहा, “बंबई के महल सट्टेबाजों की सम्पत्ति है । दूसरी ओर मेहनत-मजदूरी करने वाले यहाँ निर्धनता का जीवन व्यतीत कर रहे हैं । यह कहीं का पुण्य कर्म है । सट्टेबाजी तो डाका डालने से कम नहीं कही जा सकती ।”

“देखो ! इस बात को तुम इतनी छोटी आयु में और इतनी कम शिक्षा से समझ नहीं सकते । यदि मेरा कहा मानो तो मैं तुमको इस विपत्ति से छुड़ा सकता हूँ । और फिर तुमको धनी बनाने का मार्ग भी बता सकता हूँ ।”

“क्यों न मानूँगा । मुझे आप पर विश्वास है । जो आदमी आज से दो-तीन मास पूर्व मदारी के खेल दिखा कर रोटी कमाना चाहता था, आज ऐसी सम्पत्ति का स्वामी है । यह चमत्कार देख कर मैं समझता हूँ कि यदि आप चाहेंगे तो मुझे भी धन-सम्पन्न कर देंगे ।”

वह आदमी मुस्कराया और कुछ देर तक रामू को, जो अब भी

उसके सामने खड़ा था, देखकर कहने लगा, “अच्छी बात है। मैं तुम्हारी सहायता कर सकता हूँ। इस पर भी बनना अथवा बिगड़ना तुम्हारे ही अधीन है। तुम इस समय से मेरे शिष्य हो। मेरा नाम जगदीश चन्द्र है, परन्तु तुम मुझे गुरुदेव कह कर पुकारोगे। मैं जो कुछ भी कहूँ तुम्हें मानना पड़ेगा। हाँ, तुम्हारा नाम क्या है?”

“रामदास, परन्तु मुझको लोग रामू कह कर बुलाते हैं। मुझे यह भला लगता है।”

“अच्छा रामू ! तुम्हारा चुराया रुपया कहाँ है?”

रामू पलंग के नीचे घुस कर नोटों का बंडल उठा लाया। जगदीश चन्द्र ने पूछा, “कितना है?”

“इसमें दो सहस्र तो उस्ताद पीरू का है, और तीन सहस्र मेरा है।”

“कल तक यह सब का सब तुम्हारे पास न रहना चाहिए। इस रुपए को अपने पास रख कर तुम मेरे शिष्य नहीं बन सकते।”

“क्यों?”

“यह रुपया दूसरे की इच्छा के विरुद्ध लिया गया है। इससे यह पाप का धन है। इसको पास रखने से मन मलिन होगा, और मलिन मन से तुम मेरी शिक्षा ग्रहण न कर सकोगे।”

“तो यह रुपया कहाँ फेंकूँ?”

“मैं बताऊँगा। अभी तुम इसे वहाँ, उम मेज़ की दराज में, रख दो।”

रामू ने रुपया जत्र रख दिया तो जगदीश ने कहा, “तुम बाहिर कमरे में सो रहो। प्रातःकाल उठने और स्नान करने से पूर्व तुम्हारे लिए दूसरे कपड़े बन जाएंगे। उनमें तुम्हें कोई पहिचान नहीं सकेगा।”

रामू को यह देख कर अचम्भा हुआ कि प्रातः उठने के साथ ही उसके लिए नए कपड़े तैयार रखे थे। वह जब शौचादि से निवृत्त हो कर तैयार हुआ, तो नौकरी की वरदी उसके लिए तैयार थी। उसने गुरु देव से पूछा, “यह कब बने हैं ? मेरा नाप तो लिया गया नहीं, कहीं बहुत खुले या तंग न हों।”

“पहिन न देखो !”

रामू ने कपड़े पहने। वह नौकरों के ढंग के अवश्य थे, तो भी साफ-सुथरे और उसके नाप के थे। वह अभी तो भयभीत था, नहीं जानता था कि क्या वह निश्चय से बच सकेगा अथवा नहीं। उसने कपड़े पहन कर पूछा, “गुरुदेव, मुझे काम क्या करना होगा ?”

“कुछ दिन तक, जब तक पढ़ना-लिखना सीख नहीं लोगे, मेरे नौकर ही रहोगे। पश्चात् यदि तुमने पढ़ने में चित्त लगाया तो मेरे शिष्य कहलाओगे। इस बात में तीन मास से अधिक नहीं लगेंगे। उस के बाद मेरी विद्या सीखने में दस वर्ष लगेंगे। तब तुम मेरे साथी बन जाओगे। न नौकर रहोगे न शिष्य।

“अब तुम तैयार हो कर खड़े हो जाओ। जब तक मैं प्रातः का अल्पाहार नहीं कर लेता, तुम यही मेरी कुर्सी के पीछे खड़े रहना। पश्चात् तुम्हें भी मेरे जैसा ही खाना मिलेगा। तुम मेरे साथ घूमने जाओगे। जब घूमने को निकलूं तो तुम्हें भी मेरे साथ रहना होगा और आज रात को यहाँ सामने के बड़े हाल में, जब मैं अपना करतब दिखाऊं तो मेरे कहने के अनुसार कार्य करते रहना होगा।”

“बाहर खड़े पुलिस वाले मुझे पकड़ने का यत्न न करेंगे ?”

“वे तो तुम्हें पहचान भी न सकेंगे।”

“इन कपड़ों के कारण ?”

“नहीं। इसमें कुछ अन्य रहस्य है। तुम डरो नहीं। दुनियाँ में बहुत सी बातें ऐसी होती हैं जो मनुष्य समझ नहीं सकता।

“यह बात समझ लो कि किसी बात को प्राप्त करने के लिए यत्न करने की आवश्यकता होती है और साथ ही वह यत्न ठीक और उचित ढंग से होना चाहिये।

“मान लो, तुमने अपने प्रयत्न से एक मकान बनाया है और उसमें सुख-सुविधा की पूरी सामग्री उपस्थापित की है। यदि कोई दूसरा व्यक्ति, जो तुम से अधिक बलशाली अथवा चतुर है, तुम्हें उसमें निकाल कर स्वयं उसका उपभोग करे, तो क्या तुम्हें इससे दुःख न होगा ? इसी प्रकार तुम्हारे अनुचित व्यवहार से भी दूसरों को काट होना संभव है। दूसरों को दुःख देना पाप है।”

जब होटल के बैरे ब्रेकफास्ट ले आये तो रामू जगदीश चन्द्र के कहने के अनुसार उसकी कुर्सी के पीछे खड़ा हो गया। जगदीशचन्द्र को छुरी काँटे से खाते देख कर वह मन में विस्मय करता रहा। उसने किसी को इस प्रकार खाते देखा न था।

रामू के लिए उसने खाने के लिए आर्डर दिया। रामू ने भी खाना खाया। ऐसा खाना उसने अब तक किसी होटल में न खाया था।

इसके पश्चात् जगदीश चन्द्र ने चोरी के रुपयों का एक पोस्टल पार्सल बनाया और उस पर बँगाल बैंक का पता लिख दिया। पश्चात् उसने कमरे में लगे टेलीफोन से अपने लिए एक टैक्सी मँगवाई और रामू से वह बंडल उठवा कर होटल के बाहर निकल आया। टैक्सी वहाँ खड़ी थी।

होटल के दरवाजे पर तीन चार खुफिया पुलिस के लोग खड़े थे। रामू ने उनमें से एक को पहचान लिया। वही पहले दिन उसका थाने-स्टेशन से होटल तक पीछा करता रहा था। रामू को डर था कहीं वह उसे अब पहचान न ले। परन्तु उन लोगों ने एक बार जगदीश चन्द्र की ओर देखा और खड़े रहे। रामू की ओर तो किसी ने देखा तक भी नहीं।

इससे रामू के मन में साहस बँधता गया। दोनों टैक्सी में बैठे और जगदीश चन्द्र ने टैक्सी वाले को जुहू चलने की आज्ञा दी। टैक्सी चल पड़ी और बम्बई के बाजारों में से भीड़ को चीरती हुई निकल गई। जुहू में समुद्र तट के समीप टैक्सी ले गये। टैक्सी को वहाँ खड़ा किया और दोनों समुद्र तट पर घूमने के लिए उतर पड़े।

इस समय भी कुछ लोग, स्त्री-पुरुष, समुद्र में स्नान कर रहे थे। रामू ने वह नोटों का पार्सल अब भी हाथ में लिया हुआ था। चलते हुए रामू ने पूछा—“गुरुदेव, यह पुलिस-इन्स्पेक्टर, जो कल बीस मील से मेरा पीछा कर रहा था, आज मुझे पहचान ही नहीं सका।”

“मैंने कहा तो था तुमको।”

“यह तो चमत्कार की बात है। अब इस बंडल को क्या करेंगे?”

“इसको मैं, जिसका है, उसी के पास डाक द्वारा भेज दूँगा।”

“इससे हमारा पता भी तो निकल सकता है।”

“जिसकी जो वस्तु है उसके पास उसे पहुँच जानी ही चाहिए। हम पकड़े जायें या नहीं, यह पृथक् बात है।”

कुछ समय तक टहल कर वे जुहू के डाकखाने में गए। वहाँ पार्सल डाक द्वारा भेज दिया गया। उस पर अपना कोई नकली पता दिया गया।

वहाँ से लौट कर आये तो होटल के दरवाज़ पर अब भी बहुत मे पुलिस के कर्मचारी खड़े थे । परन्तु ये दोनों उनके समीप से निकल गए और किसी ने उनकी ओर देखा तक नहीं ।

होटल की ड्योढ़ी में एक छुपा हुआ पोस्टर लगा था, जिसमें लिखा था, “कश्मीर के विख्यात हिप्पटिस्ट, श्री जगदीश चन्द्र, आज सायं, नौ बजे, ताज़ होटल रिसैप्शन हाल में, अपने हिप्पटिज़्म के करतब दिखायेंगे ।

ये करतब ऐसे होंगे जो दुनियाँ भर में अभी तक किसी ने न देखे हैं न दिखाए हैं ।

श्री जगदीश चन्द्र जी इन्हें तिब्बत के एक लामा से सीख कर आए हैं ।

पूर्वीय विद्या के चमत्कार देखने वालों को निमंत्रण दिया जाता है कि वे आ कर इन्हें देखें ।

प्रवेशशुल्क—केवल दो रुपया । प्रवेशपत्र होटल के मैनेजर से मिल सकता है ।”

जगदीश चन्द्र ने विज्ञापन लगा देखा और सन्तोष अनुभव किया । अन्य कई लोग भी उसको पढ़ रहे थे । कुछ लोग प्रवेशपत्र खरीद भी रहे थे ।

जगदीशचन्द्र वहाँ से अपने कमरे में चला गया । रामू के विस्मय का ठिकाना नहीं रहा जब उसने देखा कि खुफिया पुलिस का इन्स्पेक्टर भी उसके समीप खड़ा विज्ञापन पढ़ रहा था । फिर भी वह उसको पहचान नहीं रहा था । कमरे में पहुँच कर उसने पूछा, “गुरुदेव ! इस विज्ञापन में आपका नाम लिखा था क्या ?”

रामू उसके नाम से अधिक नहीं पढ़ सका था । जगदीशचन्द्र ने

उनको विज्ञापन का अर्थ समझाया । वह समझ गया तो उत्सुकता से उसका मुख देखने लगा ।

मध्याह्न के भोजन के पश्चात् होटल का मैनेजर जगदीश को मिलने आया । जगदीश ने मैनेजर को रामू का परिचय दिया—“मैने अपनी सेवा के लिए इस लड़के को नीकर रखा हुआ है । इसका भोजन भी होटल में ही होगा ।”

मैनेजर कहने लगा—“हमारे हाल में एक सहस्र से अधिक दर्शकों के बैठने का प्रबन्ध नहीं है । और एक सहस्र टिकट बिक चुके हैं ।”

“तो एक दिन और यह ‘शो’ बढ़ा दिया जाय ।”

“मैं यही चाहता था । दूयरे ‘शो’ का कल के लिए विज्ञापन दूँ या किसी और दिन के लिए ।”

“मेरा विचार तो कल के लिए है ।”

“एक बात है । यदि आज दर्शकों ने आपके प्रदर्शन को पसन्द न किया, तो कल बहुत भड़ हागी ।”

“कल के टिकट यागिस कर दिए जायेंगे । और टिकट छत्रवाने और बाँटने की लागत मैं दूँगा ।”

“आपको अपनी सफलता पर बहुत भरोसा है ?”

“हाँ ! आप देखिएगा कि कई दिन लगातार प्रदर्शन होने पर भी आपका हाल खाली नहीं रहेगा ।”

“तब तो प्रवेश शुल्क अधिक कर देना होगा ।”

“यह विचार कल करेंगे ।”

मैनेजर ने जगदीश से हाथ मिलाया और चला गया । रामू इनकी अंग्रेजी में बात-चीत को समझ नहीं सका ।

जगदीश चन्द्र ने एक हिन्दी की पुस्तक निकाल कर रामू को पढ़ने को

दी। साथ एक पेंसिल दे कर कहा, जहाँ पर समझ न सको वहाँ निशान लगा रखो। मैं तीन बजे तुम से पाठ सुनूँगा।”

रात का खाना खाने के पश्चात् एक सहस्र से ऊपर लोग तमाशा देखने के लिए हाल में आ गए। सब लोगों के बैठने के लिए कुर्सियाँ रख दी गईं। मैनेजर ने हाल के एक ओर एक मंच बना दिया था, जिस पर एक मेज़ और उस पर जगदीश चन्द्र का डंडा रखा था। उस स्थान पर खड़े होकर जगदीश चन्द्र ने एक छोटा सा व्याख्यान दिया और बताया कि “यह विद्या मायावी कहाती है। यह मैंने तिब्बत के एक लामा से सीखी है। इससे मैं ऐसा मायाजाल फैला सकता हूँ कि आप जो चाहे आपको प्राप्त हो सकता है। आप में से कोई बताए कि उसे क्या चाहिए।”

“कोई भी वस्तु माँगिए, चाहे वह यहाँ न भी मिलती हो?”

“बताइए आपके लिए क्या चाहिए?”

उसने होटल के मैनेजर से पूछा।

“काश्मीरी सेब।”

“जून के महीने में? अच्छी बात है। एक प्लेट लाइए।”

होटल में से एक प्लेट मँगवाई गई। उसको मेज़ पर रख कर उस पर एक चादर डाल दी गई। जगदीश चन्द्र ने अपने डंडे को उस पर घुमाया। इस पर उसने किसी और से पूछा “आपको क्या चाहिए?”

“इलाहाबाद के अमरूद!”

“ओह! अच्छी बात है।” उसने एक तीसरे से पूछा, “आप भी कुछ चाहेंगे क्या?”

“शैम्पेन की एक बोतल।”

इस प्रकार कई लोगों की भिन्न-भिन्न वस्तुओं की एक लम्बी सूची प्रस्तुत हो गई। कुछ समय बाद जगदीश चन्द्र बोला, “लोजिये, तैयार हो जाइये। जो कुछ भी आप चाहते हैं आपको मिल सकता है।”

इतना कह कर उसने मेज पर से चादर उठाई। दर्शकों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब उन्होंने सब वस्तुएँ प्लेट में पड़ी देखीं। बीच में शराब की बोतल और उसके चारों ओर सेब, अमरूद, केले, अनार इत्यादि, जो कुछ भी किसी ने कहा था, वहाँ पड़े दिखाई दिये। लोगों ने आश्चर्य में तालियाँ बजाईं।

इस समय जगदीश चन्द्र ने एक सेब उठा कर रामू को दिया और कहा, “यह जरा मैनेजर साहब को दिखा दो कि अमली फल है या मिट्टी का खिलौना।”

रामू वह सेब ले कर होटल के मैनेजर के पास गया और उनके हाथ में दे दिया। मैनेजर ने उस सेब को हाथ में पकड़ कर कहा, “यह तो सेब नहीं है। यह अमरूद है।”

“अमरूद !” जगदीश चन्द्र ने आश्चर्य में कहा, “देखूँ।” यह कह कर वह समीप जा कर देखने लगा। उसको देख कर बोला, “आप आने साथ वाले से तो पूछिये कि यह क्या है ?”

“क्यों साहब ! यह देखिये। अमरूद नहीं है क्या ?” मैनेजर ने समीप वाले से पूछा। उसने देख कर कहा, “अमरूद नहीं है जी ! यह तो अनार है।”

इस पर सब उपस्थित लोग हँस पड़े। अनार और अमरूद कहने वाले विस्मय में एक दूसरे का मुख देखने लगे। इस समय रामू ने वह सेब लेकर हाल के दूसरी ओर ले जा कर दिखाया। एक ने उसे अपने हाथ में उठा कर कहा, “यह तो साहब, अनानास है।” जब उसने

अनानास कहा तो मैनेजर, जो उसको अमरुद बता रहा था कहने लगा, “यह तो सेब ही बन गया है।”

इस समय जगदीश चन्द्र ने उसको अपने हाथ में पकड़ कर कहा, “देखिये साहब ! हमारे इस सेब को कोई कुछ कहता है, कोई कुछ। ज़रा इसका निर्गुण एक साहब यहाँ मंच पर आ कर करें। आप आ जाइये।” उसने एक को बुला कर कहा।

वह आदमी आगे बढ़, जगदीश चन्द्र के समीप खड़ा हो, हाथ में सेब लेकर बोला, “मैं देख रहा हूँ कि यह सेब है।”

“ठीक है। आप जा सकते हैं। अब आप आ जाइये।” एक दूसरे को बुलाया। उसने वही वस्तु हाथ में ली और उसको विस्मय से देखने लगा। पीछे कहने लगा, “मैं दावे से कहता हूँ कि यह आम है।” इस पर सब और भी हँसने लगे। इस पर एक आदमी स्वयं आगे आ कर उस वस्तु को लेकर बोला, “यह तो कोई फल है ही नहीं। ऐसा प्रतीत होता है कि इस मदारी ने कुछ आदमी अपने ही सड़े कर रखे हैं और हमें बेवकूफ बना रहा है। यह तो शैम्पेन की बोतल है।”

इस पर जगदीश चन्द्र ने कहा “दर्शकवृन्द ! इनमें कोई भी भ्रूण नहीं कह रहा। इनमें कोई भी मेरा सिखाया हुआ आदमी नहीं है। परन्तु यह मायावी विद्या है। इसने आपके मन पर ऐसा माया का जाल डाल दिया है कि आपको यह वस्तु वही प्रतीत होती है, जो आप देखना चाहते हैं। देखिये, यह तश्तरी फलों और अन्य वस्तुओं में भरी पड़ी है या नहीं ?”

“है।” बहुत से लोग बोल उठे।

“तो यह लो।” उसने अपने डंडे को उस पर घुमाया। जिस प्रकार कोई वस्तु घाघर बन कर उड़ जाती है वैसे ही सभी फल, जो

तश्तरी में पड़ा था, लुप्त हो गया। देखने वाले अवाक्मुख देखते रह गए।

अब जगदीश चन्द्र पुनः बोला, “यह जगत माया है। वास्तव में जो कुछ हम देखते हैं, वह कुछ भी नहीं। हमारे मन के संस्कार हैं। इनसे हमें स्त्री, पुरुष, वृद्ध, बाल, मेज़, कुर्सी और यह सब कुछ दिखाई देता है। वस्तुतः देखने वाला भी माया है, और देखने वाली वस्तु भी। अपनी बात के समर्थन में एक बात और मैं आपको दिखाता हूँ।”

इतना कह कर उसने मेज़ और तश्तरी वहाँ से उठवा दी, और लोगों से कहा— “देखिए, यहाँ कुछ नहीं है। मैं आपको एक बनारस की गाने वाली विद्याधरी का गाना सुनवाना हूँ, और उसका नाच दिखलाता हूँ।”

सब लोग आश्चर्य में एक दूसरे का मुख देखने लगे। जगदीश चन्द्र ने कहा, “आप में कोई है जिसने उसकी गाने सुना है?”

एक साहब बोल उठे, “हाँ! मैंने उसका नाच और गाना सुना है।”

“तो आप बताइएगा कि यह वही है अथवा और कोई?”

इतना कह कर जगदीश चन्द्र ने अपने डंडे को मंच पर रख कर ऊपर उठाना शुरू किया। ज्यों-ज्यों वह डंडे को ऊपर उठाता गया भूमि में से एक धुँएँ की रेखा उठती गई। डंडा पाँच फुट और दो इंच की ऊँचाई पर ले जा कर ठहरा दिया गया और फिर उसको वेग से एक चक्कर देकर पीछे हटा लिया गया। वह धुँएँ की रेखा एक भँवर की भाँति अथवा वायु के एक बवंडर की भाँति घूमने लगी। फिर वह कुछ विस्तृत होने लगी और पश्चात् उसमें से एक मनुष्य के आकार की वस्तु बनने लगी। कुछ क्षण में ही उस धुँएँ में से एक स्त्री की रूपरेखा दिखाई देने लगी। और ऐसा दिखाई दिया कि कोई नर्तकी पूर्ण नाचने योग्य कपड़े

और भूषण पहने, शृंगार किए, पाँवों में घुंघरू बाँधे खड़ी हो गई है। लागों ने उसके स्वागत के लिए तालियाँ बजाईं। इस समय जगदीश चन्द्र के डंडे के हिलाने मात्र से एक सारंगी बजने लगी और तबला खड़कने लगा। उस औरत ने स्वर भरना आरम्भ कर दिया। आलाप, ख्याल और पश्चात् बोल, तान और आभोग गाया।

उसने गाया—

रूप जोबन का मान न करिए।

जिन जिन मान किया गति उनकी देख-देख कर डरिए।

रहित चाहे अपना जो प्राणी, प्रभु चरणन चित धरिए।

जीवन का मान न करिये।

इस प्रकार गाने के साथ-साथ नृत्य भी आरम्भ हो गया। नृत्य में भक्तिभाव का प्रदर्शन किया गया था। दर्शकों ने इच्छा प्रकट की कि एक और गाना हो जाय। इस पर जगदीश चन्द्र ने कहा, “बाई जी को कुछ भेंट दीजिए। प्रसन्न होंगी तो गायेंगी।”

रामू एक प्याला लेकर घूम गया। लोगों ने कुछ न कुछ दिया। गिनती करने पर एक सहस्र से ऊपर निकला। जगदीश ने कहा, “रामू बेटा, वापिस कर दो। बम्बई में रागविद्या के शौकीन कम हो रहे हैं। आपको मैं मदारी के करतब ही दिखाऊँगा, बाई जी को जाने देता हूँ।”

“नहीं ! नहीं ! और ले लो।” कुछ मनचलों ने कहा। रामू ने एक चक्कर और काटा। अब रुपए चार हजार से ऊपर हो गए। अब बाई जी एक और गाना गाने लगीं।

तनिक हरि चितवो मेरी ओर ।

मेरे तो मोहन तुम हा हो, इक ही तुम हो लाल-गरा ।

तनिक हरि.....

कब की मे ठाड़ी अरज करत हूँ; सुनिए नन्दकिशोर ।

इस प्रकार गाना दून लय में हुआ और उसके साथ नृत्य भी उसी लय में । श्रोतागण भूल गये कि यह मायावी खेल है । लोग प्रसन्न हो कर रुपये फँकने लगे । इस प्रकार यह खेल दो घंटों से ऊपर तक चलता गया ।

जब घड़ी ने साढे ग्यारह बजाये, तो जगदीश चन्द्र ने उस गाने वाली से कहा—“बस, हो गया ।” सब रुपये जो दक्षिणा के रूप में दर्शकों ने दिये थे रामू ने बटोर लिये । अब जगदीश चन्द्र लोगों को सम्बोधन कर कहने लगा, “यह सब खेल मैंने आपके मनोरंजन के लिये किया है । परन्तु एक बात आपसे कहता हूँ कि यह सब कुछ माया है, भ्रम है । आपकी इन्द्रियों के सम्मुख परछाई है । दूसरी बात आपसे यह निवेदन करता हूँ कि, “गुड नाईट ।”

लोगों ने देखा कि गायिका धुँधली हुई धुआँ हो गई है, परन्तु उस धुएँ से यह आवाज आ रही थी, “रूप जोवन का मान न करिये ।”

वह धुआँ विलुप्त हो गया, वह सारंगी और तबलची हवा में ऐसे घुल गए जैसे पानी में चीनी ।

जगदीश चन्द्र ने सब उपस्थितगण को हाथ जोड़ कर प्रणाम किया, रामू से रुपये ले जेब में डाल लिये और आश्चर्य में खोए हुए लोगों को वहाँ छोड़, रामू को साथ ले अपने कमरे में चला गया ।

सोने से पूर्व रामू ने कहा, “गुरुदेव ! कमाल कर दिया है आपने आज !”

“रामू ! मेरे साथ रहोगे तो तुम्हें दिखाऊंगा कि एक मनुष्य क्या कुछ कर सकता है ।”

होटल के लोगों को रात भर नींद नहीं आई । होटल का मैनेजर तो पागलों की भाँति रात भर अपने कमरे में इधर से उधर और उधर से इधर चक्कर काटता रहा ।

जगदीश चन्द्र को पूर्व निश्चयानुसार टिकट का आधा भाग एक हजार रुपया मिला और पाँच हजार जो भेंट में मिले थे उनमें से उसने होटल के मैनेजर को एक हजार दे दिया । शेष रुपये को अपने ड्राज में रख कर सतोप की नींद सो गया । उसका वम्बर्ड में पहला दिन अच्छा रहा था । अब रामू के मन में भी यही स्वप्न उठने लगे कि क्या मैं भी ऐसी शक्ति उत्पन्न कर सकूँगा ! चोरी करना उने बुरा प्रतीत होने लगा । उसने मन में यह निश्चय कर लिया कि मैं गुरु जी की सेवा के द्वारा यह शक्ति अवश्य प्राप्त करूँगा ।

अगले दिन प्रातःकाल ही नियमानुकूल जगदीशचन्द्र उठा और रामू को साथ ले चौपाटी पर घूमने चला गया । वहाँ से वे मोटर पर सवार हो, जुहू गये और सागर में स्नान करते रहे । वहाँ से वे दस बजे के लगभग लौटे तो अपने कमरे के बाहिर दस बाहर लोगों को चक्कर काटते देखा । उनके वहाँ पहुँचते ही वे सब उन्हें घेर कर खड़े हो गए । एक ने पूछा, ‘गुरुदेव, कहाँ गए थे, आप ?’ एक दूसरे ने कहा, “हम आपकी तीन घण्टे से प्रतीक्षा कर रहे हैं ।” जगदीश चन्द्र अभी उत्तर भी

नहीं दे पाया था कि एक और ने कहा, “होटल के मैनेजर आपको बुला रहे हैं।” एक और बोला, “मैं आपसे एक अत्यावश्यक विषय में बात करना चाहता हूँ।” एक और ने कहा, “पहले मैं आया था। इस कारण सबसे पहले समय लेने का मुझे का अधिकार है।”

जगदीश चन्द्र ने इस प्रकार चीलों की भाँति उनको अपने पर भय-टते देख, कुछ डाँटकर कहा, “मेरे पास आप से बात करने को समय नहीं है। मुझे अभी पूजा करनी है। दो बजे दोपहर के समय आइयेगा तो मिलूँगा।”

इस पर एक बोला, “मेरी बात तो एक मिनट……”

जगदीश चन्द्र ने बात काट कर कहा, “नहीं ! नहीं !! नहीं !!! मेरे पास अब समय नहीं है।”

विदश हो उन लोगों को चला जाता पड़ा। जगदीश चन्द्र और रामू भीतर गये तो उन्होंने कमरे का दरवाज़ा भीतर से बंद कर लिया। होटल के मैनेजर का आदमी भी वहाँ उपस्थित था। उसने मैनेजर का सदेश दिया था और यह जान कि वे पूजा के लिए जा रहे हैं, चुपचाप लौट गया। उसने पूर्ण बात मैनेजर को बता दी।

मैनेजर ने देखा कि सायं के तमाशे के लिए टिकटों की माँग बहुत बढ़ गई है। इससे भोजनोपरान्त वह स्वयं आया और एक और दिन ‘शो’ बढ़ाने के लिये निश्चय कर गया।

उस सायंकाल लोगों ने अन्य करतबों को छोड़ कर गाना और नाच देखने के लिए विशेष आग्रह किया। जगदीश चन्द्र ने कुछ करतब दिखाये और पश्चात् कलकत्ते की नीलम बाई का आह्वान किया और वह आई। उसने भी अपने संगीत का प्रदर्शन किया। उसने गाया—

श्री गिरधर आगे नाचूँगी । नाचूँगी, मे नाचूँगी । श्री
नाच नाच प्रिय रसिक रिझाऊं प्रेमी जन को जांचूँगी ।

पश्चात् और एक गाना गाया—

कैसे प्रीत किये हो रामा ।

सुध बुध बिसर गई है मोरी, नहीं लाज रही बड़ों की री ।

इत धावूँ, उत जावूँ पगल, ढूँढत फिरत रही ब्रज धामा ।

कैसे प्रीत किये हो रामा ।

पश्चात् नाच हुआ और इसके पश्चात् फिर गाना हुआ ।

इस रात तो भेंट के रुपये छैः सात हजार के भीतर हो गये ।
होटल का मैनेजर बहुत प्रसन्न था । जगदीश चन्द्र को भी सन्तोष हुआ ।
इसी प्रकार चार दिन तक यह क्रम चलता रहा । पश्चात् एक सेठ
मनचन्दानी से कुछ बात-चीत करने के बाद बम्बई शहर के बीच वोमन
जी हाल में इन प्रदर्शनों का प्रबन्ध कर दिया ।

एक रात रामू ने जगदीश चन्द्र के पाँव पकड़ लिए और कहा,
“गुरुदेव ! मुझ से बहुत भूल हो रही थी । मैं तो अपना जीवन ही
व्यर्थ गँवा रहा था । मुझे यह विदित नहीं था कि योग्य आदमी किस
प्रकार दूसरों से रुपया निकाल सकता है । मुझे भी यह क्रिया सिखा
दीजिये ।”

“इसमें दस वर्ष लग जायेंगे रामू ।”

“मैं जीवन भर आपकी सेवा करता रहूँगा ।”

“अच्छी बात है । पहले योग्य बनो, पश्चात् सुख-सम्पदा स्वयं
तुम्हारे पाँव चूमेगी ।”

“आप मुझे सिखायेंगे इसे ?”

“यदि तुम सीखना चाहोगे तो । अन्यथा यह कोई चीनी तो है नहीं जो पानी में डालने से स्वयं घुल जायगी । इसको सीखने के लिए भारी तपस्या और लगन की आवश्यकता है । तपस्या से पूर्व शिक्षा की भी आवश्यकता है । योग और ध्यान बिना ज्ञान के नहीं हो सकते ।”

“गुरुदेव ! मैं सब कुछ करूँगा ।”

“अच्छी बात है । यदि तुम मेरा कहना मानते रहे, मेरी आज्ञा का पालन पूर्ण रूप से करते रहे तो अवश्य सीख जाओगे । आज से तुम मेरे शिष्य हो ।”

“मैं अब अपने गाँव में ही एक मकान बनवा कर शेष जीवन इसी क्रिया को और उन्नत करने में लगाना चाहता हूँ । मकान बनवाने के लिए बीस हजार रुपया और शेष जीवन के लिए एक लाख रुपया चाहिये । इस प्रकार जीवन की आवश्यकताओं से मुक्ति पा और निश्चिन्त हो अपने आपको अपनी आत्मिक शक्तियों के विकास में लगा दूँगा ।”

रामू मन में बहुत प्रसन्न हुआ । अब उसको विदित हुआ कि मानसिक शक्तियों का विकास कितनी दूर तक जा सकता है । परन्तु एक संशय उसके मन में बार-बार उठता था । वह यह कि जब सेव और अमरुद बनाये जा सकते हैं तो इसी विधि से मकान के लिए रुपया और नोट नहीं बनाये जा सकते क्या ? इस संशय को उठाने गुरुदेव से मिटवाना चाहा । इसके उत्तर में जगदीश चन्द्र ने कहा, “ऐसे रुपये अथवा नोट बनाना सरकार को धोखा देने के तुल्य होगा । मैं किसी को धोखा देना नहीं चाहता । जो रुपया लोग इच्छा से देते हैं वह मैं अपना समझता हूँ ।”

बम्बई में प्रदर्शनों का परिणाम यह हुआ कि एक मास के अंत तक उसके पास सब प्रकार देना दे-दिला कर डेढ़ लाख रुपया बच गया। उन्हें ले कर वह वापिस अपने गाँव को लौट आया। चलते समय उसने रामू से कहा, “देखो रामू ! यदि तुमने एक वर्ष में उचित उन्नति नहीं की तो फिर तुम्हें वापिस तुम्हारी माँ के पास भेज दूँगा। और यदि तुम उन्नति कर सके तो इस विद्या में अभ्यास करने के लिए तुम्हें अपने साथ रखूँगा।”

रामू की अवस्था पहले से बहुत सुधर गई थी। उसको पढ़ने में रुचि होने लगी थी। उसके खान-पान और रहन-सहन में परिवर्तन उत्पन्न हो गया था।

संकट में सहयोगिता

१

मंगल को अपना पृथक् घर बनाने के लिये धन एकत्रित करते हुए चार वर्ष व्यतीत हो चुके थे। इस वर्ष वह आशा कर रहा था कि बीस हजार रुपया इकट्ठा हो जायगा और वह पक्का मकान मोहिनी की इच्छानुसार बनवा सकेगा। इस आय में सब्जियों के खेतों की उपज का बहुत भाग था। उसने मनोहर चौधरी की सारी भूमि पर, जो नीची थी, सब्जियाँ लगवानी आरम्भ कर दी थीं। खाद खूब देता था और आलू, भिंडी, टमाटर, लौकी, टींडे, सूजी, गाजर बोता था। सिंचाई के लिये इसी भूमि के लिये उसको एक कुआँ और लगवाना पड़ा था।

दूसरे खेतों में भी पैदावार ठीक हो रही थी। खेतों में काम करने वाले मंगल से बहुत प्रसन्न थे। वह उनके जीवन का बोझा अपना बोझा समझता था। जब से वह अपने पिता की सम्पत्ति से वंचित किया गया था और जब से गाँव के लोगों ने उसको गाँव में ही पुनः बसने में सहायता दी थी, तब से उसने अपना यह नियम बना लिया था कि हर मंगल और शनिवार को इन लोगों की वस्ती में जाता था और वहाँ उनसे मिल कर उनकी आवश्यकताओं को जान, उनकी पूर्ति का यत्न किया करता था।

वह समझ गया था कि देहाती जीवन में रुपया बचाने के दो ही उपाय हैं। एक नित्य की आवश्यकताओं को घर में ही उत्पन्न करना। इसलिए उसने छाँटना, फूँकना, पीसना, पकाना, कातना, बुनना, दूध,

मक्खन, लस्सी और घी और दाल-भाजी, साग आदि घर पर ही उत्पन्न करने का प्रबन्ध कर लिया था। दूसरे, प्रत्येक कार्य में घर के हर एक प्राणी का सहयोग था। मंगल इन बातों को समझता था। यही कारण था कि वह प्रतिवर्ष रुपया बचाता चला जाता था।

चार वर्षों में उसने पन्द्रह हजार रुपया एकत्रित कर लिया था और इस वर्ष की उपज अभी आदती की दुकान पर पड़ी थी। इससे भी लगभग चार हजार की आय की आशा थी। इसके अतिरिक्त साग-सब्जियों की आय प्रतिमास होती थी। इससे यह अनुमान लगा रहा था कि मकान के लिये बीस हजार शीघ्र ही एकत्रित हो जायगा।

कच्चा मकान, जिसमें गांव के लोगों ने उसे ठहराया था, अभी विद्यमान था। मकान के बाहिर एक अच्छा-सा बगीचा लगा लिया गया था। घास की क्यारियों और उनके चारों ओर मेहन्दी की बाड़ लगा ली गई थी।

मंगल जब भी नगर में जाता था तो कुछ न कुछ नया अनुभव ले आता था, जिसके प्रयोग से वह देहात के लोगों के सुख में वृद्धि कर सके।

जब उसके मन में यह विश्वास हो गया कि अब मकान बनवाने की शक्ति उसमें है तो वह नगर के मकानों की जाँच-पड़ताल करने लगा था। एक दिन एक मकान उसे बहुत अच्छा लगा और उस जैसा नक्शा वह बनवा लाया।

नक्शा हाथ में लिये हुए वह प्रसन्नता से फूलता हुआ घर पहुँचा तो उसने मकान की ड्योढ़ी से ही आवाज़ दे दी, “ओ दीप की माँ ! कहाँ हो, इधर तो आओ ! देखो क्या बनवा लाया हूँ।” उसके बड़े लड़क का नाम कुलदीप था और जब से उसका नाम रखा गया था

मोहिनी, दीप की माँ हो गई थी। मोहिनी के एक और लड़का भी हुआ था और उसकी आयु इस समय एक वर्ष की थी। उसका नाम कन्हैया था, परन्तु मोहिनी का नाम बड़े लड़के के नाम से ही चल रहा था।

मोहिनी आवाज़ सुन कर अपने छोटे लड़के को गोदी में लिये हुए ड्योढ़ी में आई। अपने पति के हाथ में एक नीला-सा कागज़ देख कर विस्मय में उसका मुख देखने लगी। मंगल ने ड्योढ़ी में रखे तख्तपोश पर बैठते हुए कहा, “मोहिनी ! देखो मैं मकान का नक्शा बनवा लाया हूँ। इस सर्दी के मौसम में इतने पथवानी आरम्भ कर दूंगा और अगले वर्ष मकान बन कर तैयार हो जायगा।”

“देखें कैसा नक्शा बनवाया है आपने ?”

मंगल ने वह नीला कागज़ खोलकर तख्तपोश पर बिछा दिया और कहा, “देखो कितना सुन्दर बनवा रहा हूँ !”

मोहिनी ने उसे देखा, पर नीले कागज़ पर सफेद रेखाओं का पुँज देख कर जब वह कुछ समझ नहीं सकी तो उसने कहा, “मुझे तो कुछ समझ नहीं आया।”

“ठीक है, जब बनेगा तब समझ जाओगी।”

इस समय मोहिनी को कुछ याद आया तो उसने कहा, “आज डाकिया एक चिट्ठी दे गया है। आपके नाम की कहता था।”

“कहाँ है ? दिखाओ तो।”

मोहिनी चिट्ठी लेने भीतर गई तो मंगल भी नक्शा समेट कर उसके पीछे-पीछे हो लिया। चिट्ठी पढ़ने की क्षमता मंगल में नहीं थी, इस कारण गरम-गरम दूध पी, अपनी थकान दूर कर वह चिट्ठी को पुजारी बूज-लाल, के पास ले गया और उसे उसके सामने रख पृच्छने लगा, “पंडित जी, इसको बाँचिये। यह कहाँ से आई है ?”

चिट्ठी पढ़ कर पंडित जी ने कहा, “यह लाला नत्थूमल्ल की है। उन्होंने लिखा है, तुम्हारी माँ की तबियत बहुत खराब हो गई है। तुम्हें सूचना भेज दी है, आगे जैसा उचित समझो करो।”

इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं लिखा था। मंगल गम्भीर विचार में पड़ गया। पंडित वृजनाथ ने कहा, “मंगल मैया ! यह पत्र मुझको दे दो। मैं इसका पता लगा कर कल तक बताऊँगा।”

“क्या पता करोगे ?”

“यही कि इस चिट्ठी में जो माँ के बीमार होने की बात लिखी है, उसमें कोई सच्चाई भी है या नहीं।”

“तो क्या समझने हो, झूठ लिखा है ?”

“इन लाला लोगों से सब कुछ सम्भव है। कोई प्रयोजन हो सकता है जिसके लिये आपको बुलाया जा रहा है। शायद माँ इतनी बीमार नहीं, जितना लिखने से पता लगता है।”

“तो मैं ही जा कर पता न कर लूँ ?”

“तुम जा सकते हो। परन्तु माँ बीमार हो या न हो, आपसे कुछ लिखा-पढ़ी भी तो करवाई जा सकती है।”

“पंडित जी ! जो कुछ था सब तो दे दिया है। अब और क्या लिखा-पढ़ी करवायेगे ?”

“ठीक है, पर मुझे इन नगर के रहने वालों से डर ही लगता है।”

“पर मेरा मन धक्-धक् कर रहा है। मैं तो जाऊँगा।”

“अच्छा, तो कल प्रातःकाल ही चल देंगे। मैं ही तुम्हारे घर आऊँगा, डकट्टे चलेंगे।”

मंगल जानता था कि पंडित का उसके प्रति प्रेम ही साथ चलने की प्रेरणा कर रहा था। उसने घर पहुँच जब मोहिनी को माँ की

वामारा का सनाधार बाधा तो वह बहुत ही चिन्तित हुई। उसने केवल यही कहा, “हो सके तो माँ जी को यहाँ ले आइए।”

गंगन चुप रहा। मोहिनी फिर बोली, “मेरा मन भी साथ चलने को करता है, पर डर लगता है कि कहीं मुझे देखकर, उन्हें अधिक दुःख न हो।”

“नहीं ! तुम्हारे जाने की आवश्यकता नहीं।” मंगल ने सजग हो कर कहा -- “पूजारी जी का कहना है कि माँ बीमार नहीं। कुछ और ही बात है, और वह भी कल मेरे साथ जा रहे हैं।”

“पंडित जी बहुत अच्छे आदमी हैं। न जाने कितने जन्म तक उनके ऋण का बोझा सिर पर चढ़ा रहेगा !”

२

अगले दिन गुर्यादय से पहले ही पंडित जी स्नानादि से निवृत्त हो कर मंगल के घर जा पहुँचे। मंगल को माँ के विषय में रात भर चिन्ता लगी रही और वह पंडित जी के आने से पहले ही तैयार हो गया था। पंडित जी के आने पर उसने पूछा, “पंडित जी, कुछ खाया-पिया है या नहीं ?”

“भैया ! डानी मुह पड़ताइन कुछ दे नहीं सकी।”

“दीप की मा !” मंगल ने मोहिनी को आवाज दी। “पंडित जी के लिए लस्सी-मक्खन भेजना।”

कुछ दिनों से मोहिनी की सहायता के लिए एक विधवा स्त्री प्रातः-काल ही आ जाया करती थी। उसके हाथ में मोहिनी ने एक लोटा लस्सी और उस पर आधा पाव मक्खन रख कर भेज दिया। पंडित जी ने पिया और तृप्ति अनुभव की और मंगल के साथ नगर की ओर चले गये।

मंगल को पता नहीं था कि उसकी माँ पृथक् मकान में रहती है।

इससे वह नत्थूमल्ल के मकान के नीचे जा पहुँचा। वह अभी पहुँचा ही था कि नत्थूमल्ल मकान से निकल कर कहीं जाते हुए मिल गया। लाला ने पुजारी को साथ खड़ा देखा, माथे पर त्योंरी चढ़ा कर पूछा, “सुनाओ पंडित, कैसे आना हुआ है ?”

“कल आपका पत्र गया था कि यजमानिन बीमार है।”

“हाँ, बीमार तो है, पर मरने वाली नहीं है। भागवत सुनने की उसकी लालसा नहीं।”

पुजारी इस कटाक्ष से तिलमिला उठा। उसने भी व्यंग के भाव में कह दिया, “नगर भरा पड़ा है, लाला जी ! किसी को तो आवश्यकता होगी। भगवान यजमानिन को चिरंजीव करें। मैं भागवत पढ़ने नहीं आया। मैं तो यह देखने आया हूँ कि आपके पत्र में कुछ सच्चाई भी है या नहीं। सो आपने स्वयं ही मान लिया है कि उसमें सच्चाई का अंश बहुत कम है।”

लाला नत्थूमल्ल ने कहा, “वह उस सामने के मकान में रहती है। वह ही आपको चिट्ठी का कारण बताएगी।”

मंगल ने यह उचित नहीं समझा कि लाला जी से कुछ अधिक तकरार करे। वह पंडित जी को साथ ले, बताए हुए मकान के नीचे जा कुंडा खटखटाने लगा। भीतर से मंगल की माँ ने दरवाजा खोला और मंगल को सामने देख कर भौचक-सी रह गई। उसका विचार था कि लाला नत्थूमल्ल आए हैं। मंगल इतनी जल्दी गाँव से नहीं आ सकता था। फिर साथ पुजारी को देख कर तो उसके पाँव के तले की मिट्टी खिनक गई। उसको चुप देख कर पुजारी ने कहा, “यजमानिन की जय हो। भगवान तुम्हें आनन्द-प्रसन्न रखे। माँ जी, रामू कहाँ है ?”

मंगल ने प्रदत्त पूछने के स्थान पर मकान के अन्दर जाना उचित

समझा। वह मकान के भीतर चला गया और पुजारी को भी भीतर बुला कर दरवाजा बन्द कर, भीतर से कुंडा लगा कर माँ से पूछने लगा, “माँ क्या हुआ है तुमको ?”

“अब आए हो तो चलो सुन लो। पंडित जी, तुम कैसे आए हो ?”

“माँ जी ! मैं भी ऊपर चल कर सुनूँगा।”

सब ऊपर की मंजिल पर चले गए। वहाँ बैठकर माँ ने पूछा, “तुम्हें किसने बुलाया है ?”

“लाला नत्थूमल्ल का पत्र मिला था, जिससे यह समझा कि तुम मख्त बीमार हो।”

“मैं बीमार नहीं हूँ, दुःखी अवश्य हूँ। रामू एक वर्ष के लगभग हुआ है, घर से भाग गया है। उसका पता नहीं चला। जितना नकद रुपया था सब समाप्त हो गया है और निर्वाह की कठिनाई हो रही है। मैंने लाला जी से कहा था कि भूमि बेच दें। उन्होंने कहा है कि जब तक तुम दस्तखत नहीं करोगे, भूमि बिक नहीं सकती।”

“तो ग्राहक मिल गया है क्या ?”

“यह मुझे पता नहीं। मैंने तुम्हें इसलिए बुलाया है कि यदि तुम ही भूमि खरीद लो तो बहुत अच्छा हो।”

“क्यों, अच्छा क्या होगा ?”

“घर की मिट्टी घर में ही लगेगी।”

“नहीं माँ ! मैं तुम्हारी भूमि नहीं खरीदूँगा। तुम इसे जहाँ दाम मिलें, बेच डालो।”

“तो, क्या तुम अच्छे दाम नहीं दोगे ?”

“नहीं ! मैं तो उस भूमि का केवल इतना ही मूल्य समझता हूँ

जितना तुम्हें रोटी कपड़े के लिए चाहिए। जीवन भर पच्चीस रुपया महीना मिल सकता है।”

“यह तो बहुत कम है।”

“पर मुझे भूमि की आवश्यकता भी तो नहीं।”

“तो तुम हस्ताक्षर कर दो।”

“किस बात पर हस्ताक्षर करूँ ?”

“यही कि तुम साक्षी हो कि तुम्हारा भूमि से कोई सम्बन्ध नहीं है।”

“सो तो मैंने लिख दिया था।”

“लाला कहते हैं कि वह हस्ताक्षर बटवारे के थे। उससे बित्री नहीं हो सकती।”

इस समय पुजारी ने बात काट कर कहा, “पर माँ जी, राम कैसे भाग गया है ?”

“मैं कैसे जान सकती हूँ ! एक दिन स्कूल गया तो लौटा ही नहीं।”

“तो क्या उसके लौटाने का यत्न किया है ?”

“लाला जी कहते हैं कि उसके ढूँढ़ने में दो हजार रुपए खर्च हो चुके हैं।”

“तुमने मंगल को सूचना तक नहीं भेजी। क्यों ?”

“मैं क्या जानूँ। लाला जी ने कहा था कि वे ढूँढ़ रहे हैं।”

“माँ जी ! अब भी लाला जी को कह दीजिए कि वे अपने आप हस्ताक्षर कर लें, मंगल भैया से पूछने की क्या आवश्यकता है ?”

मंगल की माँ के माथे पर त्योंरी चढ़ गई। इस पर मंगल ने पुजारी को चुप रहने का संकेत करते हुए माँ से कहा, “माँ ! रामू मेरा भाई है। वह एक वर्ष से लापता है और तुमने मुझे बताया तक नहीं। क्या हो गया है तुम्हें ?”

“मैं समझती थी कि तुम्हारी बीबी तो यह बात सुन कर उल्टे प्रसन्न होगी। उसके कहने से तुम कुछ करो-धरोगे नहीं। फिर व्यर्थ मैं तुम्हें बताने की आवश्यकता क्या है।”

“माँ !” मंगल ने उठते हुए कहा, वह कुछ ऐसा अनुभव कर रहा था कि लाला नत्थूमल्ल ने उसकी मति भ्रष्ट कर दी है—इससे उसने दृढ़ता से कहा, “देखो तुम्हारे रुपये, तुम्हारे भूषण और तुम्हारी भूमि से मेरा कोई सरोकार नहीं। मैं तो एक बात जानता हूँ कि गाँव चलो। वहाँ मकान खाली पड़ा है। वहाँ चल कर रहो। तुम्हें खाने-पहनने का कोई कष्ट नहीं होगा। जब रामू का पता चल जायगा तब जो कुछ तुम्हारे पास है, वह उसे दे देना। बताओ कप आओगी ?”

“इस प्रकार मैं नहीं आ सकती। अभी पुलिस से रामू के ढूँढ़ने के लिए प्रार्थना की हुई है। उसका उत्तर अभी नहीं आया।”

“यह सब व्यर्थ है माँ जी !” पुजारी ने कहा, “मुझे भय है कि लाला नत्थूमल्ल ने रामू को ढूँढ़ने का कुछ भी प्रयत्न नहीं किया, और न ही वह कर सकता है। तुम गाँव में चली चलो तो मैं उसे ढूँढ़ कर पाताल से भी ले आऊँगा।”

“तुम ले आओगे ! भला, कैसे ?”

“भगवान से पूछूँगा। जिधर वे कहेंगे उधर ही चल दूँगा।”

मंगल की माँ हँस पड़ी। उसने कहा, “मुझे तो कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि तुम लोग मुझे धोखा देने आये हो।”

“अच्छी बात है माँ।” मंगल ने कहा, “मैंने जो कहना था कह दिया, जब आने का विचार हो तो आने से एक दो दिन पहले कहला भेजना। मकान भाड़-फूँक कर ठीक करवा दूँगा।”

मंगल की माँ उन्हें जाते देखती रह गई। वह जो कुछ कह रही थी वह उसकी लड़की सोहिनी और दामाद शंकर से मिखाई हुई भाषा थी। उसके मन में अपने कहने और करने पर भी सन्देह हो रहा था। जब मंगल गया तो वह मकान का दरवाजा बन्द करने नीचे आई। उस समय शंकर अपने मकान से निकल रहा था। वह अपनी सास को दरवाजे पर खड़ी देख, उसके पास चला आया और पूछने लगा “मंगल, भैया चले गये क्या ?”

“हाँ।”

“हस्ताक्षर करना स्वीकार किया है क्या ?”

“नहीं।”

“तो क्या बनेगा ? भूमि विक नहीं सकती। रुपया समाप्त हो गया है। अब गुजर कैसे होगा ! भूमि बेचने की स्वीकृति मंगल दे नहीं रहा। रामू को वह हूँदेंगे नहीं और मुझे भय है कि वह मिल भी जाय तो उससे मरवा न डाले। इस प्रकार भूमि का मालिक बनने का यत्न करेगा। फिर, अपनी बहू की दासी बन कर उम्र भर उसी के टुकड़े तोड़ना।”

वह चुप हो कर सुनती रही। उसे चुप देख कर शंकर ने कहा “अब तो मैं काम पर जा रहा हूँ, दोपहर के समय जब आऊँगा तो इस पर फिर विचार किया जायगा।” यह कह कर वह चला गया।

माँ बैठी इस समस्या पर सोच रही थी कि सोहिनी आ गई। उसने मंगल के प्रस्ताव को सुनने के पश्चात् कहा, “माँ, भाभी की दुत्कारभरी बातों को सुनने से तो यहाँ भूखे मर जाना ही ठीक है।”

मंगल की माँ के मन में रामू के भाग जाने से कुछ ऐसी अव्यवस्था उत्पन्न हो गई थी कि वह किसी बात को भली भाँति विचार

नहीं सकती थी। उसकी अवस्था सागर पर उस नौका के समान थी जिस पर मल्लाह कोई न हो और जिस ओर वायु का रुख हो जाय उस ओर ही चल पड़े।

दुकान पर लाला नत्थूमल्ल ने अपने सुपुत्र शंकर से पूछा, “क्यों शंकर ! क्या कह गया है तुम्हारा साला ?”

“कह गया है कि वह हिब्बानामे पर हस्ताक्षर नहीं करेगा। यदि माँ के पास खाने को कुछ नहीं रहा, तो गाँव लौट जावे। वह उसके खाने-पहरने का प्रबन्ध कर देगा।”

“फिर क्या कहती है तुम्हारी सास ?”

“यह कुछ निश्चय नहीं कर सकी। हमारा तो विचार था कि जैसे पहले मंगल ने माँ के कहने मात्र से हस्ताक्षर कर दिये थे, अब भी कर देगा, परन्तु ऐसा न हो सका।”

“यह पंडित जो साथ आया था, उसी ने बाधा डाली है। मैं तो उसको देखते ही समझ गया था कि काम नहीं बनेगा।”

“रामू के लौटने से पूर्व ही भूमि का हिब्बानामा हो जाना चाहिये, नहीं तो सब योजना विफल हो जायगी।”

“पिता जी ! मुझ को तो इन तिलों में तेल दिखाई नहीं देता। जो कुछ था सब निकल चुका है।”

“देखो शंकर, ग्यारह हजार में से तीन-चार हजार के लगभग खर्च हुआ होगा। भूषण का मूल्य भी लगभग छँ-सात हजार होगा। यह तो हमारे कब्जे में है ही। शेष रही भूमि। इसे भी किसी तरह हाथ से निकलने न देना चाहिये। रामू होता तो और बात थी। रही बुढ़िया की आजीविका की बात, सो उम्र भर पड़ी रहे। रूखा-सूखा जो उसके भाग में होगा हम देने ही रहेंगे। हम न भी देगे तो मंगल तो दुनिया-

दारी के विचार से उसे रोटी कपड़ा देगा ही । आखिर यह उसकी माँ है ।”

३

इधर मंगल और बृजलाल नगर से लौटे तो मार्ग में यही बातचीत करते आ रहे थे कि रामू को घर से गये एक वर्ष हो गया और माँ ने उसके भाई को सूचना तक नहीं दी । कंसे आश्चर्य की बात है ! किस प्रकार एक माँ अपने पुत्र से वद कर अन्य को विश्वागम्य बन सकती है ! सबसे अधिक विस्मय की बात तो यह है कि जिस लड़के के कारण वह अपने बड़े पुत्र से लड़ी भगड़ी थी, उसी के भाग जाने पर भी उसे कोई भी चिन्ता नहीं हुई । पुजारी का कहना था, “मंगल भैया ! ज़रूर तुम्हारी माँ पर उसके दामाद ने जादू-टोना किया हुआ है, जिससे उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है, नहीं तो माँ और पुत्र का सम्बन्ध कभी टूट सकता है ?”

मंगल इन बातों को नहीं मानता था । यही कारण था कि वह पंडित जी की बात पर हँस पड़ा । उसने केवल यह कहा, “मेरा दुर्भाग्य है कि मैं माँ को सुख नहीं पहुँचा सका । यह पुण्य मेरे भाग्य में नहीं था ।”

जब गाँव में पहुँच कर मोहिनी को रामू के भाग जाने का समाचार मिला तो वह अवाक्मुख बैठी रह गई । उसको और सब बातों का पूछना याद ही नहीं रहा । वह एक समाचार ही इतना चकित और चिंतित करने वाला था कि उसने उसके सरल चित्त को पूर्ण आकार में घेर लिया, और बातों का ध्यान ही न रहा ।

इसके पश्चात् जब भी मंगल और उसकी बीबी एकांत में बैठते तो रामू की बात चलने लगती और फिर घण्टों ही उसी की बातें :र्हाती रहती थीं । मंगल बार-बार कहता था कि “मैंने रामू को पीटा नहीं

था। वह गाँव की लड़कियों को तंग कर रहा था। मैंने मना किया तो उसने मेरा कहना नहीं माना। मैंने केवल कान मरोड़ा था, और उसने झूठ बोला कि मैंने उसकी पीटा था।”

“पर माता जी तो समझदार थीं। उनको क्या हो गया है ! सब जायदाद व्यर्थ गँवाई और अब भूमि को बेचने के पीछे लगी हुई हैं। शेष जीवन क्या औरों समर्थियों के बर्तन मल कर व्यतीत करना चाहती हैं ?”

ऐसा विचार करने पर भी वे कुछ कर नहीं सकते थे। न तो उन में रामू को ढूँढ़ने की शक्ति थी और न ही वे इसकी युक्ति जानते थे। बाते ही होती रहती थी जो एक रात को समाप्त हो कर अगले दिन फिर चलने लगती थी।

इम वर्ष वर्षा नहीं हुई। ओस पड़ोस में “त्राहि त्राहि” मचने लगी। खेत सूख कर चुर हो गये थे। कुओं में पानी सूखने लगा था। आपाड़ गया, सावन आया, भादों और आश्विन भी सूखा ही निकल गया। कुओं के बल पर थोड़ी बहुत खेती हुई, पर इससे क्या होता था ! गाँव के लोग तो बेकार बैठे थे।

मंगल ने मकान के लिए ईंटें पथवानी आरम्भ कीं तो लोग काम के लिए टूट पड़े। पर एक मकान बनवाने से गाँव भर के लोगों को काम तो मिल नहीं सकता था। इस कारण समस्या विकराल रूप में सब लोगों के सम्मुख उपस्थित होने लगी। यह समस्या केवल एक गाँव वालों की नहीं थी। पूरा देश में हाहाकार मच रही थी। नहर के किनारों पर की भूमि में और कुओं की आसपास की भूमि में कार्तिक की फसल हुई थी। परन्तु उसके पश्चात् तो कुओं में भी पानी कम होने लगा, खेती कैसे होती !

माघ मास था, परन्तु वर्षा न होने के कारण सर्दी कुछ अधिक नहीं पड़ रही थी। दोपहर की धूप में तेजी अधिक थी और आकाश धूलि से भर रहा था। सूखे खेतों में कहीं-कहीं हरियाली दिखाई देती थी। ये वे स्थान थे जहाँ कुएँ का पानी पहुँच सकता था। गेहूँ और जौ बोए हुए थे। मंगल की नीची भूमि पर सब्जियाँ लगी हुई थीं। इस पर भी वह इस वर्ष दस बीघा से अधिक भूमि जोत नहीं सका था।

सायंकाल मंगल मोहिनी के समीप बैठा हुआ, बच्चों से खेल रहा था कि पुजारी आ पहुँचा। “आइये पंडित जी ! संसार कैसे चल रहा है ?” मंगल ने उनके लिये बैठने को स्थान देते हुये पूछा। मोहिनी छोटे बच्चे को गोद में उठा कर भीतर चली गई। पंडित जी बैठ कर कहने लगे, “भैया, गाँव में प्रजा की अवस्था बहुत बिगड़ गई है। आधे से अधिक लोगों के घर अन्न-अनाज चूक गया है। महँगु कल नगर में काम ढूँढने जा रहा है। वह हूँट-पुँट है। मजदूरी कर सकेगा, परन्तु सब तो ऐसे नहीं हैं।

निमी को जानते हो न, जिसका पति पिछले वर्ष मर गया था और जिस पर उसके पड़ोसी माधो ने चादर डाल ली थी ? आज वह घर से निकाल दी गई है। मैंने माधो से पूछा था कि उसने क्यों निकाल दिया है उसको, तो वह कहने लगा, अपने खाने को तो कुछ है नहीं उसे कहाँ से दूँ ? वह भी परदेस में नौकरी के लिये जा रहा है ?

निमी बेचारी रो-रो कर बेहाल हो रही है। वह गाँव के पश्चिम में रहने वाला ननकू अपने घर के सामने बैठा था। मुझे देख कर कहने लगा, “पंडित जी, अब तो घर में एक दाना नहीं रहा। बच्चे बिलख बिलख कर रो रहे हैं।”

“पंडित जी, यह तो मैं भी देख रहा हूँ, परन्तु कुछ उपाय भी नहीं सूझता। मेरे पास कुछ खया तो है, पर मैं सोचता हूँ कि उससे कब तक काम चलेगा ?

देखो भैया ! इन्हीं लोगों ने एक समय मेरी सहायता की थी। अब मैं भी इनके लिए अपनी सामर्थ्य के अनुसार सब कुछ करने को तैयार हूँ। यही समय तो मेरी परीक्षा का है। जब तक मेरे पास एक भी पैसा है, मैं इनमें से किसी को भी भूखा नहीं मरने दूँगा। परन्तु जो बात मुझे समझ नहीं आ रही है वह यह है कि मेरा सब कुछ समाप्त हो जाने पर भी तो भगवान जाने इनका कुछ बने अथवा नहीं ?”

पंडित का मस्तिष्क कई मासों से इसी उधेड़-बुन में लगा हुआ था। वह विचार कर रहा था कि गाँव के लोगों के उजड़ कर भाग जाने से समूचा गाँव ही उजड़ जायगा। इससे इनकी रक्षा करनी चाहिए। वह इनके लिये कितनी ही योजनायें बना चुका था और उनको व्यर्थ समझ पुनः त्याग चुका था। इसी उधेड़-बुन में वह किसी निश्चय पर नहीं पहुँचा था। इसी कारण पानी नाक तक आता देख कर मंगल के पास आया था।

मंगल अनपढ़ था। उसे एक ही बात आती थी कि कोई कार्य आरम्भ कर दिया जाय तो पीछा करते रहने से वह पूर्ण हो ही जाता है। उसने उठ कर कुलदीप को कहा, “दीप, भाग जाओ माँ के पास। कहो, मैं गाँव से होकर आता हूँ।”

उसने पुजारी से कहा, “पंडित, इन्हें भूखों नहीं मरने देना, ठीक है न ? चलो इन लोगों की बिरादरी बुलायें और फिर विचार करे कि क्या किया जा सकता है।”

“ठीक है भैया ! चलो !”

दोनों मकान से निकल कर उन गरीब लोगों की बस्ती की ओर चल पड़े। मार्ग में पंडित अपने मस्तिष्क में उठ रहे विचार से बताने लगा। उसने कहा, “सब स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध काम पर गाँव के बाहिर जा नह। सकते। गाँव में तो कुछ न कुछ कर लेते हैं, पर नगर में जा कर सब को प्रतिदिन कोई काम मिलता रहेगा, यह कहना कठिन है। इससे बहुत से भूखे मर जावेंगे। यदि स्त्रियाँ नगर में मजदूरी करने गईं तो चरिभहीन लोगों के पंजे में फँस जावेंगी और इसका परिणाम लज्जाजनक होगा। कई तो कमा न मकान के कारण अथवा काम न मिलने के कारण भिक्षा माँगने लगेंगी और फिर जीवन भर के लिए न अपने काम की ही रहेगी और न समाज के काम की। भैया, गाँव वालों का इस प्रकार नगर में जा कर काम ढूँढने और वहाँ के जाता-वरण में रहने से भारी अनर्थ हो जायगा।”

“मंगल भैया ! मैंने इस विषय पर बहुत विचार किया है, और मैं इसमें उन लोगों का हित नहीं समझता।”

“पर इस समय काम तो नगरों में ही मिल सकता है।”

“सो तो ठीक है। पर कोई ऐसी बात होनी चाहिए जिससे कोई बेकार न रहे, कोई भूखा न रहे और किसी को रात के समय अपने परिवार से बाहिर रहने की आवश्यकता न पड़े।”

मंगल हँस पड़ा। उसने कहा, “बस इतनी सी बात है। भैया, कोई कठिन नहीं। पर लोग यदि एकमत होकर किसी के पीछे चलें, तब ही यह हो सकता है।”

“जब इनके घर में अन्न था, तब तो ये एक दूसरे की सहायता करते थे। अब सबको अपने-अपने मटके खाली दिखाई देने लगे हैं तो कोई किसी की नहीं सुनता। सबको अपनी-अपनी पड़ी है। जिनके पास

कुछ दिन का खाना है वे उसे छुपा रहे हैं, जिससे कोई कुछ माँग न बैठे।”

“पंडित भैया, मेरी मोटी बुद्धि में तो एक मार्ग सूझ रहा है। यदि सब मानें तो हो सकता है।”

“जुग-जुग जियो भैया मंगल। कोई तरकीब निकालो न। निमी कह रही थी कि मैं तो नगर में जा कर वेश्यावृत्ति कर लूँगी पर इस बेईमान माधो के घर लौट कर नहीं आऊँगी। भैया, निमी को बचाना होगा, उसके चरित्रहीन हो जाने से गाँव भर के मुख पर कालिख पुत जायगी।”

इस समय बातें करने-करते वे कामों की बस्ती में जा पहुँचे। चौधरी के मकान के बाहिर जा कर पंडित ने आवाज़ दी, “चुन्त चौधरी !”

एक बूढ़ा आदमी हाथ में हुन्का लिये धीरे-धीरे चलता हुआ घर से बाहिर निकला। वह मंगल को देख कर प्रसन्न हो बोला, “मंगल भैया ! तुम आये हो !” उसने उसके को आवाज़ दी, “अरे कन्हैया ! यहाँ खाट उल दो।”

उसका युवा लड़का, जिसकी गालें भूख से पिचक गई थीं, बाहिर आया और मकान के दरवाजे के साथ खड़ी हुई खाट को उठा कर उसने उसे बिछा दिया।

पंडित और मंगल खाट पर बैठ गये। मंगल ने कहा, “चौधरी, बैठो।”

चौधरी और उसका बेटा दोनों भूमि पर सामने बैठ गये। बात मंगल ने आरम्भ की “चौधरी, बहुत कठिन समय आ गया है न ?”

“हाँ भैया, भगवान का कोप प्रतीत होता है।”

“पर हम मनुष्य हैं, पशु नहीं। इससे मरते-जीते मनुष्य ही रहना चाहते हैं।”

“परन्तु भैया, भूखा पेट वह सब काम करवाता है जो पशु भी नहीं करना चाहता। मैना को पंडित जी जानते हैं। कन्हैया की मौसी की लड़की है। भूख के मारे व्याकुल हो कल नगर में काम ढूँढ़ने गई थी। उसे काम कहीं मिला, निराश हो कर लौट आई। पर भैया, क्या जवान बहू-बेटियों का नगर में जाना अच्छा होगा? वहाँ सब तरह के लोग होते हैं।”

मंगल को यह सुन कर बहुत दुःख हुआ। उसने कहा, “चौधरी, एक समय तुम लोगों ने मेरी बहुत सहायता की थी। उसे मैं भूल नहीं सकता। मैं यदि कुबेर होता तो आप सब के घर धन-धान्य से भर देता। परन्तु मैं एक हूँ और यहाँ ज़रूरतमन्द अनेक हैं। फिर भी मैं जब तक जीवित हूँ और जब तक मेरे घर में एक दाना भी अन्न का, अथवा एक पैसा भी नकद है आपका एक भी आदमी भूखा नहीं रहने दूंगा। यह अवस्था तो तुम्हें मुझे पहले ही बतानी चाहिये थी।”

“भैया, मैं जानता था कि तुम अपने खलिहान के दरवाज़े खोल दोगे। पर वहाँ कितना कुछ है, मुझ से छुपा नहीं। वह एक सप्ताह भी नहीं चलेगा, और तुम भी हमारे साथ भूखे मरने लगोगे।”

“पर चाचा! तुम्हें इस प्रकार भूख से घुल-घुल कर मरते तो देखा नहीं जाता और जब तुम्हारी औरते घर की मान-प्रतिष्ठा बेचने लगेंगी तो मैं तो गले में फांसी डाल लटक जाऊँगा। मुझ से यह देखा नहीं जायेगा।

“देखो चाचा! आज अभी मेरे घर के बाहर अपनी पंचायत बुलाओ। मैं तुम सब को एक तरकीब बतलाऊँगा और आशा करता हूँ कि सब के खाने-पीने का प्रबन्ध हो जायगा।”

“भाइयो ! मेरी मोटी बुद्धि की बात सुनो ।” मंगल पंचायत में एकत्रित लोगों को अपनी बात समझा रहा था । “एक परिवार में पाँच भाई थे । तीन मेहनत करते थे, एक घर में चौधरीपन करता था और एक बीमार रहता था । बाप भी कमाता था । मेहनत करने वालों में से एक ने कहा कि मैं अपनी कमाई का भाग बीमार भाई को नहीं दूंगा । इस पर बाप को क्रोध चढ़ आया । उसने कहा, “यह मेरे रहते नहीं हो सकेगा । सब की कमाई यहाँ एकत्रित होगी और हर एक को खाना-पीना उसी से मिलेगा । एक ही माँ के कोख से उत्पन्न हो कर यह भेदभाव करना महापाप है ।” जब तक बाप जीता रहा, काम करने वाले काम करते रहे । घर का चौधरी अपनी बुद्धि से सब को सुमार्ग पर लगाये रहा, और उनकी हिम्मत से बीमार भाई भी अपनी बीमारी का समय काटता रहा । स्त्रियाँ मान-प्रतिष्ठा से घर में ब्रेठी रहीं, और बच्चों के लालन-पालन में लगी रहीं ।

दुर्दिन आने पर पिता का देहान्त हो गया । भाई पृथक्-पृथक् हो गये । पाँच घर और पाँच चूल्हे हो गये । सबसे पहले चौधरी का घर बिगड़ा । उसको एक साहूकार के पास नौकरी करनी पड़ी । बातें करने में चतुर होने के कारण वह अपना निर्वाह नौकरी से करने लगा । मेहनत करने वाले भी पृथक्-पृथक् हो गये । जहाँ साँझी कमाई एक ही चूल्हे पर पकने के कारण सब को खिला पिला कर बच जाती थी, वहाँ एक-एक की कमाई पर पृथक्-पृथक् चूल्हे जलने से किसी का भी पेट नहीं भरता था । इससे सारा परिवार नष्ट हो गया ।

इस लिये मैं कहता हूँ कि यह समय विपत्ति का है । सब मिल कर प्रयत्न करोगे तो सब को खाने को मिलता रहेगा ।

चौधरी ने कहा, “हमें खाना मात्र चाहिए। हम जैसा भी भया, तुम कहोगे करेंगे।”

“जो मेरा कहा मानने को तैयार हैं, वे बैठे रहें। जो अपने मन की करने को हैं, वे चले जायें।”

वहाँ पर आये वे ही थे जो मंगल चौधरी पर विश्वास रखते थे। सब बैठे रहे। अब मंगल ने आगे कहा, “जितने युवा पुरुष हैं, सब कल मेरे साथ नगर चलें। हम सूर्योदय से एक घंटा पूर्व यहाँ से चल पड़ेंगे और सूर्योदय पर नगर में मजदूरों की मंडी में पहुँच जायेंगे। हम सब, जो कुछ काम मिलेगा, करेंगे और मायंकाल लौट आयेगे। जो जिसको मिलेगा उसे एक स्थान पर एकत्रित कर देंगे। और सब का भोजन यहाँ हमारे घर बनेगा। जो लोग काम करेंगे अथवा जिनके घर की औरते यहाँ आ कर खाना बनायेंगी वे और उन सब के बच्चे और परिवार के लोग यहीं खायेंगे। यदि कमाई खर्च से बच गई तो पीछे काम करने वालों में बाँट दी जायगी और यदि खर्च कमाई से अधिक रहा तो मैं उसको पूरा कर दूँगा।

अब मेरा कहना है कि आप लोग अभी से प्रातः-सायं मेरे यहाँ भोजन करें। प्रातः नगर में काम करने वालों के लिये दोपहर का खाना यहाँ से तैयार करके भेज दिया जायगा।”

यह योजना सब की समझ में नहीं आई। इस पर मंगल ने फिर कहा, “देखो भाई ! समझ में आवे या न आवे, मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि जब तक मेरे पास एक भी दाना अन्न का है, मैं आप में से एक को भी भूखा रहने नहीं दूँगा, परन्तु यदि खाली बैठ कर खाने लगे तो सभी कुछ एक मास में ही समाप्त हो जावेगा। कोई नहीं कह सकता कि यह अकाल कब तक चलेगा। इससे आप में से जो लोग काम करने के योग्य हैं वे काम करें। एक बात मैं और कहता हूँ कि

औरतों को नगर में काम करने के लिये भेजने की आवश्यकता नहीं । जब तक पुरुष काम कर सकते हैं तब तक वे गाँव में बैठ कर घर का काम काज करेगी ।”

मंगल की बात सुन चन्नू चौधरी ने खड़े हो कर कहा, “भाइयो ! मंगल भैया की बात बहुत बड़ी है । यह सच है कि एक बाप के पाँच बेटे इकट्ठे रह नहीं सके तो भिन्न-भिन्न माता-पिता की सन्तान कैसे एक हो कर रह सकेंगे । पर यह कठिनाई का समय है । इस काल में जीवित रहने के लिये सब कुछ किया जा सकता है । इसलिये मैं सब से हाथ जोड़ कर प्रार्थना करूँगा कि सब इकट्ठे हो जायें और जैसे मंगल भैया कहें, भैया वैसे करो ।”

पंडित बृजलाल अपने काम में लगा हुआ था । उसने, जब तक पंचायत हो रही थी, खलिहान से अन्न निकलवाया और दस चक्कियों पर उसे पिसवा डाला । पश्चात् एक दम कई चूल्हे जलवा कर रोटियाँ सिकवा दी । उड़द की दाल और चार-चार रोटियाँ पंचायत में आये हुए सब लोगों के लिये तैयार थी । पंडित ने उन सब के घर वालों को भी निमंत्रण भेज दिया था । लगभग अढ़ाई सौ प्राणी का खाना बनते और खाते रात के दो बज गये । प्रातःकाल को काम करने वालों के साथ ले जाने के लिये भी खाना बाँध कर रख दिया गया ।

प्रातःकाल पचास सबल लोग अपने-अपने खाने की पोटली लेकर मंगल के साथ मजदूरों की मंडी में जा पहुँचे । बेकारी और अकाल के कारण मजदूरों की संख्या पहले ही अधिक थी । इस पर जब ये पचास लोग मंडी में और गये तो मजदूरों में खलबली मच गई, परन्तु मंगल ने इस पर ध्यान न दिया और अपने लोगों को ले कर मंडी में जा

पहुँचा । वहाँ माल ढोने का काम चल रहा था । उसने कुछ दुकानदारों से अनुनय-विनय कर प्रायः सब लोगों को काम पर लगवा दिया ।

लगभग दस बजे तक पचास के पचास लोग काम कर रहे थे । इस समय मंगल नगर में काम ढूँढने के लिये चक्कर लगाने लगा । जहाँ मकान बन रहे थे, जहाँ खुदाई अथवा कुटाई पिटाई हो रही थी और जहाँ भी और काम हो रहा था वह सब स्थानों पर पहुँचा । पूछताछ करने पर अथवा भिन्नत-समाजित करने पर उसने भिन्न-भिन्न कामों में अपने आदमी लगवा दिये । इस प्रकार अगले दिन से पचास लोगों के काम का निश्चय कर वह दोपहर का भोजन, जो अपने साथ लाया था, एक कुएँ की जगत पर बैठ कर खाने लगा ।

जब यह भोजन कर रहा था, तो सामने से सोहिनी और उसकी माँ ला० नत्थूमल्ल की फिटन-गाड़ी में बैठे हुए निकल गये । सोहिनी ने भाई को बाज़ार के किनारे कुएँ की जगत पर बैठे रोटी खाते देख लिया था, परन्तु केवल देख कर रह गई । सोहिनी के मन में यही भाव उठ रहा था कि मंगल भी बुरे दिनों के चक्कर में आ गया । उसने माँ को कहा भी, “मंगल भैया कुएँ की जगत पर बैठा रोटी खा रहा है ।”

“मालूम होता है कि किसी मुसीबत में फँस गया है ।”

“गाड़ी खड़ी कर पता करूँ ?”

“छोड़ो ! वह हमें कभी पूछने आता है क्या ?”

“पर माँ ! हमने उसको कभी अपनी बात की सूचना भी तो नहीं दी ।”

माँ ने उत्तर दिया ।

सोहिनी चुप कर रही । उसके मन में भाई को मुसीबत में देख कर कुछ दया का भाव उपजा था, परन्तु शीघ्र ही वह लुप्त हो गया ।

उसी सांयकाल पचासों आदमी एक निश्चित स्थान पर एकत्रित हो गए और वहाँ से गाँव की ओर चल पड़े। वहाँ बृजलाल ने सबको कहा, “आप सबके के लिए भोजन मंगल भैया के घर पर बना है। आपकी स्त्रियाँ बना रही हैं। बगिया के कुएँ पर स्नान करो और रात्रि का आहार करो।”

सबने पंडित बृजलाल के पास अपनी मजदूरी की रकम जमा कर दी। कुल पैसठ रुपए थे। सब को और उनके परिवार वालों को पेट भर खाना मिला। लोग खा-पी कर अपने-अपने घर जा कर सो गए। उनकी स्त्रियाँ अगले दिन का भोजन बनाने लग गईं।

पंडित ने सबके गाय-बैलों के लिए भूसे-चारे का प्रबन्ध करना भी आरम्भ कर दिया। सांयकाल के दूध की दही जमा दी जाती थी। उसे प्रातः बिलो कर उसकी लस्सी बना दी जाती और सबको वह पीने को दे दी जाती। दिन के समय का दूध बिलो कर मक्खन बना लिया जाता और मक्खन से घी बना कर उसे अगले दिन बेचने के लिए नगर में भेज दिया जाता।

काम चलने लगा। इस आयोजन में सम्मिलित होने वालों की संख्या भी बढ़ने लगी। आय बढ़ने लगी और खर्च प्रबन्ध के सुधरने से कम होने लगा। पशुओं की रक्षा से कुछ बैलगाड़ियाँ नगर में माल ढोने को जाने लगीं। दूध भी नगर में जा कर बिकने लगा।

मंगल के खलिहान में कुछ अधिक अन्न नहीं था, इससे बाज़ार से खरीदने की आवश्यकता पड़ गई। आवश्यकतानुसार मोटा अन्न खरीद कर लाया जाने लगा। मंगल की मोटी बुद्धि में आई बात पंडित बृजलाल के व्यवस्थित मन से मार्जित हो कर एक योजना बन गई, और

वह मंगल पर विश्वास रखने वालों के पुरुषार्थ से सुविधा की साधन बन गई।

एक महीने के पश्चात् हिसाब देखा गया, तो कुछ सौ रुपया बच गया था। मंगल ने बाज़ार से कपड़ा खरीद कर औरतों के लिए पहनने के लिए कुछ कपड़े बनवा उन्हें बँटवा दिया। बच्चों के लिए भी कुछ पढ़ने-लिखने का प्रबन्ध होने लगा।

मंगल चौधरी एक सौ से ऊपर लोगों के लिए नित्य अच्छे से अच्छा काम ढूँढ़ने में लगा रहता था। पंडित बृजलाल सबके खाने-पहिनने का वाम करता था। मोहिनी सबके लिए भोजन बनवाने और सबको खिलाने का प्रबन्ध करने में लगी रहती थी।

५

कई माम तक यही क्रम चलना रहा। अब एक नवीन कठिनाई आ उपस्थित हुई। वर्षा अगले वर्ष भी नहीं हुई। कुयों में पानी और भी सूखने लगा। अन्य गाँवों के लोग भी नगर में मजदूरी करने के लिए पहुँचने लगे। लोग सहस्रों की संख्या में मजदूरों की मंडियों में नित्य जाते और आधे से अधिक बिना काम पाए लौट आते।

पहले तो मंगल की भगदौड़ के कारण उनके गाँव के सब आदमियों को कुछ न कुछ काम मिलता रहा। परन्तु धीरे-धीरे मजदूरी कम होने लगी, बेकारी बढ़ने लगी और अनाज, जो अब बाज़ार से खरीदना पड़ता था, महँगा होने लगा। भूसा न मिल सकने के कारण पशु भूखों मरने लगे। यह घोर समस्या गाँव वालों के सम्मुख उपस्थित हो गई। परन्तु मंगल ने अपने वचन का पालन किया। खर्च में जितनी कमी होती वह अपने पास से देता था। इधर सब्जियों के खेतों की, पानी की कमी के

कारण, पैदावार कम होने लगी और वर्षा न होने से वायु में शुष्कता बढ़ गई। परिणामस्वरूप सब्जियों में रस कम होने लगा।

एक दिन जब सब लोग खा-पी कर अपने-अपने घर आराम करने चले गये, तो चौधरी चन्नु और पंडित बृजलाल मंगल से बात-चीत करने लगे, “मंगल भैया !” बृजलाल ने कहा, “यह क्रम कब तक चल सकेगा ?”

“पंडित जी, जब हमने यह आयोजन चलाया था, तो पहले कई मास तक आय अधिक रही और खर्च कम। परन्तु जब दूसरे गाँव वालों ने भी मजदूरी करने के लिए नगर में आना आरम्भ कर दिया तो हमारे लोगों में बेकारी बढ़ने लगी। इस कारण आय कम होने लगी और खर्च मँहगाई के कारण बढ़ने लगा। अब नौ मास से ऐसा ही चल रहा है। लगभग डेढ़ सहस्र रुपया मासिक की हानि दे रहा हूँ। इस समय मेरी पूँजी पचीस हजार से घट कर दस हजार रह गई है। मेरा विचार है कि वह दिन अब समीप है जब मेरी सारी सम्पत्ति इस कार्य में समाप्त हो जायगी। उस परिस्थिति के उत्पन्न होने से पूर्व यदि भगवान की कृपा हुई और वर्षा हो गई तब तो मान-मर्यादा बच जायगी, अन्यथा सब हूबगे।”

“मेरा विचार है कि उस अवस्था के उत्पन्न होने से पहले ही कुछ लोगों को यहाँ से किसी अन्य बड़े नगर में भेज दें।”

“परन्तु जायेंगे तो वे जो काम करने के योग्य हैं। कठिनाई तो स्त्रियों, बूढ़ों और बच्चों की है। वे यहाँ भूखे मरेंगे।”

चौधरी का कहना था, “मंगल, तुमने बहुत किया है। हम तुम्हारा दिया उतार नहीं सकते। परन्तु अब तुम से और सहायता लेना पाप होगा। मेरी सम्मति तो यह है कि तुम कल सबको यह कह दो कि तुम

से और अधिक नहीं हो सकता, अतः एक सप्ताह के भीतर सब अपना-अपना प्रबन्ध कर लें।”

मंगल चुप था। उसके मन में घोर संघर्ष चल रहा था। क्या सत्य ही उसने इन लोगों की सहायता का बदला चुका दिया है? एक दूसरा विचार भी उसके मन में उठ रहा था। वह सोच रहा था कि यदि सहायता बन्द करने से एक भी औरत को अपना सतीत्व बेचना पड़ा तो वह घोर पाप का भागी बन जायगा। आखिर उनके पास जो कुछ भी है वह इनकी मेहनत से ही तो प्राप्त हुआ है। अब इस कठिन समय में यदि यह सभी कुछ इनके प्रयोग में नहीं आता तो कृतघ्नता होगी। यदि उनके पास कुछ भी न रहा तो वह भी सब के बराबर हो जायगा। इससे अधिक क्या होगा !

इस विचार के बाद उसके मन में मोहिनी और बच्चों के भीख माँगने का दृश्य भी सामने आने लगा। इस दृश्य का चिन्तन कर वह काँप उठा। परन्तु पुनः मन दृढ़ कर वह यह सोचने लगा कि उसने कौन सा बुरा काम किया है जिससे भगवान्‌ उनको इतना कठोर दण्ड देगा।

जब वह बहुत देर तक चुप बैठा रहा तो पंडित ने समझा कि मंगल के मन में चन्नू चौधरी की बात बैठ गई है। उसने कहा, “तो मंगल भैया, मैं कल सब को सचेत कर दूंगा। परन्तु तुम्हें कुछ काल के लिए गाँव से टल जाना चाहिए। मोहिनी और बच्चों को लेकर यहाँ से चले जाना ही अच्छा रहेगा।”

“क्यों?”

“इसलिए कि जब लोग बेचारे भूखों मरेंगे तो इनकी मनोवृत्ति बिगड़ जायगी। भूख से पीड़ित हो ये घोर पाप करेंगे। यह सब कुछ तुम से देखा नहीं जाया, और तुम्हें अति दुःख होगा।”

“देखिये पंडित जी मैं अभी कुछ निश्चय नहीं कर सकता। अभी इन लोगों को कुछ कहना नहीं। मैं कल तक विचार कर अपना व्यवहार निश्चित करूँगा। इस पर भी इतना तो निश्चय ही समझ लो कि यदि मैं यहाँ से जाऊँगा भी तो अपना सभी कुछ इन कामों को दे कर जाऊँगा। केवल तन ढाँपने का कपड़ा और रेल का भाड़ा भर ले कर यह गाँव छोड़ूँगा। इस गाँव की कमाई यहाँ के रहने वालों की भलाई के लिए ही रहेगी।”

चौधरी ने मंगल को ऐसा करने से रोका, परन्तु वह अपनी बात पर दृढ़ था। उसने उठते हुए कहा, “मुझे बहुत शोक है कि मैं इन लोगों की मुसीबत को और बाँट नहीं सकता, परन्तु मैं यहाँ रहूँगा अथवा नहीं इसका अभी पता नहीं और यहाँ से जाऊँगा भी तो कब जाऊँगा, यह कल तक बताऊँगा।”

रात को जब वह घर पहुँचा तो उसने यह बात मोहिनी से कही। वह पहले ही अपने पति चौधरी और पुजारी की सब बातें किवाड़ के पीछे खड़ी सुन चुकी थी। इससे सोने से पूर्व उसने ही बात आरम्भ कर दी। “क्या करने जा रहे हैं आप?”

मंगल बोला, “मैं कुछ निश्चय नहीं कर पाया। मेरा अपना प्रश्न होता तो मैं गाँव छोड़ कर किसी शहर में चला जाता, परन्तु मोहिनी! तुम्हें और बच्चों को भिखारी बना कर दर दर भटकता फिरूँ, यह समझ में नहीं आ रहा।”

“एक बात कहूँ?”

मंगल उसके मुख पर प्रश्नभरी दृष्टि से देखता रहा। इस पर मोहिनी ने अपनी बात कही, “जाने की आवश्यकता नहीं। अभी छे मास और काम चलाने का रुपया तो हमारे पास है ही। तब तक तो

यह क्रम चलने दीजिये । पीछे देखा जायेगा । इस भीर के समय इनको छोड़ कर चले जाने से काम नहीं बनेगा । मैं तो भगवान पर पूर्ण भरोसा रखती हूँ । क्या वह सदैव रूठा ही रहेगा ?

देखिये, यह आपाढ़ चल रहा है, दस बारह दिन में वर्षा होनी चाहिए । यदि एक बार वर्षा आरम्भ हो गई तो फिर रुकेगी नहीं और पिछले वर्ष का संचित जल भी आयगा ।”

“बहुत आशावादी हो मोहिनी !”

“हाँ ।”

“पर यह तो समझो कि यदि वर्षा आरम्भ हो भी गई तो भी खाने को एक दम नहीं मिल जायगा । कई महीने लग जायेंगे अन्न को उपजाने में । तब तक कुछ तो खाने को मिलना चाहिये ?”

“यह तो तुम सब के विचार और प्रबन्ध की बात है ।”

“पर मोहिनी !” मंगल ने हँसी में कहा, “तुम्हारा मकान फिर रह गया । ईंटें बनी रह गई हैं ।”

“भगवान को जब स्वीकार नहीं, तो क्या हो सकता है ।”

“इन दिनों गाँव के लोगों के लिए काम ढूँढते समय मुझे कई बातों का अनुभव हुआ है । मैं समझता हूँ कि धन के लिए घर से निकलने की आवश्यकता है । जब चौधरी कह रहा था कि लोगों को अपने भाग्य पर छोड़ दूँ और पंडित कह रहा था कि मैं यहाँ से कहीं दूर चला जाऊँ तो मैं अपने मन में एक योजना बना रहा था ।”

“क्या ?”

“मुझे नगर के एक ठेकेदार ने यह मति दी थी कि अफ्रीका चला जाऊँ । उसका कहना था कि इतनी मेहनत जो यहाँ कर रहा हूँ, यदि वहाँ कर सकूँगा, तो पाँच वर्ष में मालामाल हो जाऊँगा ।”

“तो मैं कहाँ रहूँगी ?”

“तुम भी मेरे साथ चलोगी ।”

“मुझे कोई आपत्ति नहीं । कितना खर्च बैठेगा वहाँ जाने का ?”

“लगभग एक सौ रुपया वहाँ जाने को और एक सहस्र रुपया काम-काज शुरू करने के लिए ।”

“बस !”

“हाँ ! इतना ही ।”

“तो ठीक है ।”

“परन्तु यह मैं तब ही कर सकता हूँ, जब शेष धन गाँव वालों को दे दूँ ।”

“मुझे धन-दौलत की लालसा नहीं । भगवान ने देना होगा तो फिर देगा । मैं तो यही चाहती हूँ कि सदा तुम्हारे अंग-संग रहूँ और अपना तन-मन तुम्हारी सेवा में अर्पण कर सकूँ ।”

६

प्रातः चालीस के लगभग लोग नगर में मजदूरी के लिए चले गये । इन लोगों की मजदूरी पक्की थी । उन्हें एक रुपया प्रतिदिन प्रत्येक को मिलता था । इनके अतिरिक्त पचास से ऊपर लोग नित्य मंडी में जाते थे और जैसा भी काम मिलता था, करते थे । इन में से कभी भी पन्द्रह-बीस से अधिक को काम नहीं मिला था । ये लोग पन्द्रह सोलह रुपया नित्य पाते थे । कुछ लोग मंगल के सब्जी के खेतों में काम करते थे । कुआँ में पानी कम था और भूमि में तपश अधिक । इस पर भी कुछ न कुछ पैदा होता ही रहता था ।

एक बात यहाँ विशेष हो रही थी । वह यह कि काम मिले न मिले, खाने को सब को मिल रहा था । बाल, वृद्ध और स्त्रियाँ मिल कर खाने वाले प्राणी चार सौ के लगभग थे, उनके लिए अन्न-अनाज बाज़ार से लेना पड़ रहा था । बैलों को गाड़ियों में जोत कर नित्य

नगर में भेज दिया जाता था। इससे कुछ गाड़ीवानों को काम मिल जाता। जो कुछ भी वे कमा कर लाते थे कठिनाई से बैलों के लिये भूसा और दाने के लिये पर्याप्त हो पाता। इस सब कमाई और खर्च का प्रबन्ध पंडित बृजनाल रख रहा था। इन प्रकार सब मिल-मिला कर चालीस-पचास का नित्य घाटा हो रहा था।

आस-पास के दूनरे गाँवों में तो लोग भूखे मरने आरम्भ हो गये थे। युवा स्त्रियाँ अपने घर वालों को छोड़ भाग रही थी। कई माता-पिता बच्चों को ले कर नगर की सड़को पर छोड़ आते थे। उनमें से कई तो यतीमखानों में पहुँच गये थे और कुछ को कोई और उठा ले जाते थे।

दिन-प्रतिदिन मंगल का कोष खाली होता जा रहा था। अंत में एक दिन मंगल नगर से लौटा और पंडित को बुला कर बोला, “पंडित जी मेरे पास इस समय आठ हजार रुपया शेष रह गया है। एक हजार पाँच सौ रुपया ले कर मैं परदेश जा रहा हूँ। शेष रुपया मैं आप लोगों को सौंप जाऊंगा। इसको प्रयोग में लाइये। भगवान करे कि इसके समाप्त होने से पूर्व ही आप पर उसकी कृपा हो जाय और गाँव के लोग उन अनर्थों से बच जावें जिन के भागी अन्य गाँवों के लोग हो रहे हैं।”

“कहाँ जा रहे हो भैया ?”

“नरोबी ! नगर का एक सज्जन वहाँ ठेकेदारी करता है। वह मुझे अपने साथ ले जा रहा है।”

“चौधाराइन यहाँ रहेंगी क्या ?”

“नहीं। वह भी मेरे साथ ही जायगी। बच्चों के परवाने भी बन चुके हैं।”

पण्डित मंगल के इस निर्णय को सुन अवाक् रह गया। उसी रात

जब सब लोग भोजन कर चुके तो चौधरी ने पंचायत बुलाई । और सब के सामने मंगल ने आठ हजार रुपये नक़द पण्डित जी के हाथ में दे कर अपना निश्चय बता दिया ।

वे लोग जो नगर में काम पर जाते थे, दूसरे गाँवों के लोगों की दुर्दशा को देख रहे थे । उनके मुकाबले में जब वे अपने गाँव की स्त्रियों और बच्चों को हूँट-पुँट और कुछ न कुछ काम करते देख रहे थे तो वे समझते थे कि यह सब कुछ इस कारण से है कि वे सब मिल कर काम कर रहे हैं और मंगल ने अपना सब कुछ उन पर न्योछावर कर दिया है । आज मंगल को अपनी सम्पत्ति की अन्तिम आहुति देते देख कर सबके हृदय द्रवित हो उठे । सब जानते थे कि मंगल का उनमें से चला जाना उनके अत्यन्त दुःख का कारण होगा । परन्तु वे यह भी उचित न समझते थे कि अपने स्वार्थ के लिए वे उसके मार्ग में कोई बाधा खड़ी करें ।

बहुत लोगों की आँखों में से आँसू बहने लगे । परन्तु वे मुख से कुछ कह नहीं सके । मंगल ने इसके साथ यह भी कह दिया, “यदि भगवान का कोप मिट गया और वर्षा हो गई तो मेरी सब भूमि और मेरी सव्ज़ी भाजियों के खेत पर पंडित बृजलाल जी को अधिकार होगा । वे इनको जैसे भी चाहें, प्रयोग में लावें ।”

लोग इस उदारता को देख चकित रह गए । मन में यह चाहते हुए भी कि मंगल वहाँ से न जाय, वे उसको रोक नहीं सके ।

जिस दिन मंगल अपनी बैलगाड़ी में, जिसे वह पंडित बृजलाल को दे चुका था, अपने परिवार को लाद नगर को चला, उस दिन गाँव के सब नर-नारी उसको विदा करने के लिए गाँव के बाहिर तक आए । पंडित बृजलाल, चन्नु चौधरी और गाँव के कई अन्य लोग मंगल के साथ

साथ बैलगाड़ी के पीछे-पीछे नगर तक आए और उसको रेलगाड़ी में चढ़ाने स्टेशन तक पहुँचे ।

वह ठेकेदार भी, जिसके साथ मंगल जा रहा था, उसके साथ उसी गाड़ी से जा रहा था । उसको भी उसके सम्बन्धी और मित्र स्टेशन पर विदा करने को आए हुए थे । वे सब गाँव के लोगों को मंगल के विदा होने पर रोते देख चकित हो रहे थे । वे मन में सोचते थे कि क्या गृण हैं इस आदमी में कि लोग इस प्रकार इसके वियोग से विह्वल हो रो रहे हैं ।

जब वे समझ नहीं सके तो उनमें से एक ने पंडित बृजलाल से पूछा, “कौन है यह आदमी ?”

“देवता है । भगवान का रूप है । दया का भंडार है । क्या बतावें साहब, हमारा तो सर्वस्व है ।”

मंगल एक सार्वजनिक स्थान पर, सबके सामने, इस सहानुभूति के प्रदर्शन से बहुत ही सकुचा रहा था । उसने भगवान को धन्यवाद किया, जब गाड़ी ने सीटी बजाई और मंगल ने खिड़की में खड़े हाथ जोड़ सबको कहा, “भैया भूलचूक क्षमा करना । जीवित रहा तो फिर आऊंगा और आप लोगों की सहानुभूति का प्रसाद लूंगा ।”

७

मंगल के चले जाने पर गाँव के कामों में, जो सब मिलकर निर्वाह कर रहे थे, फूट पड़ने लगी । पंडित बृजलाल जब सांयकाल वाम से लौटें हुए लोगों से मजदूरी के रुपये माँगता तो लोग झूठ बोल देते, “पंडित, आज तो काम ढूँढ़ते-ढूँढ़ते पाँव के तलुवे घिस गए हैं ।” परिराम यह हुआ कि दो-चार दिन में ही आय सत्तर-अस्सी रुपये रोज़ाना से घट कर तीस-पैंतीस रह गई । पंडित और चौधरी लोगों को समझाने का यत्न करते कि इकट्ठे रहने में लाभ है परन्तु इस समझाने का परि-

ग्राम उल्टा ही होता जाता था। एक को तो पंडित ने रंगे हाथों पकड़ा भी। ऐसे लोगों की जब तलाशी ली गई और उनकी अंटी से मजदूरी के पैसे बंधे निकले तो वे अपने परिवार के लोगों को ले कर इस गोल से पृथक् हो गए। इस प्रकार अवस्था दिन प्रतिदिन बिगड़ने लगी। अवस्था यहाँ तक पहुँच गई कि गोल की कुछ स्त्रियाँ नगर में जा कर काम करने पर विवश हो गईं। उन्हें नगर की हवा लगने लगी।

मंगल का रुपया समाप्त होने से पूर्व गोल टूटता प्रतीत होने लगा था। परन्तु परमात्मा को पंडित बृजलाल की लाज रखनी थी कि श्रावण की पहली को ही ऐसी वर्षा लगी कि सूखी भूमि का पेट भर गया। तीन दिन तक भाड़ी रही और चारों ओर जल ही जल हो गया।

पंडित बृजलाल ने चन्नू चौधरी को बुलाया और गोल में जो शेष आदमी बच गए थे उनको पाँच-पाँच रुपए दे कर विदा किया और मंगल के खेतों में हल चलवा दिया।

सब्जी-भाजी की खेती जो जल के अभाव से सूखी हो रही थी पुनः सजीव हो उठी और पन्द्रह दिन के भीतर ही पालक और मेथी का माग विकने के लिए नगर में जाने लगा। पृदीने के पौधों में भी पल्लव फूटने लगे और इसकी गट्टियाँ बाँध नगर में जाने लगी।

नित्य कुछ न कुछ आय होने लगी और उससे मजदूरों को मजदूरी दे कर खेतों में काम कराया जाने लगा।

जो लोग मंगल के गोल में आन तक रहे उनको पंडित ने मंगल के खेतों में काम दे दिया और दूसरों को अन्य जमींदारों के पास काम के लिए जाना पड़ा।

पंडित बृजलाल अपनी स्त्री के साथ मंगल का प्रतिनिधि बन उसके घर में आ कर रहने लगा। उसने मंगल के गाय-बैलों का पालन-पोषण

भी आरम्भ कर दिया। दूध, दही, मक्खन, लस्सी उसी प्रकार गाँव में बटने लगी जैसे मंगल के काल में बटती थी। और कामों से उसी प्रकार का व्यवहार होने लगा जैसे मंगल किया करता।

इस पर भी गाँव के लोग पंडित पर यह संदेह करते थे कि वह मंगल की सम्पत्ति हड़प किये जा रहा है। गाँव के दूसरे ज़मींदार, जो मंगल के रहते हुए उससे डरते थे, अब पंडित बृजलाल को प्रवृत्त करता देख कर उसकी भूमि और पानी पर अनुचित अधिकार जमाने लग गये थे। पंडित के कहने, समझाने और धमकी देने पर भी कोई प्रभाव नहीं हुआ। सब गाँव के लोगों में इतनी अव्यवस्था फैल गई थी कि कोई किसी से सहानुभूति नहीं रखता था।

जब फसल कट कर और भाड़ फूंक कर लाई गई तो मंगल के घर में डाका पड़ गया। पंडित और पंडिताइन के हाथ-पाँव बाँध कर उन्हें दरवाज़े के बाहर सर्दी में ठिठुरने छोड़ दिया गया और डाकू सब अन्न-अनाज उठा कर ले गये।

प्रातःकाल गाँव वालों ने उनके बन्धन खोले और गाँव भर के लोग उनसे सहानुभूति प्रकट करने के लिये आ कर उपस्थित हुए। गाँव का मुखिया भी रात के डाके का समाचार पा पंडित बृजलाल से संवेदना प्रकट करने चला आया। पंडित खाट पर बैठे गाँव वालों की बातों को चुपचाप सुन रहा था। उसने अपने मुख से केवल इतना कहा था, “घर में जो कुछ था डाकू उठा कर ले गये हैं, यहाँ तक कि रोटी पकाने के बर्तन भी नहीं छोड़े। जब मुखिया आया तो पंडित ने आशीर्वाद दी और खाट पर बैठने को स्थान दिया। मुखिया ने बैठते हुए कहा, “पंडित बृजलाल ! सुना है कि यहाँ डाका पड़ा है।”

“चौधरी ! ठीक सुना है तुमने ।”

“क्या कुछ ले गए हैं यहाँ से ?”

“जो कुछ यहाँ था ।”

“तो पुलिस में रिपोर्ट लिखवाई है ?”

“नहीं ।”

“क्यों ?”

“इसलिए कि रिपोर्ट में यह भी लिखवाना पड़ेगा कि मुझे सन्देह किन पर है । सन्देह की बात ही नहीं, मुझे तो विश्वास है कि किन्हों ने यह कर्म किया है ।

“पर चौधरी, ये भी अपने ही तो हैं । यह सब कुछ उनका अपना ही था । मैंने भी तो उन्हीं में यह बाँट देना था । न भूमि मेरी है, न बीज मेरा । मेहनत करने वाले गाँव के लोग थे । मेरे तो कोई सन्तान भी नहीं जिसके लिए मैं कुछ रखना चाहूँ । न भैया, मैं रिपोर्ट नहीं लिखाऊँगा ।”

चौधरी भौचका मुख देखता रह गया । पंडित ने कहा, “चौधरी, दूध पियोगे क्या ?”

“नहीं, बहुत कृपा है तुम्हारी । पर पंडित, मैं एक बात कहने आया था । थाने में रिपोर्ट न लिखवाई तो अच्छा न होगा । पुलिस समझेगी कि तुम भी चोरों से मिले हुए हो, और मंगल को धोखा देने के लिए रिपोर्ट नहीं लिखवाई ।”

पंडित ने माथे पर त्योंरी चढ़ाकर कहा, “जो मुझे यह कहेगा, मैं उसको यह कह दूँगा कि गाँव के एक प्रमुख व्यक्ति के पुत्र को बचाने के लिए मैं चुप हूँ । उस लड़के को चौधरी तुम भी जानते हो और मैं भी जानता हूँ ।”

समीप खड़े लोग विस्मय में मुखिया का मुख देखने लगे। मुखिया ने कहा, “यह कह क्या रहे हो पंडित ?”

“नाम सुनना चाहते हो चौधरी, तो आग्रो घर के भीतर। मैं तुमको बता सकता हूँ।”

पंडित मुखिया को घर के भीतर ले गया और पन्द्रह मिनट तक वे दोनों घर के भीतर रहे। अन्त में दोनों बाहिर निकले। मुखिया चुपचाप मुँह लटकाए अपने घर की ओर चला गया।

८

इस डाके का समाचार पुलिस वालों के पास पहुँचा और वे भी पंडित बृजलाल के पास आए। उनमें थानेदार स्वयं भी था। उसने तनिक डाँट कर रहा, “पंडित, यह क्या बात है कि तुमने अपने घर में डाका डाले जाने की सूचना थाने में नहीं दी ?”

“जो बात घटी नहीं, उसकी थाने में सूचना क्या देता ?”

“तो इस घर में डाका नहीं पड़ा ?”

“नहीं जी।”

“लोग कहते हैं कि उन्होंने तुम्हारे और पंडिताइन के बँधे हुए हाथ-पाँव प्रातःकाल खोले थे।”

“यदि पुत्र ने क्रुद्ध होकर माता-पिता के हाथ-पाँव बाँध दिए तो क्या किया जा सकता है ! मेरा उसके विरुद्ध कोई अभियोग नहीं।”

“पुत्र ! तुम्हारे पुत्र कब हुआ है ?”

“ऐसा कहने में मैं आपको दोष नहीं दे सकता। आप मेरे मत को नहीं जानते। हमारे यहाँ ब्राह्मण समाज का पिता माना जाता है। गाँव के लोग मेरी सन्तान हैं। वे भूल से समझते थे कि मैं उनका भाग उनको ठीक रूप में नहीं दे रहा। इससे अपना भाग उठा कर ले गए।”

“तो तुमने खेत में काम करने वालों को मजदूरी नहीं दी थी क्या ?”

“मंगल भैया के खेत में कोई भी मजदूर नहीं है। सब पत्तीदार हैं। प्रत्येक का अपना-अपना भाग है। कुछ लोगों का कहना है कि मैंने उनका भाग बाँटने में भूल की थी। उस भूल को उन्होंने सुधारने का यत्न किया है।”

“इसका अर्थ यह निकला कि तुमने हिस्सा बाँटने में भूल की थी।”

“वे ऐसा ही समझते प्रतीत होते हैं। मैं उन को समझा रहा हूँ कि मैंने भूल नहीं की।”

“यदि वे न समझें तो ?”

“तो मैं एक उदार पिता के नाते बालकों की भूल को क्षमा कर देना चाहता हूँ।”

“मालूम होता है कि तुम डाकुओं से मिले हुये हो ?”

“अपने ही घर में डाका डालने के लिए ? विचित्र बात है !”

“तुम रिपोर्ट क्यों नहीं लिखवाते ?”

“मे इसको डाका मानता ही नहीं। देखिये मीर साहब ! ये खेत गाँव के हैं। इन पर मेहनत गाँव वालों ने की है। इसकी उपज गाँव वाले उठा कर ले गये हैं। मेरा इममें न कुछ था, न कुछ गया है। मैं तो मन्दिर के आश्रय पर जीवित रहता हूँ।”

थानेदार बहुत परेशान था कि किस प्रकार इस समस्या को सुलझाये। उसके मस्तिष्क में एक बात आई कि पण्डित को थाने में बुलवा कर पिटवाया जाय तो बक जायगा। इससे उसने कहा, “कुछ भी हो अभी एक घंटे में थाने हाज़िर होना।”

“बहुत अच्छा।”

थानेदार चला गया। सब लोग, जो पण्डित जी से संवेदना प्रकट करने आये थे, विस्मय में पण्डित को देखते रह गये। एक ने कह दिया “पण्डित जी, आपने रिपोर्ट लिखवा क्यों नहीं दी ?”

“भैया ! किसके विरुद्ध लिखवाऊँ ! एक हाथ दूसरे हाथ की निन्दा करे। मुख नाक और कान कटवाने का यत्न करे ! यह गाँव का समाज एक परिवार के समान है। इस समाज का पुरोहित मैं हूँ। मैं ही लोगों को कैद करवाना आरम्भ कर दूँ। यह मुझ से नहीं हो सकता।”

“परन्तु इससे तो अव्यवस्था हो जायगी। अधिकारी और अनधिकारी में भेदभाव ही मिट जायगा।”

“आदिकाल से मनुष्य ने दण्ड-विधान बनाया है। क्या लोग इस दण्ड-विधान से भयभीत हो कर अपराध करना छोड़ बैठे हैं ? मनुष्य ने अपराध करना छोड़ा है तो इसलिए कि उसकी अन्तरात्मा में भगवान का प्रकाश हो रहा है। प्रकाश दण्ड-विधान से नहीं प्रत्युत मन को सत्य और न्याय की प्रेरणा से होता है।”

गाँव में बहुत कम लोग थे जो पण्डित बृजलाल की भावना को समझ सके। इन कम लोगों में प्रायः वे थे कि जिन्होंने डाका डाला था और पण्डित से यह आशा कर रहे थे कि वह थाने में रिपोर्ट लिखवाएगा और वे रात को किसी अन्य स्थान पर होने की बात को सिद्ध कर छूट जायेंगे।

दोपहर को भोजन कर पण्डित बृजलाल थाने जा पहुँचा। वहाँ पहुँचते ही थानेदार ने एक कान्स्टेबल को आज्ञा दी कि पण्डित को कुकड़ बनाओ। बस फिर क्या था ! दो सिपायियों ने पकड़ पण्डित को

टेढ़ा कर दिया। टाँगें चौड़ी करा कर और उसके हाथों को टाँगों में से निकलवा कर उसको कान पकड़ने पर विवश किया। जब पण्डित इस प्रकार कुकड़ू बना हुआ था तो गाँव के लोगों को पता चल गया और दस मिनट में ही आधे से अधिक गाँव वहाँ आ कर एकत्रित हो गया।

गाँव के मुखिया को भी पण्डित को कष्ट दिये जाने की सूचना मिली। वह जैसा बैठा था वैसा ही चला आया। जब वह वहाँ पहुँचा तो कुकड़ू बने पण्डित की पीठ पर एक सिपाही ईंट रख रहा था। पण्डित की स्त्री पास खड़ी रोती हुई, उसे यह न करने की प्रार्थना कर रही थी। गाँव के लोग क्रोध में उतावले हो परस्पर कानाफूँसी कर रहे थे। मुखिया ने जब यह दृश्य देखा तो उसके रोंगटे खड़े हो गये। वह थानेदार के पास जा कर कहने लगा, “मीर साहब ! यह क्या कर रहे हैं आप ?”

“इस बदमाश पण्डित को सीधा कर रहा हूँ।”

“भूल कर रहे हो मीर साहब ! यह बदमाश नहीं है। यह डाके में गए माल को वापिस पाने का यत्न कर रहा है। उसे तुम्हारा डंडे का तरीका पसन्द नहीं। उसकी फरियाद भगवान से तथा उनके द्वारा समाज की आत्मा से है।”

“मैं इन बातों को नहीं जानता। उसे रिपोर्ट लिखवानी ही होगी !”

मुखिया को क्रोध चढ़ आया, परन्तु अपने रोष को भीतर ही भीतर पी कर बोला, “कैसी रिपोर्ट लिखना चाहते हो ?”

“डाके की। और कैसी ?”

“पर डाका तो पड़ा ही नहीं।”

“डाका नहीं पड़ा, कैसे कहते हो तुम ?”

“कोई रिपोर्ट लिखवा गया है तुम्हारे पास कि डाका पड़ा है ?”

“किसी मुखबिर ने बताया है ।”

“उससे लिखवा लो, नहीं तो वह झूठ बोलता है ।”

“उसके झूठ-सत्य का निर्णय ही तो कर रहा हूँ ।”

“एक बेगुनाह को पीट कर ?”

इसी समय बाहर बहुत शोर होने लगा । मुखिया थाने के भीतर एक कमरे में बात-चीत कर रहा था । पण्डित बृजलाल थाने के सेहन में कुकड़ू बना हुआ था । जब पण्डित की पीठ पर दस मोटी-मोटी ईंटें रख दी गईं तो वह अपना संतुलन ठीक नहीं रख सका और मुख के बल गिर पड़ा । पण्डिताइन, जो समीप खड़ी सिपाही से याचना कर रही थी, अपने पति को गिरता देख, भाग कर उसके पास गई और ईंटों को उठाने लगी । सिपाही ने लाठी से पण्डिताइन को धकेलने का यत्न किया । इस पर गाँव के लोगों को क्रोध चढ़ आया और वे पण्डिताइन पर लाठी चलाने वाले पर पिल पड़े । सिपाही लाठी छोड़ भाग गया । वह, जो पण्डित की पीठ पर ईंटें रख रहा था, घायल हो गया और गाँव वालों से हाथ जोड़ कर क्षमा माँगने लगा ! इस समय थानेदार और मुखिया बाहर आ गये और घायल सिपाही को हाथ जोड़ याचना करते देख कर थानेदार आगबगूला हो गया । उसने तुरन्त जेब से सीटी बजाने को निकाल ली । मुखिया ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा, “क्यों मूर्खता कर रहे हो ? ये लोग अपने गाँव के पुरोहित को इस प्रकार पिटा नहीं देखेंगे । दस बीस आदमी यहाँ मर जायेंगे और कौन मरेगा कोई नहीं कह सकता । मेरा कहा मानो, पण्डित जी का जाने दो और अपनी तहकीका ठीक ढंग से चलाओ । यह तरीका सफल नहीं हो सकेगा ।”

थानेदार परिस्थिति को समझने का यत्न करने लगा। गाँव के बदमाश तो उससे पहले ही रुष्ट थे। इस ब्राह्मण को अकारण पिटवाने से तो उसका अपना हृदय भी दहल गया था। उसने आज्ञा दी, “पंडित को छोड़ दो।”

दो मिनट में लोग पंडित बृजलाल को कंधों पर उठा कर उसके घर ले गये।

उसी रात पंडित के घर से जो कुछ माल चोरी हुआ था सब का सब उसके घर में वापिस आ गया, और अपने-अपने स्थान पर रख दिया गया। कुछ सामान टूट गया था, वह टूटा हुआ ही वापिस पहुँचा दिया गया। इसमें गाँव के मुखिया का हाथ था। उसका अपना लड़का इस ढाके में सम्मिलित था और वह ही पंडित के व्यवहार से सबसे अधिक प्रभावित हुआ था।

६

नरोबी से पंडित बृजलाल को पत्र आया। उसमें मंगल ने लिखा था, “मैं और मोहिनी वच्चों सहित बड़े मजे में हैं। यह ठीक है कि यहाँ के लोग रंग के बहुत काले और जंगली हैं, परन्तु ये सरल, सीधे और सत्य स्वभाव के हैं। मैंने ठेकेदारी का काम आरम्भ कर दिया है। एक बड़े ठेकेदार ने एक सौ मील लम्बी सड़क बनाने का ठेका लिया है। उसमें से मुझे पहले एक मील की सड़क को तैयार करने का काम मिला था। वह मैंने एक मास में तैयार करवा दी पश्चात् मुझे पाँच मील का एक और भाग मिला। वह भी समाप्त कर चुका हूँ। अब उस सड़क का अंतिम पाँच मील लम्बा भाग मिला है। दो मास में वह भी समाप्त करवा दूँगा।

अभी तक मुझे छै हजार रुपये के लगभग लाभ हुआ है। यहाँ काम

बहुत है। करने वाले भी बहुत हैं। परन्तु प्रबन्धकर्ता कम हैं। हम हिन्दुस्तानी यह काम कर रहे हैं। मेरा काम केवल मजदूरों को काम पर लगाना और उनसे काम लेना है। यहाँ मजदूरों को एक सप्ताह की मजदूरी अग्रिम देनी पड़ती है। और उसे फिर थोड़ा-थोड़ा नित्य की उजरत में से काटना पड़ता है। इस प्रबन्ध से मुझे हजारों रुपयों का लाभ हो रहा है।

सड़क जंगल में से निकाली जा रही है, इस कारण जंगली जानवरों से बचने के लिए एक बहुत बड़िया बन्दूक मैंने ले रखी है। लाठी की भाँति कंधे पर रख यहाँ घूमा करता हूँ।

दूध, दही, मक्खन यहाँ खूब मिलता है। फल और सब्जियाँ भी यहाँ बहुत सस्ती हैं। आम तो बारहों मास मिलते हैं। यहाँ कठिनाई यह है कि हिन्दुस्तानी बोलने वाले हम पाँच-छै परिवार ही हैं। अन्य सब लोग भाँति-भाँति की बोलियाँ बोलते हैं।

मेरा विचार है कि पाँच-छै वर्ष में मैं एक-दो लाख कमा कर हिन्दुस्तान लौट सकूँगा। यह पत्र मैं अपने मुंशी से लिखवा रहा हूँ, जिसको मैंने अपना हिसाब रखने के लिये नौकर रखा हुआ है।

पंडित जी, पंडिताइन को मेरी और मोहिनी की पायलागन कह देना। गाँव का हाल-चाल लिखना। वर्षा हुई है या नहीं? प्रजा सुखी है या नहीं?"

इस पत्र से पंडित जी को अत्यन्त प्रसन्नता हुई और पत्र को ले कर गाँव के एक-एक आदमी को सुनाता फिरा।

गाँव के लोगों का यह विचार था कि पंडित सारी की सारी फसल गाँव के कामों में मजदूरी में ही बाँट देता है, परन्तु वर्षा के पश्चात् जब एक वर्ष के हिसाब का व्योरा किया गया तो मालूम हुआ कि

सबसे अधिक आय उसको आलू की फसल से और हरी सब्जियों के खेतों से हुई थी। उसने दो बीघा भूमि में तम्बाकू भी लगवा दिया था। इस प्रकार आय बहुत हुई। उसने काम करने वालों को भी जी भर कर मजदूरी दी। खाद और लगान का सब खर्च देकर उसे दस हजार रुपये की बचत हुई।

इससे उसने मन्दिर के साथ गाँव के लड़कों को पढ़वाने के लिये मंगल-पाठशाला, मंगल के नाम से खोल दी। उसके लिये एक छोटी सी पक्की इमारत बनवा दी। मंगल ने जो इंटें अपने मकान के लिये बनवाई थीं वे पाठशाला के कमरों के बनने में काम आईं।

इस प्रकार पाँच वर्ष में पंडित वृजलाल ने गाँव में नगर की भाँति सुख-सुविधा लाने का पूरा यत्न किया। उसने गाँव में एक वैद्य को ला कर बिठा दिया जो लोगों की चिकित्सा करने लगा। इस वैद्य को बीस रुपया मासिक और रोटी-कपड़ा मिलता था और उसके रहने का प्रबन्ध भी कर दिया गया।

पण्डित वृजलाल ने एक बात और की। गाँव में एक छोटा सा बैंक खोल दिया, जिसमें उसने अपना रुपया जमा करा दिया। नगर के कुछ लोगों को भी इसमें सम्मिलित कर उसका प्रबन्ध उन्हीं के हाथ में दे दिया। यह बैंक लोगों में रुपया बचाने की आदत डालने लगा। इस बैंक के द्वारा गाँव की उपज वहीं गाँव में खरीद कर वहाँ से नगर में ले जाना और बेचना बैंक का कर्तव्य हो गया। लोगों को न तो फसल बेचने के लिये और न ही रुपया लेने के लिये नगर जाना पड़ता था। इससे उनका बहुत समय और मेहनत बचने लगी।

इन कामों से निबट कर वह अपनी वृत्ति ईश्वरभक्ति में लगाता।

रहता । इस प्रकार काम होते हवाते कुछ वर्ष बीत गये । एक दिन वह मन्दिर में बैठा हुआ शिव की वन्दना कर रहा था—

नमामि देवं वरदं वरेण्यम्
 नमामि देवं च सदा सनातनम्,
 नमामि देवाधिपमोऽश्वरं हरं
 नमामि शम्भुं जगदेकबन्धुम् ॥
 नमामि विश्वेश्वरविश्वरूपं
 सनातनं ब्रह्म निजात्मरूपम् ।
 नमामि सर्वं निज-भाव-गम्यं
 वरं वरेण्यं वरदं नतोऽस्मि ॥

उस समय उसे ऐसे लग रहा था कि उसे पूर्ण ब्रह्मज्ञान प्राप्त हो गया है । वह भान करने लगा कि पूर्ण जगत् उसका है और वह पूर्ण जगत् में व्याप्त हो रहा है । उसमें और गाँव वालों में कुछ अन्तर नहीं रहा । उनकी भलाई में ही उसकी अपनी भलाई है । उसको पिछले पाँच वर्ष के जीवन में जो रस मिला था, उसको वह पान कर गद्गद् हो उठा । उसका पूर्ण शरीर आनन्द-विभोर हो गया । उसके मुख से अनायास ही निकल पड़ा, “हे भगवन् ! कौन पूर्व जन्म के पुण्य कर्म मैंने किये थे कि तुमने लोक-सेवा का यह अवसर मुझे दिया है । मैं तुम्हारा कृतज्ञ हूँ । जन्म-जन्म के लिये तुम्हारा दासानुदास हो गया हूँ ।”

इतना कह उसने देवता को साष्टांग प्रणाम किया और पत्र-पुष्प चढ़ा कर जल चढ़ाया । पश्चात् अपने अन्य नित्य के कार्य के लिये मन्दिर से बाहिर निकल आया । उसने घूम कर देखा तो देख कर स्तब्ध रह गया । उसके पीछे मंगल पतलून-कोट पहने और हाथ में हैट लिये खड़ा था ।

मंगल के हृष्ट-पुष्ट शरीर पर कोट-पतलून बहुत फब रही थी। उसका मुख सन्तोष और प्रसन्नता से देदीप्यमान हो रहा था। वह मंद-मंद मुस्कराते हुए पंडित को देख रहा था। एकाएक पंडित ने पहचाना और लपक कर उसको गले लगा लिया। पंडित के मुख से निकला, “मंगल भैया !”

मंगल गले मिलते हुए बोला, “पहचान गए पंडित जी ! पंडिताइन ने तो पहचाना नहीं।”

पंडित उसके कोट-पतलून को देख कर पंडिताइन की बात समझ गया। “ठीक तो है भैया ! तुम भी तो पूरे साहब बन कर आए हो। उसने घर से निकाल दिया है न तुम्हें ?”

मंगल हँस पड़ा। उसने बताया, “हम टांगे में आए थे। मकान के सामने टांगा खड़ा किया तो हमें देख कर पंडिताइन घर के भीतर भाग गईं। मैं उसकी भूल को समझ गया। इस कारण मुख ज़रा टेढ़ा कर ड्योढ़ी में खड़े हो कर आवाज़ दी, “बृजलाल पंडित है क्या ?”

“वह बेचारी किवाड़ के पीछे छुप कर खड़ी-खड़ी बोली, “मन्दिर गए हैं। बाहर तख्तपोश पर बैठ जाइए। अभी आते होंगे।”

इतने में मोहिनी और बच्चे जो सब अंग्रेज़ी ढंग की पोशाक पहिने हुए हैं भीतर चले आए। मोहिनी भीतर जाने लगी तो पंडिताइन बोली, “मेम साहब ! बाहर ठहरिए, यह ब्राह्मण का घर है।”

मोहिनी पंडिताइन का भ्रम समझ कर हँस पड़ी और बोली, “काकी, पहचाना नहीं ?”

“उन्हें अब बातें करते और प्रेम के आँसू बहाते छोड़ आया हूँ। मैंने विचार किया कि यहाँ तो मोहिनी ने जल्दी ही भेद खोल दिया है।

अब पंडित को खूब खिभाऊँगा। यहाँ आया तो तुम्हें साष्टांग प्रणाम करते देख जूता उतार तुम्हारे पीछे जा खड़ा हुआ। परन्तु तुम तो देवता की बन्दना में इतने लीन थे कि मेरी उपस्थिति को भी नहीं जाना, और मन्दिर से चल दिये। जूता पहिनने में थोड़ी घिस-घिस हुई, अन्यथा तुम्हें पता ही न चलता। परन्तु तुम्हारा मुझसे प्रेम इतना अधिक है कि इतनी जल्दी मुझे पहचान गए हो।”

“तुम्हें भूल सकता हूँ भैया ! कभी नहीं। मैंने तुम्हें गोदी में खिलाया है। मैं तुम्हारे अंग-अंग के स्पन्दन को पहचानता हूँ। ये कोट-पतलून उसे छुपा नहीं सकते। अच्छा चलो। घर चल कर ज़रा पंडिताइन को डाँट कि अपने बच्चों को भी भूल गई है क्या ?”

१०

मंगल के आने का समाचार सारे गांव में एक दम फैल गया और गाँव का गाँव उमड़ आया। उस कच्चे मकान के सामने, जिसमें अब पंडित बृजलाल रहता था, भारी भीड़ लग गई। “भैया मंगल ! भैया मंगल ?” कह स्त्री-पुरुष सब उससे बातें करने को लालायित हो रहे थे। लोगों के प्रेम और स्नेह को देख कर मोहिनी अपने मन में फूली नहीं समाती थी। उसके पति की इतनी मान-प्रतिष्ठा है, यह बात उसके मन को पुलकित करने में सबल थी। मंगल भी एक-एक का नाम ले ले कर बात-चीत कर रहा था। वह सब को बताना चाहता था कि किसी को भूला नहीं। किसी बाप की उंगली पकड़े कोई बच्चा होता, तो वह पूछ लेता—“यह कौन है ?”

“मेरा लड़का मंगल ! उस समय गोदी में था।”

“ओह ! भूल गया था। चाचा, पांच वर्ष व्यतीत हो गए हैं न ! मुझे तो सब कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि मानो कल ही यहाँ से गया था।”

जब पहले दिन की आवभगत समाप्त हुई तो पण्डित से ईर्ष्या करने वाले मंगल के पास आने लगे । उनमें एक नेतराम जाति का जाट था । उसने कहा,

“मंगल भैया ! पण्डित जी से हिसाब का पूरा-पूरा व्योरा लेना चाहिये ।”

“ले लिया है भैया !”

“क्या लिया है ? क्या मन्दिर के पास बने स्कूल पर जो सहस्रों रुपये खर्च किये हैं, उनके बाबत बताया है उसने ?”

“हाँ ।”

“सब तुम्हारी स्वीकृति से हुआ है क्या ?”

“मे स्वीकृति देने वाला कौन हूँ ? काका ! यह सब पैदा किया है उसने । इसके व्यय करने का अधिकार भी तो उसी को था ।”

“यह भूमि तो तुम्हारी थी !”

“भूमि तो मनोहर चौधरी की है । उसको पट्टे की रकम मिल गई है ।”

“पर पट्टा तो तुम्हारे नाम था ?”

“पर मैंने तो उस पर मेहनत की नहीं । मेहनत करने वाले थे कामें और पण्डित था प्रबन्ध करने वाला । बीज, खाद, सिंचाई और प्रत्येक कार्य का मूल्य देने वाले थे पण्डित जी । बताओ मैंने क्या किया है ? और मुझसे कोई क्यों पूछे ?”

यद्यपि यह बात नेतराम को समझ नहीं आई, तो भी वह मंगल को उत्तर नहीं दे सका । इसी प्रकार अनेकानेक ईर्ष्यालु और चुगुलखोर आये । एक बोला, “भैया, तुमने तो अकाल के दिनों में अपनी सारी सम्पत्ति, यहाँ तक कि अपनी स्त्री के भूषण तक भी, ग़रीब बेकारों के

खिलाने-पिलाने में व्यय कर दिये थे। जब अच्छे दिन आये तो तुम्हारा धन तुम्हें मिलना चाहिए था। इस पण्डित ने सब व्यर्थ खो दिया है। देखो न, गाँव से पक्की सड़क आधे मील पर पड़ती थी। इस पर तीन हजार रुपये के व्यय से पक्की सड़क बनवाने की क्या आवश्यकता थी ! गाँव में एक फव्वारा लगवा दिया है। उसे चलाने और वहाँ पर बेल-बूटों की सिचाई और निराई के लिए तीन रुपये रोज व्यय कर रहा है।”

मंगल हँस पड़ा। जब आक्षेप करने वाले ने विस्मय में उसका मुख देखना आरम्भ किया, तो मंगल ने हँसना बन्द कर कहा, “इसमें आश्चर्य की कौन बात है भैया ! पंडित ने कमाया है। अब अपनी इच्छा से व्यय करता है। मैं और तुम इसमें क्यों कुछ कहें ! रही मेरी सम्पत्ति। भैया, वह भी जिनकी थी उन्हीं के काम में लगा दी गई थी। इसमें मेरा कुछ नहीं था।”

ईर्ष्यालु लोगों के विषले कथन को सुनना तो सुगम है, परन्तु उससे मस्तिष्क को बिगड़ने से रोकना कठिन। उनके प्रभाव से ही मन की महानता का परिचय मिलता है। मंगल इस परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ। उसने एक दिन पण्डित जी को पास बैठा कर कहा, “पण्डित जी, मनोहर चौधरी की सारी ज़मीन अब आप ही जुताइये।”

“न भैया ! तुम्हारी अनुपस्थिति में मैंने जैसा वन पड़ा कर दिया। अब तुम आ गये हो। अब समेटो अपनी ढोल-डफरी। हम ब्राह्मणों से तो पूजा-पाठ करा लिया करो। कहीं रामायण की कथा कहो तो बाँच दूंगा। यह भंभट मुझ से नहीं होता।”

“पण्डित,” मंगल ने मुस्कराते हुये कहा, “यह पूजा किस लिए करते हो ?”

“अपनी आत्मा की शुद्धि के लिए।”

“आत्मा की शुद्धि क्यों करते हो ?”

“मोक्ष-प्राप्ति के लिए ।”

“यह तो उद्देश्य है । पर मैं पूछता हूँ कि बिना कर्म किये क्या आत्मा की शुद्धि मोक्ष प्राप्त करा देगी ?”

“अच्छे कर्म भी तो शुद्ध आत्मा से ही हो सकते हैं ।”

“यही तो मैं कह रहा हूँ । भगवद्भजन करो प्रातः सायं । उससे स्फूर्ति प्राप्त कर कर्म करो दिन भर । क्या मैं ग़लत कह रहा हूँ पण्डित !”

मंगल की युक्ति के सामने पण्डित को नतमस्तक होना पड़ा । पण्डित ने कर्त्तव्य मान कर चौधरी के खेतों का प्रबन्ध अपने हाथ में लिया । इस पर भी निर्वाह के लिए आवश्यक धन-धान्य से अधिक वह कुछ नहीं लेता था ।

अभी तक मंगल और पण्डित एक ही घर में रहते थे । बृजलाल का अपना घर पिछले पाँच वर्ष से ध्यान न देने के कारण गिर चुका था । मोहिनी का कहना था कि उसके गन की एक सुन्दर मकान बनाने की चिरसंचित अभिलाषा पूरी हो जाय तो अच्छा है । इसके लिये मंगल ने पुनः ईंटें पथवाना आरम्भ कर दिया । नया मकान बनने तक के लिए वे वहीं पण्डित बृजलाल के साथ कच्चे मकान में रह रहे थे ।

नरोबी लौटने के तीसरे दिन ही, मंगल की इच्छा माँ से मिलने की हुई । वह प्रातःकाल उठा और लाठी ले नगर को चल पड़ा । अपनी माँ के मकान के सामने पहुँचा तो मकान में किसी और को रहते देख वहाँ से घूम कर लाला नत्थूमल्ल के मकान के सामने जा पहुँचा । कुंडा खटखटाने पर एक बुढ़िया ने दरवाज़ा खोला । वह बुढ़िया मैले-

कुचैले कपड़े पहने थी। हाथों में राख और कालिख लगी थी। वह बुढ़िया बरतन मसलती-मसलती आई प्रतीत होती थी। बुढ़िया ने मंगल को देखा और अवाक् मुख खड़ी रह गई थी। मंगल को उसे पहचानने में कुछ समय लगा। यह उसकी माँ थी। उसकी रूप-रेखा सर्वथा बिगड़ चुकी थी। बाल बिल्कुल श्वेत हो चुके थे। मुख पर झुर्रियां पड़ गई थीं और यूँ भी वह इतनी दुर्बल हो चुकी थी कि पहचानना कठिन था। जब मंगल ने पहचाना तो कहा, “माँ ! क्या हुआ तुमको ?”

माँ वहाँ ड्योढ़ी में ही भूमि पर बैठ गई और अचेत हो गई। मंगल बहुत घबराया। वह माँ को कैसे होश में लाये, समझ नहीं सका। उसने पुनः कुंडा खटखटाया पर कोई उत्तर नहीं मिला। दुबारा खट-खटाया, फिर भी कोई नहीं बोला। तीसरी बार जब खटखटाया तब लाला नत्थूमरल खिड़की में से भाँक कर बोला, “क्यों शोर मचाया है नीचे ? ऊपर बहू बीमार है।” इतना कहते-कहते उसने मंगल को ड्योढ़ी में खड़े देख लिया। इससे वह चुप हो गया। पश्चात् कुछ विचार कर बोला, “क्या चाहते हो मंगल ?”

“माँ अचेत हो गई है।”

“तो हम क्या करें ! उठा कर इसे ले जाओ। हम स्वयं मुसीबत में फँस रहे हैं।”

“बहुत अच्छी बात ! ले जाता हूँ। इतना कह कर उसने मकान के भीतर घुस कर पानी ढूँढ़ने का यत्न किया। मकान में ड्योढ़ी लाँघ कर एक चौड़ा आँगन आता था। आँगन में पानी का नल लगा था। वहाँ से पानी ला कर उसने माँ के मुख पर पानी के छींटे देने शुरू किये तो माँ को कुछ चेतनता आ गई। उसने माँ के हाथ धुलाये और उस

को भूमि पर लिटाते हुए कहा, “माँ, मैं तुम्हें ले जाने के लिये टाँगा लाता हूँ। तुम यहाँ से हिलना नहीं।”

“बेटा……” इससे अधिक वह कुछ कह नहीं सकी। इसी समय सीढ़ियों से एक डाक्टर और पीछे-पीछे नत्थूमल्ल उतरता दिखाई दिया। डाक्टर के हाथ में स्टेथोस्कोप पकड़े देख कर वह समझ गया कि घर में कोई बीमार है। अब मंगल को स्मरण आया कि लाला ने कहा था कि वह बीमार है। उसका शंकर ही तो एक लड़का है। कहीं सोहिनी तो बीमार नहीं ?

जब डाक्टर को विदा कर नत्थूमल्ल भीतर आया तो मंगल ने पूछा, “लाला जी, कौन बीमार है ?”

“तुम्हारी बहिन। अजब मुसीबत में फँस गये हैं। सहस्रों रुपये व्यय हो चुके हैं और अभी तक रोग का पता ही नहीं चला।”

मंगल को यह सुन कर बड़ा दुःख हुआ। उसने पूछा, “क्या मैं बहिन को देख सकता हूँ ?”

“पहले अपनी माँ को तो देखो। इसको ले जाओ यहाँ से। एक रोगी की बात देखे या दो की।”

“इसको तो ले ही जाऊँगा। यदि आप बुरा न मानें तो सोहिनी को भी ज़रा देख लूँ।”

“देख लो। और मन करे तो उसको भी ले जाओ।”

मंगल इस बात से अवाक् मुख लाला को देखता रह गया।

११

मंगल ने सोहिनी को देखा। वह सूख कर काँटा हो चुकी थी। शंकर माथे पर त्योरी चढ़ाये उसके सामने कुर्सी पर बैठा था। मंगल को कमरे में आता देख वह उठ कर बाहर चला गया। सोहिनी बितर बितर भाई का मुख देखती रह गई। उसकी समझ में नहीं

आ रहा था कि भाई को क्या कहे। मंगल ने पूछा, “सोहिनी, बहुत कष्ट है तुम्हें यहाँ ?”

‘देख ही रहे हो तुम। कुछ समझ में नहीं आता कि क्या हो गया है। दवाई पर दवाई पिलाई जा रही है, पर बनता कुछ नहीं। न ज्वर है, न खाँसी। केवल दिन प्रति दिन सूखती जा रही हूँ।’

“गाँव चलोगी सोहिनी ?”

“वहाँ क्या होगा ?”

“राजी हो जाओगी।”

“यहाँ एक बात तो है। रुपया खर्च करने को है। वहाँ तुम यह कैसे कर सकोगे ?”

“इसकी आवश्यकता नहीं पड़ेगी। मैं माँ को तो साथ ले जा ही रहा हूँ, तुम भी चलो तो शायद ठीक हो।”

“मे तुम्हारे जीजा जी से पूछे बिना नहीं जा सकती।”

“तो पूछ लो। मे टाँगा लाने जा रहा हूँ।”

सोहिनी की इच्छा के विपरीत शंकर ने उसे जाने की तुरन्त स्वीकृति दे दी। इससे उसे बहुत विस्मय हुआ। इस पर भी उसने कहा, “माँ के घर के सब भूषण दे दीजिये। वे तो शायद अब लौट कर नहीं आयेंगी।”

“इतनी जल्दी तो नहीं हो सकता। लाला जी ने तिजोरी में रखे हैं। किसी समय आराम से निकाल दंगे।”

“निकालने में क्या देरी लगती है ? जब तक भैया टाँगा लेकर आते हैं निकलवा दीजिये।”

“नहीं। यह नहीं हो सकता।”

“तो मेरे कपड़े ही निकलवा दीजिये।”

“क्यों, क्या करोगी कपड़े ? वहाँ देहात में तो साधारण पोशाक से ही काम चल जायगा ।”

सोहिनी मन मसोस कर चुप कर गई । शंकर ने उसके सब सूती कपड़े एक गठरी में बाँध दिए और उसे जाने के लिए तैयार कर दिया । सोहिनी के मुख से ‘जाने’ का शब्द निकलते ही उसके ससुराल वालों का मान जाना, उसको चकित और शंकित करने लगा । उसे कुछ ऐसा भास हुआ कि उसका पति उससे तंग बैठा है, और उसके घर से निकाल कर सुख और सन्तोष अनुभव करेगा । इस विचार के आने पर उसने गाँव जाने का विचार त्याग दिया । उसने कहा, “मैं सोचती हूँ कि गाँव में जा कर मुझे अधिक कष्ट होगा । मैं न जाऊँ तो ठीक रहेगा ।”

शंकर यह सुन कर क्रोध से लाल-पीला होने लगा । उसने कहा, “नहीं जाना था तो मुझे उल्लू बना कर इतनी भगदौड़ क्यों करवाई थी ? अब चली चलो तो ठीक है ।”

सोहिनी समझ रही थी कि उसके जीने की अधिक आशा नहीं । इसी से उसका पति उसको भेज रहा है और भूषण और वस्त्र भी देना नहीं चाहता । इससे उसने फिर कहा, “मैं समझती हूँ कि न जाऊँ तो ठीक है ।”

“क्यों ? क्या है वहाँ ?”

“वहाँ मेरे मायके हैं । यहाँ ससुराल है । इस स्थान पर मरना अच्छा प्रतीत होता है ।”

“पर तुम मरोगी थोड़े ही । दो मास बाहिर की खुली हवा में रह कर ठीक हो जाओगी । स्वस्थ हो कर चली आना ।”

“मुझे इसका विश्वास नहीं हो रहा । मैं अब बच नहीं सकूँगी । और इस जन्म में तो यहाँ नहीं आ सकूँगी ।”

“सोहिनी ! ऐसा मत कहो । मैं कहता हूँ कि दो मास में भली-चंगी हो कर लौट आवोगी ।”

इस समय मंगल टांगा ले कर आ गया । उसने माँ को उठा कर टांगे में बैठा दिया और ऊपर सोहिनी को लेने आया । उसको आया देख कर सोहिनी ने एक बार पुनः याचना के भाव में अपने पति की ओर देखा । शंकर ने उसके कपड़ों की गठरी मंगल के हाथ में पकड़ाते हुए कहा, “तुम्हारी बहिन भी कुछ दिन के लिए माँ के साथ गाँव जाना चाहती है ।”

“चलो सोहिनी !” मंगल ने बहिन की ओर देख कर कहा ।

“भैया, इसी तरह बिना कुछ भी लिए यहाँ से चल रही हूँ । चलो ?”

“बहुत अच्छा कर रही हो बहिन । यहाँ से कुछ भी ले चलने की आवश्यकता नहीं है । वहाँ जैसे हम रहते हैं, वैसे ही तुम्हें शोभा देगा । इन चिथड़ों को भी ले चलने की क्या आवश्यकता है ?” इतना कह उसने वह गठरी भी कमरे के एक ओर फेंक दी । मंगल ने सोहिनी को, जो बहुत दुर्बल हो चुकी थी, गोदी में उठा लिया और नीचे टांगे में ले गया ।

मंगल को माँ और बहिन को घर लाते देख सब गाँव के लोग चकित हो गए । जो व्यवहार उसके साथ माँ ने किया था वह अब भी लोगों को स्मरण था । उस दिन से मंगल ने माँ से, उस व्यवहार का कभी उल्लेख नहीं किया, जो उससे किया गया था ।

गाँव में पुराना मकान खुलवाया गया । उसकी सफाई करवा कर वहाँ मंगल की माँ और बहिन को ठहरा दिया गया । मंगल स्वयं उस कच्चे मकान में रहता था जिसमें पंडित बृजलाल भी रह रहा था ।

गाँव में आए मंगल की माँ को कई दिन व्यतीत हो चुके थे । मंगल ने बहिन की सेवा-टहल के लिए गाँव की एक औरत को रख दिया

था। वह स्वयं भी हर रोज दो-चार बार जा कर उसका समाचार पूछ आता था। आज मंगल आया तो माँ ने पूछा, “मंगल ! बच्चों को नहीं दिखाओगे क्या ?”

“माँ ! मैं सोच रहा था कि तुम स्वयं इच्छा प्रकट करो तो लाऊँ। मोहिनी को भी कई बार इच्छा हुई थी कि आ कर तुम्हारे चरण स्पर्श करे, परन्तु डरती रही कि उसे देख कर तुम्हें दुःख न हो।”

“ठीक है बेटा, उसका डरना ठीक ही है। मैंने जो व्यवहार उससे किया था उसका ऐसा विचार होना स्वाभाविक है। ठीक है, पहले मुझे ही उससे मिलने को जाना चाहिये।”

“यह बात नहीं माँ ! तुम स्वीकृति दो, तो वह आ जाय और दोनों की सेवा-सुश्रूषा करे।”

माँ चुप रही। बहिन की चिकित्सा, जो समुराल में हो रही थी, वह बन्द कर दी। मंगल का विचार था कि जलवायु-परिवर्तन होने पर कुछ दिन औषधि बन्द कर देनी चाहिये। आज उसने बहिन से कहा—
“सोहिणी, अब तुम्हारी चिकित्सा भी होनी चाहिये।”

“भैया, आवश्यकता नहीं पड़ेगी। मैं इन पाँच-छै दिनों में ही अपने में परिवर्तन देख रही हूँ। मुझे भूख लगने लगी है और खाया-पिया हजम होने लगा है।”

माया पर आधिपत्य

१

जगदीश चन्द्र, हिप्नॉटिस्ट, बम्बई से रुपया कमा कर रामू को साथ लिये हुए अपने गाँव में जा पहुँचा। वह काश्मीर राज्य के जम्मू विभाग में ऊधमपुर का रहने वाला था। रुपया तो उसके पास पर्याप्त था ही, वहाँ पहुँच कर एक नया मकान बनवाने का यत्न करने लगा। वहाँ उसका एक अपना मकान पहले भी था जिसमें उसके माता, पिता और बहिन-भाई रहते थे। वे सब जगदीश चन्द्र के आचार-व्यवहार से संतुष्ट नहीं थे। कोई काम-काज न करने से प्रायः उससे लड़ते-भगड़ते रहते थे। उनसे तंग आ कर जगदीश ऊधमपुर से किश्तवार और वहाँ से भारत की सीमा लाँघ कर तिब्बत में चला गया था। पन्द्रह वर्ष तक बाहर रह कर जब वह घर लौटा, तो उसके भाई-बन्धुओं को और भी अधिक रोष हुआ क्योंकि वे उसके पीछे भूमि पर अपना अधिकार मानने लगे थे। अब वे समझते थे कि उन्हें उसकी भूमि लौटानी पड़ेगी। जगदीश उन्हें कहता था कि उसे भूमि नहीं चाहिये, परन्तु वे उस पर विश्वास ही नहीं करते थे। उनका विचार था कि जगदीश सा आवादा लड़का पिता के देहान्त के पश्चात् उन्हें कष्ट देगा।

उनके मन की भावना देख कर जगदीश रुपया कमाने को बम्बई चला गया। वहाँ उसको रामू मिला। बम्बई में डेढ़ लाख रुपया कमा कर जब वह घर लौटा तो उसके माता-पिता और भाई-बन्धु और भी रुष्ट हुए, इसलिए कि निखटू के खिलाने-पिलाने का भार कैसे उठा सकेंगे। उसी दिन उसके पिता ने उसको एकान्त में बुला कर कहा,

‘जगदीश, यह कौन है ? तुम्हारा तो हुआ, पर साथ इसके खर्च का बोझ हम कैसे उठा सकेंगे ?’

“पिता जी ! यह अपना खर्च आप ही करेगा ।”

“पर, यह आया किस लिये है ?”

“मुझ से मेरी विद्या सीखने के लिये ।”

पिता की हँसी निकल गई । उसने कहा, “कौन सी विद्या आती है तुम्हें ?”

“जो आती है आपके सामने आ जायगी ।”

“कुछ भी हो । इसे खाने-पीने को हम एक दाना भी नहीं देंगे ।”

“जो कुछ यह लेगा या मैं लूँगा, उसका आपको मूल्य मिलेगा ।”

गाँव से बाहर ढलवान पर एक चश्मे के समीप पाँच सौ रुपये से भूमि मोल ले कर मकान बनवाने का प्रबन्ध होने लगा । इस आयोजन को और उसके खाने-पीने के स्तर को देख कर उसके माता-पिता को कुछ ढारस हुई । अब उनका यह विचार हो गया था कि रामू किसी धनी का बेटा है और जगदीश उसे उकसा कर यहाँ लाया है ।

मकान तैयार करने में छै मास लग गये । जगदीश चन्द्र ने इस अन्तर में रामू को अपना ध्यान एकाग्र करने का अभ्यास कराना आरम्भ कर दिया । दोनों प्रातःकाल उठ कर गाँव से दूर जंगल में चले जाते थे और अपनी इन्द्रियों को वश में कर उनकी पूर्ण शक्ति को किसी एक वस्तु पर केन्द्रित करने का यत्न करते थे ।

रामू जैसे चंचल स्वभाव के लड़के के लिये यह एक कठिन बात थी । इस पर भी उसने उद्यम नहीं छोड़ा । अनेकानेक प्रकार के चित्र बना कर और उन्हें पेड़ों से टाँग कर उनमें ध्यान लगाने का यत्न होता

था। साथ ही जगदीश चन्द्र ने उसको एक मंत्र जपने के लिये भी दिया।

जब तक मकान तैयार हुआ तब तक रामू में एकाग्रचित्तता उत्पन्न होने लगी थी। इसका परिणाम यह हो रहा था कि उसकी स्मरण शक्ति तीव्र से तीव्रतर हो रही थी। उसकी बुद्धि भी तीक्ष्ण हो रही थी। जगदीश चन्द्र ने तिव्वत में रहते हुए संस्कृत पढ़ी थी। रामू भी उससे संस्कृत पढ़ रहा था। जगदीश ने तिव्वत से लौट कर चार वर्ष अंग्रेज़ी का अभ्यास किया था। रामू भी अंग्रेज़ी सीख रहा था। जगदीश चन्द्र ने संगीत का अभ्यास किया था। रामू को भी इसमें रुचि होने लगी थी।

रामू की बुद्धि का विकास हो रहा था, ऐसा विकास जो आयु के कारण नहीं प्रत्युत योग और साधना के कारण होता है। उससे बात करने वाला अभी मुख में कुछ कहने भी न पाता था कि रामू उसकी बात को जान जाता था और उसका उत्तर मन में विचार लेता था।

जगदीश चन्द्र ने उसे बताया कि संयम से शक्ति बढ़ती है। अन्त में यह शक्ति इतनी बढ़ जाती है कि संसार में कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं रहता जो उस शक्ति के अधीन लाया न जा सके। जो कोई व्यक्ति उस शक्ति के प्रभाव में आ जाता है वह वैसा ही सोचने लगता है जैसा संयमी पुरुष सोचता है। उससे जो वह चाहे करवा सकता है। अथवा वैसा ही सोचने और समझने पर विवश किया जा सकता है।

रामू के पूछने पर जगदीश ने उसे संयम के अर्थ भी समझाये। उसने बताया, इन्द्रियों पर अधिकार पा लेने को संयम कहते हैं। अधिकार का यह अर्थ नहीं कि उनका प्रयोग ही न किया जाय। अधिकार का अर्थ है उन्हें अपनी इच्छानुसार काम करने को विवश किया जाय।

रामू और जगदीश नए मकान में गए तो उन्हें मन के एकाग्र करने के लिए अधिक समय और सुविधा मिलने लगी। उसके भाई-बन्धु समझते थे कि मकान रामू का है। इससे रामू का मान जगदीश से भी बढ़ने लगा। जगदीश चन्द्र की मनोवृत्ति ऐसी बन गई थी कि वह इस प्रकार की बातों से ऊपर हो गया था।

समय व्यतीत होने लगा। रामू को योगाभ्यास में अधिक और अधिक प्रवेश प्राप्त होने लगा। और जगदीश चन्द्र को भी उत्तरी उन्नति में सन्तोष होने लगा। एक दिन रामू अपना अभ्यास करके हटा ही था कि जगदीश चन्द्र ने उसको बुला कर कहा, “रामू, कितनी आयु है तुम्हारी?”

“गुरुदेव ! जहाँ तक मैं जानता हूँ, मैं बाईस वर्ष का हूँ।”

“मेरे पिता जी, कई दिनों से एक बात मुझ से कह रहे हैं। यह बात मैं तुम से कहना नहीं चाहता था। मुझे भय था कि तुम उसे मेरा आदेश न मान लो। वे चाहते हैं कि मेरी सबसे छोटी बहिन भीना से तुम्हारा विवाह कर दिया जाय। मैं अभी तक इसे टालता आता था, परन्तु आज उन्होंने मुझे यह कहने को विवश कर दिया है। इस कारण मैंने कहना ही उचित समझा है।”

“गुरुदेव ! मेरी साधना अभी पूरी नहीं हुई है।”

“ठीक है। इस पर भी मैं तुम पर जोर नहीं डालूँगा। यदि तुम चाहो तो एक-दो दिन में विवाह का प्रबन्ध हो सकता है।”

“यदि आज्ञा हो तो मैं अपनी साधना भी छोड़ सकता हूँ। वास्तव में यह आपकी ही देन है। यदि आप आदेश देंगे तो उसे अस्वीकार नहीं करूँगा।”

“अपने मन की प्रेरणा का अनुसरण करो। जहाँ तक साधना का सम्बन्ध है वह तो ऐसे स्तर पर पहुँच गई है कि अब वह तुम से छीनी नहीं जा सकती।”

“पर गुरुदेव ! धृष्टता के लिए क्षमा माँगता हूँ। आपने अभी तक विवाह क्यों नहीं किया ?”

जगदीश चन्द्र मुस्करा कर रामू का मुख देखता रहा। रामू के पुनः आग्रह करने पर उसने बताया, “मुझे मेरी संगिनी अभी नहीं मिली।”

“आप से किसी ने विवाह का आग्रह नहीं किया कभी ?”

“यह बात नहीं। मैं अपनी योग-साधना से अपने पूर्व जन्म की संगिनी को जान गया हूँ। वह अति सुन्दर और मेरे हृदय की अधिनायिका है। वह इस समय इस संसार में है। परन्तु अभी आयु में छोटी है। ज्यूँ ही वह विवाहयोग्य होगी मैं उसका वरण करूँगा।”

“वह कहाँ है ?”

“सियालकोट से दो मील के अंतर पर एक बड़ा गाँव है स्थान। वह इस समय वहाँ पर रह रही है।”

“बड़ा गाँव ! वह तो मेरा जन्मस्थान है। वह किस की लड़की है ?”

“इस जन्म से दो जन्म पूर्व, मैं नेपाल के एक गाँव में रहता था। मेरा उससे विवाह हुआ था। उसका नाम भामिनी था। हमारा परस्पर बहुत प्रेम था। जहाँ तक मैं जान सका हूँ उससे पूर्व जन्मों में भी मेरा उससे ही विवाह हुआ था।

हमारे विवाह के पाँच मास पश्चात्, मुझे साँप ने काट खाया। मेरा देहान्त हो गया। उस समय भामिनी के पेट में बच्चा था।

उसने उसके पालन के लिये अपने को जीवित रक्खा । जब लड़का बीस वर्ष का हुआ तो उसका विवाह हो गया और भामिनी अपने पौत्र के दर्शन और फिर पालन के लिए जीती रही । वह पचपन वर्ष की हो कर मर गई । इसी बीच मेरा एक और जन्म हुआ । मेरा विवाह भी हुआ । परन्तु इस पत्नी से प्रेम नहीं हो सका । हम आयु भर लड़ते-भगड़ते ही रहे । पाँच वर्ष के कलह के पश्चात् मैंने आत्महत्या कर ली । मेरा शरीर गंगाजी में विसर्जन कर दिया गया । इसी अन्तर में भामिनी का भी एक जन्म हुआ था, परन्तु उसे पन्द्रह वर्ष की आयु में ही ज्वर हो गया और उसका देहान्त हो गया । अब, एक मंगल चौधरी के घर उसका पुनः जन्म हुआ है । इस समय उसकी आयु नौ वर्ष है । छै वर्ष और प्रतीक्षा कर मैं उसे बुला लूँगा ।”

“मंगल चौधरी, बड़ा गाँव, सियालकोट से दो मील के अन्तर पर ! गुरुदेव, मंगल मेरा भाई है । यह लड़की मेरी भतीजी होगी । पर तब तक आप प्रतीक्षा करेंगे ?”

“यद्यपि मेरी आयु तब तक सैंतालीस वर्ष की हो जायगी तो भी मैं अपनी सिद्धि से इस आयु के अन्तर को मिटा सकता हूँ ।

“कभी-कभी उसका चिंतन करता हूँ तो मुझे वही भामिनी, देहात में एक पक्के विशाल मकान में खेलती-कूदती, पढ़ती और घर का काम करती दिखाई देती है ।

“एक सीमेंट का बना बड़ा विशाल मकान है, उस मकान के दक्षिण में एक आम की बगिया है । बगिया में एक कुआँ है । इस कुएँ में पम्प लगा है । मकान में बिजली का प्रबन्ध है और प्रत्येक प्रकार की सुविधा है ।”

“यह मंगल भैया का मकान है क्या ?”

“हाँ, उसने विदेश जा कर बहुत धन-उपार्जन किया है और इस समय भी वह मेहनत और ईमानदारी से अपना जीवन निर्वाह कर रहा है।”

रामू को उस समय की बात याद आई जब उसने झूठ बोल कर माँ को उसके विरुद्ध किया था। आज की वार्त्तालाप से उसको अपनी माँ की याद आ गई और उसके मन में उससे मिलने की इच्छा उत्पन्न हो गई। उसने कहा, “गुरुदेव ! मेरी इच्छा अपनी माँ से मिलने की है।”

“अभी तुम्हारी सिद्धि उस सीमा तक नहीं पहुँची कि तुम अपने मन पर काबू पा सको। यही कारण है कि तुम्हारा मन तुम्हें माँ से मिलने की प्रेरित कर रहा है।”

“यह बात नहीं गुरुदेव ! मैं वहाँ जाने की इच्छा को बदल सकता हूँ।”

जगदीश चन्द्र ने मुस्करा कर कहा, “यह कोई लज्जा की बात नहीं। मुझे भी अभी पूर्णता प्राप्त नहीं हुई। मैं भी अभी उस पूर्ण परमात्मा में अपने अस्तित्व को खो जाने में समर्थ नहीं हुआ। ऐसी सिद्धि प्राप्त करने वाले को योगेश्वर कहते हैं। तब सब एकरस, एकरूप प्रतीत होने लगता है।”

“मेरी शिक्षा, अभ्यास और तपस्या के दस वर्ष व्यतीत होने वाले हैं। इस काल में मैंने बहुत कुछ पाया है। परन्तु मैं उस अवस्था को प्राप्त नहीं हुआ, जिसे आप पा चुके हैं।”

“यह तो शायद कभी नहीं होगा क्योंकि मैं भी इससे आगे और आगे जाने का यत्न कर रहा हूँ। यदि मैं यत्नशील रहा तो मुझ में और तुम्हारे में अन्तर रहेगा ही। इस पर भी तुम में वह शक्ति उत्पन्न हो गई है, जो मुझ में उस समय थी जब तुम मुझे मिले थे।”

“हाँ, परन्तु वह तो अब मुझे बच्चों का खेल दिखाई देता है। वह करतब दिखाने की अब मेरी खिच नहीं।”

“यही अवस्था मेरी थी। मुझे मेरे भाई-बहिनों ने विवश किया था कि मैं कुछ कमा कर लाऊँ। इस कारण जब मेरे पास बीस वर्ष तक की जीविका का धन जुट गया तो मैंने बम्बई छोड़ दी थी। साध्य धन नहीं है, साध्य आत्मोन्नति है।”

“मैं आपके पीछे लगा था मदारी का तमाशा सीखने के लिये। वह तो अब गीरस और साधारण सी बात प्रतीत होती है। मेरी इच्छा अब आकाश में चन्द्र और सूर्य लोक में भ्रमण करने की होती है।”

“यह इच्छा स्वाभाविक ही है, परन्तु यदि इसी मार्ग पर चलते गये तो यह भी एक दिन व्यर्थ का प्रयास प्रतीत होने लगेगा। मेरी सम्मति यह है कि तुम संसार में भ्रमण करो और अपने मन और इन्द्रियो पर अधिकार रखते हुए ज्ञान की वृद्धि करो।”

“गुरुदेव, आप भी मेरे साथ चलें। शियालकोट चल कर बड़ा गाँव में ठहरेंगे। मेरी भैया से बनेगी या नहीं, कह नहीं सकता, तो भी हम वहाँ जा तो सकते हैं।”

“अभी नहीं। मैं चाहता हूँ कि भाभिनी कुछ और बड़ी हो जाय तो ठीक रहेगा।”

“तीटते हुए आवेंगे तो पुनः वहाँ ठहरेंगे। तब आपका उससे विवाह हो सकेगा।”

“मीना के विवाह के विषय में क्या कहते हो?”

“अभी मेरी इच्छा नहीं है।”

जगदीश चन्द्र हँस पड़ा।

मंगल चौधरी का कार्य वैसे ही चल रहा था। धन-धान्य से सम्पन्न होने पर भी वह अब हल जोतने, सिंचाई करने और खेत निराने को स्वयं जाता था। अभ्यास से वह जान गया था कि कौन मनुष्य किस काम के योग्य है और कितने काल में कौन काम समाप्त होगा।

ऋतुओं में अव्यवस्था होती रहती थी। परन्तु मेहनत और शक्ति से काम एकसार चलता जाता था। प्रतिवर्ष फसल में लाभ होता था। मंगल ने अपने घर का प्रबन्ध ऐसा कर रखा था कि सब आवश्यकतायें वहीं से पूर्ण हो जाती थीं, जिससे उन पर कुछ भी व्यय नहीं होता था। यदि कुछ व्यय हो रहा था तो बच्चों की शिक्षा पर।

मंगल के चार बच्चे थे। सबसे बड़े लड़के का नाम कुलदीप था। वह चौदह वर्ष का हो गया था। इस समय नगर में पढ़ने जाता था और दसवीं श्रेणी में पढ़ता था। उससे छोटा था कृष्णचन्द्र। वह ग्यारह वर्ष का था। वह आठवीं श्रेणी में था। इससे छोटी लड़की थी मानिनी। आयु थी नौ वर्ष की। इसका जन्म नरोवी में हुआ था। वह पढ़ने नहीं जाती थी। दीप से ही घर में कुछ पढ़ लेती थी। इस लड़की से छोटा एक और लड़का था। नाम था प्रेमचन्द्र। उसकी आयु छै वर्ष की थी और वह दूसरी श्रेणी में पढ़ता था।

इन तीनों स्कूल जाने वाले बच्चों का खर्च बीस रुपया मासिक पड़ जाता था। इस खर्च के अतिरिक्त मंगल के घर की सब आवश्यकतायें घर पर ही पूरी हो जाती थी।

मकान में उसने बिजली लगवाई हुई थी। बिजली पैदा करने की मशीन, मिट्टी के तेल वाली, मकान के पिछवाड़े लगवाई गई थी। घर में

नल लगा था, परन्तु पानी पम्प के द्वारा मकान की छत पर की टेंकी में भर लिया जाता था। घर में सब सामान था। सफाई और सुरक्षा मोहिनी स्वयं करती थी, और गाँव की दो स्त्रियाँ उसकी सहायता करती थी।

मंगल की माँ और बहिन दोनों गाँव में ही थीं। सोहिनी के पति ने दूसरा विवाह कर लिया था। इसके जो आभूषण आदि नत्थूमल्ल के पास थे वे सब उसी के पास रहे, उनमें से एक भी वापिस नहीं मिला। एक दो बार मंगल माँ के साथ उससे रुपये लेने गया भी था, परन्तु नत्थूमल्ल ने पाँव तले घास नहीं जमने दी।

सोहिनी और उसकी माँ अब अनुभव करती थीं कि किस प्रकार उनको धोखा दे कर मूर्ख बनाया गया था। मंगल ने उन दोनों को बिना पिछली बात का संकेत भी किए अपने घर में स्थान दिया था और साथ ही खाने-पीने का प्रबन्ध भी कर दिया था। सोहिनी शीघ्र ही स्वस्थ हो गई थी, और उसमें कुछ ताकत भी आ गई थी। उसने एक बार अपने पति को वहाँ बुलवाया था, परन्तु वह नहीं आया। पीछे उसे पता चला कि उसने दूसरा विवाह कर लिया है।

इस प्रकार नत्थूमल्ल के परिवार से सम्बन्ध-विच्छेद हो गया। माँ ने अब लज्जित हो कर मंगल को अपने बाप के खेतों को जोतने को कहा। इसका परिणाम यह हुआ कि जहाँ उसकी माँ और बहिन का जीवन सुख से कटने लगा वहाँ मंगल की खेती-बाड़ी का काम भी फलने-फूलने लगा।

सोहिनी और उसकी माँ पुराने मकान में ही रहती थीं और मंगल अपने बच्चों के साथ नए मकान में। इस पर भी मोहिनी निरन्तर सास के पास आती-जाती रहती थी। कुछ काल तक उसकी सास और ननद

उससे भेंटती रहीं, परन्तु धीरे-धीरे मोहिनी के सौजन्य ने उनकी भेंट को मिटा दिया ।

आज वह अपनी लड़की मानिनी को साथ ले वहाँ गई हुई थी । मोहिनी ने पूछा, “भाभी ! भोजन करके आई हो या नहीं ?”

“नहीं, अभी इसके पिता जी नगर से लौटे नहीं । जब आयेंगे तब स्वाँगी ।”

“कब तक लौटेंगे भैया ?”

“दोपहर के बाद ही लौटने की बात है ।”

“तब तक भूखी ही रहोगी क्या ?” मोहिनी ने अचम्भे में पूछा ।

“नहीं, प्रातः कलेवा कर लिया था । आज कुछ देर हो गई तो इस से कुछ कष्ट थोड़े ही होगा ।”

“अच्छा थोड़ी लस्सी ही पी लो ।” मोहिनी लस्सी का भरा हुआ एक गिलास और उस पर एक बड़ा-सा गुप्फा मक्खन का रख कर ले आई ।

मोहिनी ने उसे मानिनी को पीने को दे दिया । मोहिनी और लेने गई ही थी कि बाहर से मंगल की आवाज़ आ गई, “माँ देखो कौन आया है ।”

मोहिनी झुबोटी में गई और अपने पति के साथ एक बाईस-तेईस के युवक को देख सकुचा कर पीछे हट गई । मंगल की हँसी निकल आई । मोहिनी इसका अर्थ समझ ही रही थी कि रामू ने झुक कर चरण स्पर्श कर कहा, “भाभी ! पाँव लागूँ । मुझे पहचाना नहीं ?”

मोहिनी पहचान गई । उसने कहा, “रामू भैया, आ गए क्या ?

इतने बड़े हो गए हो, इसलिए पहचाना नहीं। आओ, माँ तुम्हारी प्रतीक्षा करती-करती बूढ़ी हो गई है।”

रामू मोहिनी के साथ भीतर चला गया। मंगल के साथ एक और आदमी था, अच्छे गठे हुए शरीर, ओजस्वी मस्तक और सुन्दर आकृति वाला। रामू जब भीतर चला गया तो मंगल ने कहा, “ये रामू के गुरु हैं। उसके साथ ही आए हैं। भीतर चलो। ये दो-तीन दिन यही रहेंगे।”

मोहिनी इस अति प्रभावशाली व्यक्ति को देख स्तब्ध हो गई थी, पर मंगल के कहने पर कि ये यहीं रहेंगे, सचेत हो भीतर चली गई। मंगल जगदीश चन्द्र को ले कर भीतर चला आया।

मंगल ने देखा कि रामू माँ के पाँव दबा कर क्षमा याचना कर रहा है और माँ आँखों से आँसू बहा रही है। मोहिनी हाथ में लस्सी का गिलास लिए खड़ी है। मोहिनी धीरे-धीरे लस्सी में से मक्खन निकाल कर खा रही है।

एक अपरिचित आदमी को मंगल के साथ मकान में आते देख माँ ने अपने आँसू पोंछते हुए कहा, “अब बस करो बेटा ! बहुत अच्छा किया है कि आ गए हो।”

४

रामू और जगदीश चन्द्र उस कमरे में, जिनमें कभी मंगल रहता था, ठहरा दिए गए। रामू ने माँ से कहा था कि वह गुरु जी के साथ कुछ काल के लिए भ्रमण को जा रहा है। माँ की इच्छा नहीं थी कि वह फिर उसमें बिछुड़े, परन्तु जगदीश के प्रभाव में वह स्वयं भी अपने को विवश पानी थी।

आने के अगले दिन ही जगदीश चन्द्र ने कहा, “माँ जी, रामू को मेरे साथ जाना ही होगा।” इस पर माँ चुप थी। वहिन ने इतना कहा-

“गुरुदेव ! माँ पुत्र को इस योग्य देखना चाहती है कि वह जीविकोपार्जन कर सके, अपने माता-पिता को सुखी रख सके और विवाह कर वंशवृद्धि कर सके ।”

“क्या मंगल यह सब कुछ नहीं कर रहा ?”

सोहिनी इस प्रश्न से लज्जित हो चुप कर गई । उसको मंगल के विरुद्ध कहने को कुछ नहीं था । उसको चुप देख कर जगदीश चन्द्र ने कहा, “रामू जिस कार्य में लगा है उससे उसका और परिवार का, दोनों का कल्याण सिद्ध होने को है ।”

रामू को जब ला० नत्थूमल्ल की बेईमानी का ज्ञान हुआ तो उसकी इच्छा उससे माँ की सम्पत्ति लौटाने की हो गई । उसने अपना विचार जगदीश चन्द्र से भी कहा । जगदीश चन्द्र ने कहा, “ठीक है, उस आदमी को शिक्षा देनी चाहिए ।”

रामू उसी दिन सायंकाल शंकर और ला० नत्थूलल्ल से मिलने गया । दुकान बन्द हो चुकी थी । बाप-बेटा दोनों घर पर ही थे । जब रामू ने मकान का दरवाजा खटखटाया तो खिड़की में शंकर की माँ ने भाँक कर देखा । वह रामू को पहचान नहीं सकी । इस कारण उसने पूछा, “क्या है ?”

“शंकर भैया से मिलना है ।”

“क्या नाम है तुम्हारा ?”

“रामू ।”

शंकर की माँ ने पहचान लिया और कहा, “यहाँ तुम्हारी बहिन नहीं है ।”

“मुझे बहिन से नहीं, शंकर से मिलना है ।”

“वह तुमसे नहीं मिलना चाहता ।”

“नीचे आ कर दरवाजा खोल दो, नहीं तो ठीक नहीं होगा ।”

“चले जाओ, नहीं तो पुलिस को बुलवाना पड़ेगा।”

“उसे तो मैं साथ ही ले कर आया हूँ। वह देखो।” रामू ने उँगली से गली के मोड़ की ओर संकेत किया। शंकर की माँ को ऐसा प्रतीत हुआ कि दग-बारह पिपाई पुलिस की वर्दी पहिन वहाँ खड़े हैं। वह भयभीत हो पीछे हट गई। उसने शंकर को और उसके पिता को जब बताया तो शंकर काँपता हुआ मकान के नीचे आ गया और दरवाजा खोल पूछने लगा, “वताओ क्या काम है?”

“तुमसे और तुम्हारे पिता जी से कुछ पूछने आया हूँ।”

“क्या?”

“यहीं गली में सुनोगे क्या? लोग एकत्रित हो रहे हैं, क्या उनके सामने ही सुना दूँ?”

शंकर ने पंजों के बल खड़े हो कर गली के कोने की ओर देखा। वहाँ पुलिस धाले खड़े थे। इससे भयभीत हो उसने रामू को भीतर आने के लिए कहा। रामू भीतर जा पहुँचा। उसे बैठक में बिठाया गया। रामू ने कहा, “लाला जी को बुला लीजिए।”

शंकर ने रामू को वहीं छोड़ कर पहले मकान का दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया। उसको ताला लगा कर वह लाला जी के कमरे में गया। उसकी माँ ने रामू के आने की सूचना पहले ही दे दी थी, और लाला नत्थूनल चिन्ता में शंकर के समाचार लाने की प्रतीक्षा कर रहा था।

शंकर ने पहुँच कर पूर्ण परिस्थिति का वर्णन कर दिया और यह कहा, “मैं ड्योड़ी को ताला लगा आया हूँ, जिससे कोई भीतर न आ सके। अब आप निर्भय हो कर उससे बातचीत कर लें।”

“पुलिसवाले कहाँ पर हैं?”

“वे अभी गली के परले कोने पर हैं।”

“देखो, जब तक मैं रामू से बातचीत करता हूँ तुम उन से मिल कर पता करो कि वे क्यों आये हैं, और क्या चाहते हैं ?”

यह योजना शंकर को पसन्द आई। ला० नत्थूमल्ल रामू से बातचीत करने के लिए बैठक में आ गया और शंकर किवाड़ खोल पुलिस वालो से बातचीत करने घर से बाहर चला गया।

नत्थूमल्ल को आया देख कर रामू ने उठ कर हाथ जोड़ प्रणाम किया और कहा, “लाला जी, आपका स्वास्थ्य कुछ ठीक प्रतीत नहीं होता।”

“तुम तो अच्छे खासे युवक हो गये हो। सुनाओ, कहाँ रहे इतने दिन ?”

“मैं काश्मीर चला गया था। वहाँ एक गुरु जी मिल गये थे। उन की सेवा में दस वर्ष रहा हूँ। अब उन्होंने घर आने की आज्ञा दी है।”

“सुनाओ, तुम्हारा विवाह कब तक होगा ?”

“अब आपके आश्रय में आया हूँ। आप कृपा करेंगे तो सब कुछ हो जायगा।”

“तुम हमारे लड़के के समान हो। यदि तुम अपनी भूमि की सुध लो तो मैं विवाह का प्रबन्ध तुरन्त करवा दूँगा।”

ला० नत्थूमल्ल व्यर्थ की बातों में लगा कर रामू को रोके रखना चाहता था। वह शंकर की पुलिसवालों से सूचना लाने की प्रतीक्षा कर रहा था। रामू ने भी लाला जी को अपने आने का प्रयोजन बताने से पूर्व ऐसा प्रकट किया कि मानो वह उनके प्रति न तो कोई सन्देह रखता है और न द्वेष। इससे उसने कहा, “लाला जी ! मेरे विवाह का प्रबन्ध हो गया है। आप जानते हैं कि जब नई वधू घर आयेगी तो उसके लिए कुछ भूषण चाहियें। इसमें आपकी सहायता लेने आया हूँ।”

“हाँ ! हाँ ! मैं तुम लोगों की प्रत्येक प्रकार से सहायता करने के लिये तैयार हूँ । बताओ क्या चाहते हो तुम ?”

“माँ ने कुछ भूषण आपके पास रखे हुए हैं । उनमें से केवल पाँच भूषण हल्के से मुझे दे दीजिये ।”

रामू की माँग सुन कर लाला नत्थूमल की जान में जान आई । उसने समझा, यह तो कोई बड़ी माँग नहीं । यदि इतनी सी बात से पुलिस टल सकती है तो वह टाल देगा । इस पर भी उसने रामू से कहा, “तुम्हारी माँ ने अपने सब भूषण गिरवी रख छोड़े हैं । परन्तु तुम तो मेरे बेटे के समान हो । मैं इतना कुछ तो तुम्हारे नियंत्रण कर ही सकता हूँ । इतनी आशा तुम से अवश्य करता हूँ कि भूषण का मूल्य तुम अपनी सुविधा पर अदा कर देना । एक कागज़ पर यह सही कर देना और ले जाना ।”

इसी समय शंकर प्रसन्नवदन बैठक में आ गया । उसने आते ही कहा, “पिता जी पुलिस वहाँ नहीं है । सब चुपचाप चले गये मालूम होते हैं ।”

इस सूचना से लाला की आँखें बदल गई । उसने संकेत से कहा, “दरवाज़े पर ताला लगा दिया है न ?”

“हाँ, पिता जी ।”

‘रामू भैया ! तुम्हारी माँ ने दस सहस्र रुपया हमसे भूषणों के बदले उधार लिया है, उसका भी तो कुछ विचार करना है ।’

“माँ ने कुछ लिख कर दिया है ?”

“नहीं, समझन से लिखा-पढ़ी करना अच्छा प्रतीत नहीं हुआ । परन्तु अब तुम आ गये हो तो तुम ही लिख दो न ।”

रामू ने कहा, “रुपया माँ ने लिया और हस्ताक्षर मैं क्यों करूँगा

मेरा तो इतना कहना है कि पाँच हल्के-हल्के भूषण मुझे चाहियें । यदि आप नहीं देंगे तो मुझको पुलिस बुलानी पड़ेगी ।”

“जाओ, बुला लो ।”

“वह देखो ।” रामू ने दरवाजे की ओर संकेत किया । एक सार्जेंट और दो कान्स्टेबल हाथ में हथकड़ियाँ लिये हुए बैठक में प्रवेश करते दिखाई दिये । लाला जी का मस्तिष्क चक्कर खाने लगा ।

“इनको तुमने क्यों बुलाया है ?” लाला जी ने भयभीत हो कर कहा ।

“मुझे भूषण चाहियें, मेरी माँ के रखे भूषणों में से । लाला जी शीघ्र कीजिये ।”

शंकर भागा हुआ दरवाजा देखने गया । वहाँ जा कर उसने ताला लगा हुआ देखा तो वह अपने सिर को दोनों हाथों में पकड़ वहीं बैठ गया ।

भीतर लाला नत्थूमल ने रामू से कहा, “इनको लौटा दो तो मैं तुम्हें जो चाहो दूँगा ।”

रामू ने मुस्करा कर कहा, “दारोगा साहब ! आप ज़रा बाहिर ठहरिये ।”

सार्जेंट और कान्स्टेबल हथकड़ियाँ छनछनाते हुए बैठक से बाहिर निकल गये । रामू ने फिर कहा, “लाला जी ? मैं आपको पिता तुल्य समझता हूँ । आप यह काम अब जल्दी कर दीजिये, मुझे शीघ्र ही गाँव जाना है ।”

विवश लाला नत्थूमल उठा और बैठक के बाहर चला गया । बाहर आ उसने देखा कि ड्योढ़ी के दरवाजे को अब भी ताला लगा हुआ है और उसके आश्रय पर शंकर अपने सिर को हाथों में पकड़े बैठा हुआ है । लाला जी ने देखा कि पुलिस आदि वहाँ कोई नहीं है । उसने

ठोकर मार कर शंकर को सचेत किया और कहा, “यहाँ क्या कर रहे हो ?”

“मैं सोच रहा था, पिता जी ! कि वे किधर से आये हैं ?”

“और अब किधर से गये हैं ?”

“तो वे चले गये हैं ?”

“बैठक से बाहर चले गये थे ।”

शंकर उठ कर विस्मय में अपने पिता का मुख देखने लगा । लाला ने कहा, “तुम भीतर उसके पास चल कर बैठो । मैं आता हूँ ।”

शंकर बैठक में चला गया और लाला नत्थूमल्ल तहखाने की ताली खोल नीचे उतर गया । शंकर ने बैठक में जा कर रामू से पूछा, “वे पुलिस वाले चले गये भैया ?”

“नहीं तो । वह देखो ।” रामू ने संकेत कर बैठक के दरवाजे की ओर दिखाया । शंकर ने सार्जेंट और कान्स्टेबल को देखा । वह उनको देख कर फिर आँखें मूँद कर बैठ गया । रामू ने उसके कन्धे पर हाथ रख कर कहा, “भैया, अपनी नई बीवी को नहीं दिखाओगे ? मेरी तो वह बहिन ही लगती है ।”

शंकर के मुख से आवाज़ नहीं निकल रही थी । रामू ने उसकी अवस्था की ओर ध्यान दिये बिना कहा, “मैं बुलाऊँ उसको ?” रामू उठ कर सेहन में जाने लगा तो शंकर ने उसके हाथ को पकड़ कर कहा, “वह तुमसे मिलना नहीं चाहती ।”

“कैसे कहते हो यह ? वह देखो । वह तो खयं मुझे देखने चली आई है ।”

शंकर ने घूम कर देखा तो कोई औरत बैठक के किवाड़ के पीछे छुपी

खड़ी दिखाई दी। उसने आवाज़ दे कर कहा, “यहाँ क्या कर रही हो ? भाग जाओ ऊपर।”

रामू हँस पड़ा। इस समय शंकर का पिता हाथ में एक संदूकची उठाये हुए बैठक में आ गया। उसके मुख का रंग उड़ चुका था, और उसका पूर्ण शरीर काँप रहा था। माथे पर पसीने की बूँदें टपक रही थीं। रामू मुस्करा रहा था। शंकर उठ कर दरवाज़े के बाहर अपनी स्त्री को डाँटने चला गया। नत्थूमल्ल ने संदूकची रामू के सामने रख दी और स्वयं दूर हट कर बैठ गया। अपने माथे पर से पसीना पोंछते हुए उसने कहा, “यह संदूकची तुम्हारी माँ की है। इसमें सब भूषण रखे हैं। जितनों की आवश्यकता है इसमें से निकाल लो।”

रामू ने कहा, “आप स्वयं ही निकाल दें। मुझ को पाँच भूषण चाहियें। हाथों के कंगन, नाक की नथनी, गले की कंठी, सिर के फूल और चौक और कानों की बालियाँ।”

नत्थूमल्ल ने दूर बैठे-बैठे ही चाबी रामू के सामने फेंकते हुए कहा, “यह लो, जो चाहिये निकाल लो।”

रामू ने चाबी से संदूकची खोली और उसका ढकना उठा कर देखा। इस समय शंकर यह देख कर कि उसकी स्त्री ऊपर चली गई है, बैठक में आ कर रामू के पीछे खड़ा हो, रामू को भूषण निकालते देखने लगा। जब रामू ने संदूकची का ढकना उठाया तो शंकर चीख मार कर पीछे हट गया। नत्थूमल्ल भी उठ कर भागने के लिये तैयार खड़ा हो गया। रामू ने तुरन्त ढकना बन्द कर दिया और संदूकची को ताला लगा दिया। इससे बाप-बेटे दोनों को सन्तोष हुआ। जब वे दोनों बैठ गये तो रामू ने कहा, “लाला जी ! क्या यही कुछ है जो माँ ने आपके पास रखा था ?”

“हाँ यही कुछ है । तुम ले जाना चाहते हो तो सब ले जाओ ।”

“जब माँ ने सन्दूकची दी थी तो आपने भूषण काँटे में तोले थे न ? अब उन्हें वैसे ही तोल कर मुझे दे दीजिए ।”

“नहीं ! नहीं !! तुम ये सब कुछ ले जाओ । हम इनमें से कुछ नहीं रखेंगे । रामू भैया ! इस सन्दूकची को शीघ्र यहाँ से ले जाओ ।”

रामू सन्दूकची को बगल में दबाये हुए उठ खड़ा हुआ । नत्थूमल्ल और शंकर दूर हट कर खड़े हो गए । जब रामू जाने लगा तो शंकर भाग कर गया और ड्योढ़ो का दरवाज़ा खोल दिया । रामू बाहिर निकला तो शंकर ने भाँक कर देखा । दूर गली के कोने में पुलिस वाले खड़े दिखाई दिये ।

५

रामू के चले जाने के पश्चात् शंकर भीतर आया । उसके पिता ने कहा, “गजब हो गया बेटा । देखा था न सन्दूकची में क्या था ?”

“हाँ, पिता जी ! फणदार साँप थे । उसने भी तो उन्हें देखा होगा । पर आश्चर्य यह है कि वह उनको लेकर चला गया है ।”

“यह पुलिस की बात का अर्थ मेरी समझ में नहीं आया । पहलं वे गली के कोने पर खड़े थे । परन्तु मैं जब वहाँ गया तो वे वहाँ नहीं थे । वहाँ से लौट कर आया तो मकान के भीतर खड़े थे । मकान को भीतर से ताला लगा था । पीछे वे यहाँ भी नहीं रहे और बिना ताला खुलवाये वे पुनः गली के कोने पर जा कर खड़े हो गये ।”

“उस सन्दूकची में पन्द्रह-बीस साँप थे, शायद अधिक ही होंगे । रामू

ने भी उनको देखा होगा और इसी कारण उसने खोलते ही संदूकची को बन्द कर लिया था ।

“जब उसने उसे खोला था तो मैं उसके पीछे खड़ा था । मैंने देखा था कि उसमें फणदार साँपों के के गुच्छे के गुच्छे थे ।”

“मुझे पूरा विश्वास है कि मैंने सोहिनी की माँ के भूषण उसमें रखे थे । लोग कहते हैं कि धन की रक्षा के लिए साँप आ जाते हैं, परन्तु वे ताला लगी संदूकची में कैसे जा पहुँचे ?”

“पिता जी ? यह सब कुछ धोखा है ।”

“पर मैं क्या ग्रंथा हो गया हूँ ! तुम भी ग्रंथे हो क्या ? जब तह-खाने में जा कर मैंने सेफ खोला और उसमें से संदूकची को निकाल कर लैंप के प्रकाश में खोला और भूषणों को पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाया तो एक साँप फण खोल कर खड़ा हो गया और लगा फुफ्फुकारने । मैंने हाथ एकदम पीछे खींच लिया ।”

बेटा चुप कर रहा । परन्तु उसके मन में सन्देह बना ही रहा । उसके हृदय में अपनी पहली स्त्री सोहिनी के लिये बहुत प्रेम था, परन्तु अपने पिता के उक्ताने पर उसने उससे और उसकी माँ से बुरा व्यवहार करना आरंभ कर दिया था । इस व्यवहार की सीमा यहाँ तक बढ़ गई थी कि सोहिनी की माँ को उनके घर में गौकरानियों को भाँति काम करना पड़ा था । इससे सोहिनी के मन पर बहुत गहरी चोट लगी और अपनी माता का आश्रय उसके हृदय में ठंडे लोहे की भाँति धँस गया । इसी कारण वहाँ बीमार रहने लगी ।

आज इस सत्य का आभास शंकर को हुआ । स्वस्थ हो जाने पर जब

वह घर लौटी तो उसे वहाँ अपनी नई सौतन से साक्षात् हुआ। इसके पिता ने उसे बीस हजार रुपया दहेज में दिया था। परन्तु वह अति कुरूप थी। इससे रह रह कर उसे सोहिनी की याद आती थी। आज इस साँप और पुलिस की घटना को देख उसे ऐसा प्रतीत होने लगा कि यह उनके बुरे कर्मों का फल है। इसी समय उसे उसके अपने और पिता जी के वे सब पापकर्म स्मरण आने लगे जो उन्होंने सोहिनी और उसकी माँ के साथ किए थे।

उसने अपने पिता से कहा,

“पिता जी, यह क्या है ? क्या हमारे कर्मों का फल तो नहीं है ?”

“हमने कोई बुरा कर्म तो किया नहीं। सोहिनी की माँ को दस वर्ष तक जो खिलाया-पिलाया है उसका मूल्य ही तो माँग रहे हैं। आखिर, बही में जो कुछ लिखा है वह गलत नहीं हो सकता।”

“पर पिता जी, है तो गलत ही। दो पैसे की दही के चार पैसे लिखे जाते थे।”

“यह तो व्यापार की बात है। प्रत्येक व्यापार में हमारी आड़त आवश्यक है।”

बाप की बात बेटे को जची नहीं। इसके पश्चात् चिरकाल तक दोनों अपने मन में विचार करते रहे। आखिर शंकर उठा और मकान की छत पर गया और जाते ही उसने कमरे के बाहर से आवाज़ दी, “लक्ष्मी !” लक्ष्मी शंकर की दूसरी स्त्री का नाम था। शंकर का न तो सोहिनी से कोई बच्चा था और न ही अभी तक लक्ष्मी से। कमरे के भीतर से लक्ष्मी ने उत्तर दिया, “बाहर ही खड़े हो कर क्या हल्ला कर रहे हो। भीतर क्यों नहीं आते ?”

नियमानुकूल लक्ष्मी पति की दूसरी स्त्री होने के कारण, शंकर को डाँटा करती थी। पर आज की डाँट उसे बहुत अखरी। वह एक धनी बाप की बेटी थी, अतः उसकी डाँटों को सहन करने का उसे अभ्यास हो गया था। वह भीगी बिल्ली की तरह जब कमरे में गया तो लक्ष्मी ने कहा, “क्या है ?”

“तुम नीचे क्यों आई थी ?”

“तुमने बुलाया जो था।”

“मैंने ? नहीं तो, मैंने नहीं बुलाया था।”

“वाह ! तुमने आवाज़ दी थी—लक्ष्मी नीचे आना। देखो, तुम्हारा भाई आया है।”

“मैं गई, और वहाँ एक अपरिचित आदमी को बैठा देख चकित रह गई। और पीछे लौट आई।”

“मैंने आवाज़ नहीं दी थी।”

“तो इस साधारण सी बात पर झूठ बोलने लग गए हो ? तुम्हारे साथ निर्वाह होगा कैसे ? अभी तो विवाह को दो वर्ष ही व्यतीत हुए हैं।”

शंकर इस गोरखधंधे को समझने में अशक्त था। इस पर भी उसने सोहिनी के साथ जो अनुचित व्यवहार किया था, उससे दुःखी हो रहा था। वह मन में सोहिनी को लौटा लाने का उपाय सोचने लगा, पर लक्ष्मी इससे बहुत बिगड़ जायगी और जीवन भार हो जायगा, यह विचार कर वह उसके सामने बैठ कर चुप हो गया।

उसे चुप बैठा देख कर लक्ष्मी ने पूछा, “वह कौन था ?”

“श्रीमती जी !” शंकर ने चिढ़ कर कहा, “मैंने तुम्हें आवाज़ नहीं दी थी। वह मेरी पहली बीबी का छोटा भाई रामू था। अपनी माँ के भूषण लेने आया था, सो ले गया है। बैठे-बैठे उसने कहा कि वह तुम्हारा भाई है और तुम्हें मिलना चाहता है। इस पर मैंने उसे कहा कि तुम उसे मिलना नहीं चाहती। परन्तु देखता क्या हूँ कि तुम किवाड़ के पीछे खड़ी हो। उसने हँस कर कहा, “लो, वह तो स्वयं आ गई है।” इस पर मुझे बहुत लज्जा उठानी पड़ी।”

“अपनी माँ से पूछो। तुम्हारी आवाज़ उसने भी सुनी थी।”

इससे तो शंकर और भी परेशान हुआ। वह इस सब गोरखधन्धे का अर्थ समझना चाहता था। वह अपने कमरे से बाहर निकल आया और माँ से जा कर पूछने लगा, “माँ, मैंने लक्ष्मी को नीचे बुलाया था क्या ?”

“हाँ बेटा ! तुम्हारी आवाज़ आई थी।”

. माँ के इस कथन से वह अति लज्जित हुआ और घर से बाहर निकल गया। बाज़ार से भाड़े का टाँगा ले कर वह रामू के गाँव की ओर चल पड़ा। मार्ग में उसके मस्तिष्क में अनेकानेक विचार आ रहे थे, जिनसे उसका मस्तिष्क भन्ना रहा था। वह सोच रहा था, सँदूकची में जो साँप थे, उन्हें रामू ने भी देखा था। इस पर भी वह उसे बगल में दबा कर चला गया। पुलिस, जो बाहिर खड़ी थी, ताला लगा होने पर भी वहाँ कैसे आ सकी ? अब इस घटना पर वह और भी विस्मित हो रहा था। मैंने आवाज़ नहीं दी थी, परन्तु माँ और लक्ष्मी दोनों कहती हैं कि उन्होंने आवाज़ सुनी थी। यह सब क्या है ? मार्ग भर यही कुछ सोच रहा था, परन्तु उसकी समझ में कुछ न आ रहा था। इसी उधेड़बुन में पड़ा वह बड़ा गाँव में अपनी सास के मकान के दरवाजे

पर जा पहुँचा। दरवाजे के बाहिर से ही उसने आवाज़ दी, “रामू भैया !!”

रामू भूषणों की संदूकची माँ के सामने रख कर दिखा रहा था। माँ कह रही थी, “जहाँ तक मुझ को स्मरण है, इसमें वे सब भूषण हैं, कोई भी कम नहीं है।” सोहिनी भी समीप बैठी भूषणों को देख रही थी। जगदीश चन्द्र ड्योड़ी के समीप एक कमरे में बैठा हुआ फ़िमी विषय पर चिन्तन कर रहा था। जब उसने बाहिर किसी को बुलाते हुए सुना तो वह उठ कर बाहिर आया। शंकर को घबराया हुआ खड़ा देख वह सभी कुछ समझ गया। रामू ने आते ही उसे सारी बातों से, जो वहाँ हुई थीं, परिचित कर दिया था। जगदीश चन्द्र ने शंकर की ओर देख कर पूछा, “आपका नाम शंकर तो नहीं?”

एक अपरिचित आदमी को अपना नाम लेते सुन कर शंकर विस्मय से उसका मुख देखने लगा। जगदीश चन्द्र उसके मन के भावों को समझ कर पूछने लगा। “अपनी स्त्री सोहिनी देवी से मिलने आये हो क्या?”

शंकर इससे और भी चकराया। उसने घबराहट में पूछा, “आप कौन हैं? मैंने तो आपको पहले कभी नहीं देखा।”

“ठीक है। मैं पहली ही बार यहाँ आया हूँ। इस पर भी आपके विषय में कुछ जानता हूँ। बताइये रामू को बुलाऊँ, या सोहिनी देवी को?”

शंकर पर जगदीश के व्यक्तित्व का प्रभाव पड़ रहा था। वह यह स्मरण करने का यत्न कर रहा था कि उसे कहाँ देखा है। वह खड़ा-खड़ा ही अनुभव कर रहा था कि यह आदमी सर्वथा अपरिचित नहीं है। पहचानने में सफल न हो उसने फिर पूछा, “आप यहाँ कब से हैं?”

“दो दिन से।”

“आप कहाँ के रहने वाले हैं?”

“काश्मीर रियासत का ।”

“मैंने आपको पहले कभी देखा है ।”

“आप भूल कर रहे हैं । आपने मुझे पहले कभी नहीं देखा ।”

“मैं रामू से मिलने आया हूँ ।”

“तो आओ ! इधर कमरे में आ जाओ ।” जगदीश उसको उस कमरे में ले गया, जहाँ वह ठहरा हुआ था । वहाँ ले जा कर उसने उसको दरी पर बिछी चाँदनी पर बैठाया । स्वयं भी उसके सामने बैठते हुए कहने लगा, रामू अभी यहाँ आयेगा । जो भूषण आपने लौटा दिये हैं वह अपनी माँ और बहिन को दिखा रहा है ।”

“भूषण हम ने लौटा दिये हैं ? कहां हैं वे ? मैं भी देखना चाहता हूँ ।”

“आपको दिखा कर ही तो लाया है ।”

“हमने तो कोई भूषण नहीं लौटाये ।”

“तो तुम भी भीतर जा कर देख सकते हो । रामू कहता है कि मुम्हारे पिता जी ने कहा था, “ले जाओ, सब ले जाओ ।”

शंकर भीतर चला गया । परन्तु दूसरे ही क्षण वह चीखें मारता हुआ भागता आया । जगदीश ने उसे थाम कर पूछा, “कहाँ भागते जाते हो शंकर ? क्या हो गया है ?”

शंकर भाग जाता यदि वह जगदीश के हाथों से छूट सकता । जगदीश के लोहे के पंजे में फँसा वह खड़ा हो गया, परन्तु द्वार की ओर अति भयभीत दृष्टि से देख रहा था । जगदीश उसे अपने कमरे में ले गया, और फर्श पर बैठा कर पूछने लगा, “क्या हुआ है ? भूषण नहीं देखे तुमने ?”

“भूषण तो थे । परन्तु भूषणों के ढेर के चारों ओर तीन बड़े-बड़े फणियर साँप फण फैलाये भूम रहे थे । वहाँ और कोई न था । ऐसे

प्रतीत होता है कि रामू और उसकी माँ और बहिन उन्हें देख कर कहीं भाग गई हैं। जो सन्दूकची हमने रामू को दी थी वह साँपों से भरी हुई थी। शायद नीचे भूषण थे और ऊपर साँप बैठे हुये थे।”

जगदीश चन्द्र कहकहा मार कर हँस पड़ा। उसने कहा, “आओ मेरे साथ। दिखाओ कहाँ है साँप ! मैं साँपों को वश में कर सकता हूँ।”

शंकर की इच्छा भीतर जाने की नहीं थी। परन्तु जब जगदीश ने कहा आओ, तो वह विवश हो गया और उठ कर उसके साथ भीतर को चल पड़ा। उसका दिल धक्-धक् कर रहा था। जगदीश ने उसे बाँह से पकड़ा तो ऐसा प्रतीत हुआ कि वह नीम के पत्ते की भाँति काँप रहा था। भीतर जाकर शंकर ने देखा कि रामू और उसकी माँ और बहिन भूषणों को सन्दूकची में समेट रही हैं। जगदीश ने शंकर की ओर देख कर पूछा, “कहाँ हैं साँप ? बताओ।”

शंकर आश्चर्य में खड़ा देखता रह गया। उसका मुख खुला था, पर वह बोल न सकता था। आँखें फाड़ फाड़ कर वह भूषणों की ओर देख रहा था। जगदीश को आया देख कर तीनों खड़े हो गये। सोहिनी ने सिर बा कपड़ा कुछ नीचे कर लिया।

शंकर को ऐसा प्रतीत हुआ कि सोहिनी बीमारी से उठने के पश्चात् तो पहले से भी अधिक सुन्दर दिखाई देने लगी है। जगदीश ने सबको बैठने को कहा। जब वे बैठ गये तो स्वयं भी शंकर के साथ बैठ गया। शंकर अनुभव कर रहा था कि कुछ विशेष बात उसके मन में उठ रही है जिसका अर्थ समझने में वह अशक्त है। बात जगदीश ने आरम्भ की। उसने पूछा, “शंकरदास जी, यहाँ तो कोई साँप नहीं है।”

“पर मैंने देखे थे।”

“मैं बताता हूँ । आपके पाप ही आपके सम्मुख साँप बन कर आ रहे थे । न तो संदूकची में साँप थे और न अब हैं ।”

इस समय शंकर को अपने पिता की बात स्मरण हो आई । उसने दुहरा दी, “हमने कोई पाप नहीं किया । सब हिसाब हमारे पास लिखा हुआ है । पाई-पाई का हिसाब है । आप चल कर हमारी बही देख सकते हैं ।”

“वह भी देख लेंगे । कहो तो कल देखने आवें ? परन्तु मैं कहता हूँ कि आप को जो साँप दिखाई दिये हैं इससे यह बात सिद्ध होती है कि आपके मन में पाप है । तभी तुम्हारी अन्तरात्मा तुम्हें भयभीत कर चेतावनी दे रही है । तुमने घोर पाप किया मालूम होता है । उसका प्रायश्चित्त करो । नहीं तो निश्चय साँप की योनि में पड़ोगे ।”

यह सुन शंकर के सारे शरीर में कंपकंपी हो उठी । उसने सुन रखा था कि साँप की आयु पाँच सौ वर्ष होती है । तो क्या वह पाँच सौ वर्ष तक बिलों में घुसता रहेगा ? यह विचार ही उसको भयभीत करने के लिये पर्याप्त था ।

उसके मन में बार-बार यह बात आ रही थी कि उन्होंने निस्संदेह धोखा दिया है । पिता जी ने उससे झूठी वही लिखवाई है । जो रुपया उसकी सास को दिया गया था, उस पर सूद दर सूद लगा कर एक पैसे का एक रुपया बनाया गया है । उसकी सास को उकसा-उकसा कर मंगल से झगड़ा करवाया गया है । आज वह सोच रहा था कि उसने ये सब पाप-कर्म क्यों किये ? न उसके कोई लड़का है न लड़की । यदि कोई सन्तान होती भी, तो वे पिता के पाप-कर्मों का फल क्यों भोगती ? अपने कर्मों का फल तो उसे ही भोगना पड़ेगा ।

इस प्रकार विचारते हुए उसके सिर में चक्कर आने लगे। वह एकाएक उठा और भाग कर घर से बाहर निकल गया। बाहर एक ताँगा खड़ा था, उस पर सवार हो वह नगर को चला गया।

७

जिस दिन जगदीश और रामू गाँव में आये थे उस दिन मोहिनी अपनी लड़की मानिनी के साथ अपनी सास से मिलने को आई हुई थी। जब जगदीश चन्द्र रामू की माँ को प्रणाम करने भीतर गया तब मानिनी लस्सी के कटोरे में तैर रहे मक्खन को खा रही थी। उसे देख कर जगदीश एक क्षण में समझ गया कि यही है वह जिसकी खोज में वह दो जन्म से भटक रहा है। लड़की का चित्र तो उसके मन में पहले ही चित्रित था। अब अपने मन की तस्वीर को सामने बैठा देख वह आश्चर्य में उसको देखता रह गया। मानिनी ने भी इस नये आने वाले को देखा और लस्सी पीना भूल गई। रामू की माँ के कहने पर जगदीश चन्द्र पास की खाट पर बैठा तो मानिनी ने मक्खन खा कर लस्सी को वहीं रख दिया। और अपनी चुनरी के आँचल से मुख पोंछ कर उठ खड़ी हुई और बहुत ध्यान से जगदीश चन्द्र को देखने लगी।

जगदीश ने उसको अपनी ओर देखते हुए पा कर उंगली से संकेत कर समीप बुला लिया। मानिनी, जैसे लोहा चुम्बक की ओर खिंच जाता है, वैसे ही जगदीश के समीप आ कर खड़ी हो गई।

“क्या नाम है तुम्हारा ?” जगदीश चन्द्र ने उसका संकोच मिटाने के लिये पूछ लिया। मानिनी को लज्जा लग रही थी। वह पाँव के अंगूठे से लकीरें खींचने लगी। जगदीश हँस पड़ा। उसने कहा, “देखो, मैं तुम्हारा नाम जानता हूँ। तुमको ये लोग मानिनी कह कर पुकारते हैं न ?”

मंगल को आश्चर्य हुआ कि यह नाम इन्हें कैसे पता लग गया। मानिनी ने अपना नाम उन्हें लेते सुन, एक बार आँख उठा उनकी ओर देखा। उसकी लज्जा और संकोच को देख कर सब हँसने लगे। परन्तु मोहिनी सोच रही थी कि मानिनी के भाव में संकोच क्यों हो रहा है जब कि औरों के सामने तो वह घर भर में ऊधम मचाती रहती है।

मानिनी वहाँ फर्श पर ऐसे बैठ गई मानों उसकी टाँगों में शिथिलता आ गई हो। इस पर जगदीश ने कहा, “पर मैं तुम्हारा एक और नाम भी जानता हूँ। शायद तुमको भी याद होगा। तुम्हारा नाम भामिनी भी रहा है।”

मानिनी को ऐसा अनुभव हुआ कि उसको नींद आ रही है। जगदीश चन्द्र ने उसकी ओर से ध्यान हटा कर रामू की माँ से कहा, “माता जी ! मैं और रामू दोनों देश-देशान्तर में भ्रमण करने जा रहे हैं। रामू की शिक्षा में यही एक कमी रह गई है।”

“अब फिर जा रहे हो ?”

“हाँ माँ !” रामू ने उत्तर दिया। उसने कहा, “हम जब इस नगर में से गुजर रहे थे तो मेरा मन तुम्हें मिलने को हो आया। मैंने गुरुदेव से बहुत आग्रह कर तीन दिन तक गाँव में ठहरने के लिये इन्हें मनाया है। तीन दिन के पीछे हम चले जायेंगे। उसके बाद तुम्हारे घर में एक उत्सव होगा।”

“क्या होगा ? बहू लाओगे क्या ?”

“आशा तो करता हूँ।”

“पर क्या तब तक जीती रहूँगी मैं ?”

“हाँ, माँ जी।” उत्तर जगदीश चन्द्र ने दिया। “आप परपीत्रों का मुख देखेंगी।”

“तुम्हारी बात भगवान सत्य करे।”

इस प्रकार रामू का जाना तय हो गया। अब जगदीश का ध्यान सोहिनी की ओर गया। वह मलिन मुख बैठी अपने भविष्य के विषय में सोच रही थी। उसके मन में उठ रहे विचार का अनुमान लगा कर जगदीश चन्द्र ने कहा, “बहिन सोहिनी का विवाह भूल थी। इसको अब शंकर के साथ नहीं जाना चाहिये।”

मंगल ने गम्भीर भावों में कहा, “गुरुदेव, कुत्ते की दुग किसी भी उपाय से सीधी नहीं हो सकती। यही बात इनके समुर और पतिदेव की है। वे नितान्त स्वार्थी हैं।”

“मंगल भैया, जो मैं कहता हूँ उसे ठीक मानो। एक दो वर्ष के भीतर ही बहिन अपने इस बधन से मुलभेगी, परन्तु वह स्वयं दीर्घ जीवन व्यतीत करेगी।”

इस समय मानिनी ऊँधती-ऊँधती लेट गई और गहरी नीद में सो गई। मोहिनी नहीं चाहती थी कि वह दिन के समय सोये। इस कारण उसे उठाने का यत्न करने लगी। परन्तु जगदीश ने मना कर दिया। “मत उठाओ, वह बहुत लम्बे स्वप्न ले रही है। इसे स्वप्न लेने दो। वे उसके भविष्य जीवन से भारी सम्बन्ध रखते हैं।”

मोहिनी ठिठक गई। उसने देखा कि मानिनी का मुँह खिल उठा है। उसके होठों में से मुस्कान निकल रही है और उसके मस्तिष्क में विशेष तेज समाता प्रतीत होता है।

मानिनी को मुस्कराते देख, सब चकित हो उसकी ओर देखने लगे। जगदीश ने कहा, “माता जी ! यह अपने अतीत काल के स्वप्न देख रही है। अब यह नौ वर्ष की है। इस छोटे से बाल में भी इसने बहुत कुछ देखा है। परन्तु स्वप्नों में कभी-कभी मनुष्य पूर्व जन्मों की भी बातें देखने लगता है। यह शायद वही देख रही है।”

अब उसने मंगल को संकेत कर पूछा, “यह लड़की क्या पढ़ती है ?”

“इसे मैं स्कूल नहीं भेजता। यह घर पर ही अपने भाई दीप से कुछ हिन्दी और अंग्रेजी पढ़ लेती है।”

“अंग्रेजी में क्या रखा है ? हिन्दी साहित्य का तो अभी सृजन भी आरम्भ नहीं हुआ और अंग्रेजी साहित्य दूषित और विकृत मनोवृत्ति का सूत्रक है। मेरी राय मानो तो इसको संस्कृत पढ़ाओ। इससे यह वास्तविक अर्थों में देवी बन जायगी। वह अपने पति से पूज्य होगी और संसार इसी चरणरज पा कर अपने को कृतार्थ मानेगा।”

“पर गुरुदेव ! संस्कृत पढ़ाने वाला कहाँ से ढूँढ़ें ?”

“ढूँढ़ने से मिल जायगा। यदि तुम इसका प्रबन्ध न कर सके तो लौट कर यह प्रबन्ध मुझे करना पड़ेगा। तब इसे कुछ कठिनाई होगी क्योंकि मुझे भी संस्कृत भाषा केवल अभ्यास से ही आती है। इस अभ्यास में वह छः वर्ष पीछे रह जायगी।”

— इस समय मानिनी खिलखिला कर हँस पड़ी, और उसकी नींद खुल गई। वह विस्मय में सब को अपनी ओर देखते हुए पा कर लज्जा अनुभव करने लगी और उठ कर बैठ गई।

इस समय रामू ने बाहर जा कर मंगल वाला कमरा साफ़ करवा दिया और अपने गुरु के रहने का प्रबन्ध कर दिया।

जब मोहिनी मानिनी को साथ ले कर अपने घर की ओर चली तो मार्ग में लड़की ने पूछा, “माँ यह कौन आदमी था ?”

“एक तो तुम्हारा चाचा है। इसको घर से गए दस-ग्यारह वर्ष हो गए थे। आज लौट कर आया है। दूसरे तुम्हारे चाचा के गुरु हैं। दोनों फिर देशाटन के लिये जा रहे हैं।”

“क्यों जा रहे हैं ?”

“देशाटन से ज्ञानवृद्धि होती है। गुरु जी समझते हैं कि रामू की शिक्षा बिना देशाटन के पूर्ण नहीं होगी।”

“माँ ! जब मैं सो गई थी तो एक विचित्र स्वप्न मैंने देखा कि ऊँचे-ऊँचे पहाड़ हैं और यही गुरु जी वहाँ पर हैं। मैं भी वहाँ हूँ ! हम दोनों छोटे-छोटे हैं। एक नदी के किनारे खेल रहे हैं। इनका नाम नटेश्वर है, मेरा भामिनी। फिर मेरा इनसे विवाह हो रहा है। पर उस दिन गाँव में कामिनी का जैसा विवाह हुआ था वैसा नहीं। बहुत सुन्दर वेदी बनी है। बीच में हवन हो रहा है। हम उस अग्नि के चारों ओर चक्कर काट रहे हैं। एक विचित्र भापा में औरतें गा रही हैं और सब लोग प्रसन्न प्रतीत होते हैं।”

“यह सब पागलपन है।” मोहिनी ने कहा, “वह तो तुम्हारे पिता से भी बड़े प्रतीत होते हैं। उनका तुमसे विवाह नहीं हो सकता।”

“पर माँ ! मैं तो स्वप्न की बात कह रही हूँ। वे छोटे से ही थे। हम दोनों एक ही आयु के प्रतीत होते थे।”

“अच्छा, छोड़ो इस बात को।”

८

शंकर गाँव में पहुँचा तो उसने देखा कि उसका पिता भय के मारे बीमार हो गया है। उसके हृदय में धड़कन उत्पन्न हो गई है। वह अपने कमरे में लेटा हुआ है और डाक्टर आया हुआ है। उसने एक स्लीपिंग डोज़ दे कर कहा, “जितना ये आराम करेंगे उतना ही ठीक होगा।”

जब डा० फीस ले कर चला गया तो शंकर ने पूछा, “पिता जी, क्या बात है ?”

“मेरी आँखों के सामने साँप-ही-साँप घूमने लगे हैं। और ऐसा प्रतीत होत. है कि वे सब मुझे काटने के लिए दौड़े आ रहे हैं।

“मेरा मन तो कहता है कि यह सब हमारे पापकर्मों का फल है। हमारे पापकर्म ही हमारे सामने साँपों का रूप धारण कर रहे हैं। मैं सोहिनी की माँ के घर गया था। जब मैं भीतर गया तो मुझे ऐसा दिखाई दिया कि भूषण रखे हैं और उनको तीन बड़े-बड़े साँप देख रहे हैं। मैं चीखें मारता हुआ भाग खड़ा हुआ। वहाँ रामू के गुरु ठहरे हुए हैं। उन्होंने मुझे ढाढ़स बँधाया और मुझे अपने साथ भीतर ले गए। तब वहाँ साँप नहीं थे। रामू उसकी माँ और सोहिनी भूषणों को देख रही थीं। रामू का गुरु भी कहता था कि हमारे पापकर्म ही हमारे सामने भयंकर रूप धारण कर आ रहे हैं। हमें प्रायश्चित्त करना चाहिये।”

“कैसे प्रायश्चित्त करना चाहिये ?”

“मोहिनी की माँ को, जो कुछ भी उसका है, वापिस कर देना चाहिये।” यह बात शंकर ने अपने मन से कही थी। यह तो उसे पता ही था कि उसकी सास से अनुचित ढंग से धन लिया गया है, अतः वह इसे वापिस दिलाना चाहता था। यह बात अपनी ओर से नहीं कहना चाहता था। इस कारण उसने रामू के गुरु का नाम लिया था।

शंकर के पिता ने कहा, “पर बेटा, हमारी बही तो बड़ी से बड़ी अदालत, अर्थात् हाईकोर्ट में भी मान्य होती है। फिर वह ग़लत कैसे हुई ! उसके अनुसार जो कुछ निकलता है हम दे देंगे।”

“उसके अनुसार क्या निकलता है ? यह भूषण भी उनके थे अथवा नहीं ?”

“मुझको इतना कुछ स्मरण नहीं। पर हाँ, कुछ तो उनके बच गये थे। इसी कारण जो पाँच भूषण वह माँगने आया था, मैं उन्हें देने के

लिये तैयार था, परन्तु जब संदूकची ही साँपों से भरपूर देखी, तो मैंने उसके सामने रख दी। अब तुम कहते हो कि उसमें भूषण थे।”

“हाँ पिता जी ! यह पक्की बात है।”

इस समय ला० नत्थूमल्ल को धड़कन का फिर एक आक्रमण हुआ और वह हृदय पर हाथ रख कर चुप कर गया।

नत्थूमल्ल को ठीक होने में कई दिन लग गये। इस समय शंकर भी अपने पिता की सेवा-सुश्रूषा के लिए घर में ही रहता। डाक्टरों के आने जाने की भरमार लगी रहती। और इस भरमार के कारण दुकान का काम-धन्दा बंद रहा।

रात को जब शंकर अपने कमरे में सोया होता तो पिता जी के “हाय-हाय” का शब्द सुनता रहता। पहले तो वह यह आवाज़ सुन कर डर जाया करता और भाग कर पिता के पास पहुँच जाता, परन्तु धीरे-धीरे उसको पिता जी की “हाय-हाय” सुनने का अभ्यास हो गया और वह चुपचाप सोया रहता।

समय व्यतीत होने पर नत्थूमल्ल के मन में समाया हुआ भय कम होता गया और पुनः निःशंक हो दुकान पर जाने लगा। पिता के दुकान पर जा सकने के कुछ दिन पहले ही शंकर दुकान का काम देखने लगा था। उसने एक दिन वही खोल कर रामू का खाता निकाला तो उसे देख कर चकित हो गया, उस पर वे सब रकमें लिखी थीं जो रामू की माँ से प्राप्त हुई थीं, परन्तु खर्च के खाने में कुछ नहीं था। शंकर पन्नों को देखता रहा और इधर से उधर उथल-पुथल कर वही के पन्ने उलटता रहा। पर वह कुछ समझ नहीं सका।

इस सूचना को वह पिता जी को देने से डरता था। उसे भय था कि कहीं फिर उनके हृदय पर आघात न पहुँचे। परन्तु बात बहुत देर

तक छुपी नहीं रह सकी । ला० नत्थूमल्ल दुकान पर आया और शंकर के बहुत छुपाने पर भी रामू का हिसाब उसकी दृष्टि में आ गया । उसने जब हिसाब का पन्ना देखा तो देखते ही रह गया । बैठते दिल के साथ अपने लड़के से पूछने लगा, “रामू के हिसाब का यह क्या हुआ है ?”

“पिता जी ? यह हमारे कर्म लिखे हैं । भगवान जाने, क्या हो गया है ?”

“कुछ भी हो ! भूषण तो गये, पर हिसाब की यह बात उनको न बताना ।”

“मैं एक बात करना चाहता हूँ जिससे मैं समझता हूँ कि यह रुपये का भगड़ा उठ ही नहीं सकेगा ।”

“क्या ?”

“मैं सोहिनी को पुनः अपने घर ले आता हूँ । जब वह मेरे पास रहने लगेगी तो उसकी माँ या भाई कभी भगड़ा नहीं करेंगे ।”

“पर लक्ष्मी का क्या होगा ? उसके माता-पिता भी तो भगड़ा कर सकते हैं ।”

“उनके हम किसी बात के ऋणी थोड़े ही हैं । लड़की चाहे तो ले जायें । कौन मेनका है कि उसके बिना जीवन दूसर हो जायगा ।”

“पर उसका पिता बहुत धनी आदमी है । हमें व्यापार में हानि पहुँचा सकता है ।”

“हम किसी का दिया नहीं खाते । अपनी मेहनत का खाते हैं ।

फिर लक्ष्मी में और गुण भी क्या हैं ! उसकी और सोहिनी की क्या तुलना !”

“तो यह बात है ! ऐसा प्रतीत होता है कि तुमने ही बही के पन्ने बदल दिये हैं । मेरे साथ यह कृतघ्नता ! अपने ही पिता के साथ !”

“पिता जी, यह बात नहीं है । मैंने पन्ने-वन्ने बिल्कुल नहीं बदले ।”

इस पर ला० नत्थूमल्ल चुप हो गया । उसने मन में यह निश्चय कर लिया कि आगे को लड़के से सतर्क रहेगा ।

पिता के उस पर सन्देह करने से शंकर को बहुत ही शोक हुआ । वह भगड़ा बहुत अधिक बढ़ाना नहीं चाहता था । उसको अपने पिता के स्वास्थ्य का बहुत ध्यान था । शंकर के पिता को भी लड़के की मनो-वृत्ति पर बहुत खेद आ और उस दिन से उसने लड़के पर विश्वास और भरोसा करना छोड़ दिया । इसका परिणाम यह हुआ कि शंकर का दुकान पर बैठना धीरे-धीरे छूटने लगा । नकदी को नत्थूमल्ल अपने अधिकार में रखने लगा ।

पहले शंकर जैसी आवश्यकता होती उसके अनुसार, रुपये तिजोरी से निकाल कर काम में ले आता था, परन्तु अब तिजोरी की चाबी ला० नत्थूमल्ल ने अपने अधीन कर ली थी । उसमें पैसे पैसे के लिये शंकर को पिता का मुँह ताकना पड़ता था ।

इससे एक परिवर्तन यह होने लगा कि शंकर की पत्नी लक्ष्मी के भी उसके प्रति आदर के भाव कम होने लगे । पहले ही वह ला० नत्थूमल्ल के पास अपने पिता से धन-सम्पत्ति बहुत कम समझती थी और अब वह शंकर और उसके पिता, दोनों को महामूर्ख समझने लगी । जब उसने देखा कि उसका पति अपने पिता का पैसे पैसे के लिए मोहताज हो गया है, तो वह उसे और भी अधिक मूर्ख मानने लगी ।

एक रात की बात है । लक्ष्मी ने शंकर से कहा, “मैं बाज़ार से कुछ कपड़ा खरीद लाई हूँ । वह दुकानदार आपको और मेरे पिता

जी को जानता है। इस कारण उससे उधार पर लाई हूँ। कल उसे रुपया दे आइयेगा।”

“कितने रुपये का माल लाई हो ?”

अभी तो केवल अढ़ाई सौ रुपये का माल लाई हूँ। चाहिए तो और भी था, परन्तु उस दुकान पर वह था नहीं। और सामने का दुकानदार मुझे पहचानता नहीं था। उसे फिर रुपया नकद दे कर ले आऊँगी।”

“पर इतना एकदम ले कर क्या करोगी ?”

“भैया का विवाह है। मुझे नये कपड़े बनवाने हैं।”

“यह तो जानता हूँ, परन्तु एक ही पोशाक काफी नहीं है क्या ?”

“वाह ! विवाह का काम तो तीन दिन चलता रहेगा। तो क्या एक ही पोशाक नित्य पहनती रहूँगी ? विवाह के तीनों दिन एक ही पोशाक पहनते रहने से नाक न कट जायगी आप सब की ?”

शंकर जानता था कि लक्ष्मी से बातचीत करने का कोई लाभ नहीं। साथ ही वह यह भी जानता था कि पिता से रुपया माँगने में अपमान होता है। इस पर भी कोई चारा न देख कर अगले दिन पिता जी से बोला, “पिता जी ! पाँच सौ रुपया चाहिए।”

“क्या करना है इतना रुपया ?”

“लक्ष्मी के भाई का विवाह है। कुछ कपड़े बनवाने हैं।”

“तो पाँच सौ क्या करोगे ? एक सौ रुपया ही काफी है।”

“वह पाँच सौ से कम पर राजी न होगी।”

“तो उससे कह दो कि मैं एक सौ से अधिक नहीं देता।”

शंकर चुप कर गया। दोपहर के समय ला० नत्थूमल्ल आराम कर रहे थे तो शंकर ने चाबी तकिये के नीचे से निकाल कर तिजोरी खोली।

और जब उसमें से पाँच सौ रुपये निकाल चुका तो उसे विचार हुआ कि निन्य माँगने की खचखच से बचने के लिए कुछ और भी निकाल लूँ। उसने दस दस के नोटों के एक हजार के बंडल को लेने की टानी। इतने में उसके पिता की नींद खुल गई और वह तकिये के नीचे चाबी को न पा, भाग कर कोठरी में आया। वहाँ देखा कि तिजोरी खुली थी और शंकर एक हजार का बंडल निकाल कर अपने कुर्ते की जेब में रख रहा था। पिता ने देखते ही उसे डाँटा, “यह क्या कर रहे हो ?”

शंकर का हाथ काँप गया। नोटों का बंडल उसके हाथ से नीचे गिर गया। पिता ने कहा, “यह चोरी करना किसने सिखाया है तुम्हें ?”

“पिता जी, ज़रूरत थी।” काँपती आवाज़ में शंकर ने कहा।

“अबे, औरत के गुलाम ! घर तवाह करने के लिए कमर कस ली है क्या ? दिखाओ कितना निकाला है ?”

हजार रुपये का बंडल तो गिर ही पड़ा था। नत्थूमल्ल ने वह तो उठा लिया और पूछा “और भी लिया है क्या ?”

शंकर चुप रहा। नत्थूमल्ल ने उसे चुप देख कर कहा, “निकल जाओ। एक सौ रुपया मिलेगा। अधिक नहीं। चले जाओ।”

शंकर कमरे से बाहर निकल आया। जो पाँच सौ रुपये उसने लक्ष्मी को देने के लिए निकाले थे उसकी जेब में ही थे। उसके चले जाने के पश्चात् नत्थूमल्ल ने सब रुपया गिन डाला। तिजोरी में ही एक छोटी सी बही रखी थी जिसमें कुल रखे रुपयों का व्योरा था। लाला ने रुपयों को गिन कर उनका बही से मिलान किया तो पता लगा कि पाँच सौ रुपये की कमी थी। इससे नत्थूमल्ल को आग लग

गई। उसने तिजोरी बन्द कर बाहर आ शंकर को आवाज़ दी। “ओ चोर के बच्चे शंकर ! इधर आओ, कहाँ हो ?”

शंकर लक्ष्मी को पाँच सौ रुपये दे कर घर चला गया था। लाला नत्थूमल्ल शंकर के कमरे के बाहिर खड़े हो कर उसे आवाज़ देने लगा।

लक्ष्मी ने किवाड़ के पीछे खड़े हो कर पूछा, “क्या है लाला जी ! वे घर पर नहीं हैं।”

“बदमाश का बच्चा ! पाँच सौ रुपया चुरा लाया है तिजोरी में से।”

लक्ष्मी को क्रोध चढ़ आया। उसने कहा, “चुरा कहाँ से लाया है। अपने थे, ज़रूरत पड़ी ले आया है।”

“अपने थे ! जब तक मैं जीता हूँ, उसका कुछ अपना नहीं है। यह चोरी है। मैंने उसे मना कर दिया था, उस पर भी वह क्यों ले आया है ?”

“तो वे क्या यहाँ मालिक नहीं, नौकर हैं ?”

“कुछ भी हो। मेरी स्वीकृति के बिना वह रुपया तिजोरी से नहीं ले सकता।”

“तो यह लो। रखो इसे अपने पास।” यह कह लक्ष्मी ने पाँच सौ रुपयों का बंडल किवाड़ के पीछे से लाला जी के मुख पर दे मारा।

लाला जी इस बात पर लैक्चर कर ही रहे थे कि लक्ष्मी ने खट से कमरे का दरवाज़ा बन्द कर दिया।

६

जगदीश और रामू गाँव से विदा होने से पूर्व मंगल को मिलने गये। ये ड्योढ़ी में पहुँचे ही थे कि मानिनी घर के सामने बगिया में

फूल तोड़ रही थी। जगदीश उसको देख कर खड़ा हो गया। रामू भी वहाँ खड़ा हो गया और गुरुदेव के मन के भावों का अनुमान लगाने लगा। मानिनी ने उन दोनों को अपनी ओर निहारते देख कर लज्जा अनुभव की। उसने फूल तोड़ने छोड़ दिये और जितने तोड़े थे उतने ही ले कर घर के पिछवाड़े की ओर चल दी। इस पर जगदीश ने आवाज़ दी, “मानिनी दिखाओ इधर ! यह क्या लिए जा रही हो ?”

इच्छा न रहते हुए भी मानिनी के कदम रुक गये और इनकी ओर घूम गये। बाँस की डालिया में फूल थे। उसने डालिया को दिखा कर कहा, “फूल लिये जा रही हूँ।”

“क्या करोगी इन्हें ?”

“माँ पूजा करने जा रही हैं। देवता पर चढ़ायेंगे।”

“कहाँ जाती हैं पूजा करने के ?”

“घर में ही ठाकुर जी रखे हैं।”

“तुम भी पूजा करती हो क्या ?”

“हाँ।”

“क्या माँगती हो उनसे ?”

“पूजा माँगने के लिए थोड़े ही की जाती है ! पूजा तो उनको प्रसन्न करने के लिए है।”

“प्रसन्न हो कर भगवान् क्या करते हैं ?”

“जो उनका मन करता है।”

“तो फिर प्रसन्न करने से लाभ ही क्या हुआ ?”

“लाभ तो अपने आप होता है। हमने प्रसन्न कर दिया, हमारा काम समाप्त हुआ। पश्चात् यह उनका कर्तव्य हो जाता है कि उसका जो चाहें फल दें।”

“बहुत सुन्दर ! बहुत सुन्दर ! मानिनी, यह तुम्हें किसने बताया है ?”

इस प्रकार बातें करते-करते वे भीतर की ओर चले गये । मानिनी उसके साथ-साथ चलती हुई कह रही थी, “यह बात भी भला सिखाने की है क्या ? भगवान् तो सब के पिता हैं । उनको सब की चिन्ता रहती है ।”

जब वे मकान के बैठकखाने में पहुँचे तो मानिनी घर के भीतर खली गई । भीतर जा कर उसने उनके आने की सूचना माँ को दी । माँ ने दीप को उनके स्वागत के लिए भेज दिया ।

दीप ने अपने चाचा और उनके गुरु जी को बिठाया और उनके लिये जलपान का प्रबन्ध कर दिया । जलपान करते हुए जगदीश ने दीप से बातचीत आरम्भ की—“किस श्रेणी में पढ़ते हो ?”

“मैट्रिक की परीक्षा इस वर्ष दे रहा हूँ ।”

“फिर क्या करोगे ?”

“मैं इंटरमीडिएट साइंस पढ़ने लाहौर जाऊँगा ।”

“इससे क्या होगा ?”

“संसार का ज्ञान होगा । और मैं इंजीनियर बनने का विचार रखता हूँ ।”

“तो तुम भी मनुष्य की आत्मा के बन्धन निर्माण करने जा रहे हो ?”

दीप इसका अभिप्राय नहीं समझा । इस कारण जगदीश ने सामने टंगे पिजड़े में तोते की ओर उँगली करके पूछा, “वह क्या है ?”

“पिंजरे में तोता है ।”

“यहाँ पर पिंजरा दिखाने के लिये तोता बन्द किया है, अथवा तोता दिखाने के लिये पिंजरा टंगा है । इन दोनों में मुख्य कौन है ?”

“तोता ! पिता जी कई तोते अफ्रीका से लाये थे । उनमें से दो ही शेष रह गये हैं ।”

“यदि तुम्हारे पिता जी एक साधारण से मरियल से तोते को सोने के पिंजरे में डाल देते तो तुम इसे क्या समझते ?”

“मैं इसे व्यर्थ मानता ।”

“मेरा अभिप्राय यह है कि मनुष्य की आत्मा की चिन्ता न कर केवल शरीर की चिन्ता करने वाले पिंजरे को तो सजाने हैं परन्तु उसमें उपस्थित तोते की परवाह नहीं कर रहे हैं । या यूँ कहो कि इंजीनियर संसार को सुन्दर बनाने में लगे हैं, परन्तु उसमें उपस्थित मानव की ओर ध्यान नहीं दे रहे ।”

दीप इस उदाहरण को समझ गया, परन्तु इसको सुन कर जो उद्गार उसके मन में उत्पन्न हुए उनको वह प्रकट करने की शक्ति नहीं रखता था । इस कारण अब भी वह उनका मुख देखता ही रह गया । जगदीश ने अपने कथन को जारी रखा । उसने कहा, “दीप भैया ! पिंजरे को सुदृढ़ और सुन्दर बनाना और सजावट को टाँगना कोई बुरी बात नहीं है । परन्तु यदि उस पिंजरे में तोता ही अधमुआ हो तो कितना भद्दा प्रतीत होगा ? संसार को सुन्दर बनाना है तो बनाओ पर मानवता को न खो कर । शरीर को मुख देना हो तो दो, परन्तु आत्मा का हनन न करते हुये ।

अभी जलपान समाप्त नहीं हुआ कि मंगल उनके आने का समाचार पा कुँएँ पर से घर आ गया । उसने हाथ जोड़ कर उनका सत्कार किया और उनके सामने बैठ गया । जगदीश अब भी उन विचारों को, जो उसने दीप के सामने रखे थे, स्पष्ट करने का विचार कर रहा था । उसने कहा, “चौधरी साहब ! मैं दीप को कह रहा था कि जैसे पिंजरा बिना तोते के व्यर्थ है इसी प्रकार वह शरीर सुन्दर होता हुआ भी व्यर्थ

है जब तक उसमें आत्मा सजीव नहीं होती। इस कारण इस सुन्दर कलेवर में आत्मा को सजीव रखने का उपाय भी तो करना चाहिए।”

“तो क्या आत्मा सजीव नहीं है ? क्या इसे सजीव करने के लिये प्रयत्न करना पड़ता है ?”

“आत्मा तो सजीव है, और चेतन है, परन्तु कई ऐसे विचार हैं जो इसे या तो मूर्छित किये रहते हैं या इसकी हत्या ही कर देते हैं। भारत एक महान् देश है। इसकी संस्कृति यहाँ रहने वालों की बपौती है। इस संस्कृति को जीवित रखना पिजरे में तोते को जीवित रखने के समान है।”

“पर गुरुदेव ! यह संस्कृति क्या वस्तु है ?”

“यह शरीर में आत्मा है। जैसे शरीर का संचालन आत्मा के लिये होता है वैसे ही जातीय कर्म जातीय संस्कृति के लिये होते हैं। जाति के लोगों को भोजन, वस्त्र और अन्य सुख-सुविधायें इस कारण मिलती रहनी चाहिये कि उनको जीवित रखने से जाति की आत्मा, संस्कृति की रक्षा होती है।

संस्कृति जातीय आचार-व्यवहार को और साथ ही इस व्यवहार के पीछे प्रेरणा करने वाली विचारधारा को कहते हैं।

देखिये, दीप की माँ पूजा को गई हैं। मानिनी उनके लिये फूल तोड़ कर ले गई है। यह सब क्यों है ? मैंने मानिनी से पूछा कि भगवान् से क्या माँगोगी ? उसने कहा कि ‘माँगने के लिए पूजा नहीं की जाती।’ अर्थात्, वह कामनारहित पूजा करना चाहती है।

यह विचार और इस विचार को प्रेरणा देने वाली भावना हमारी भारतीयता की जान है। भगवद्गीता में इसे निष्काम भावना से कर्म करने की भावना कहा है। यह भारतीय संस्कृति है। इसके बिना

बाह्य संसार का निर्माण तो तोते की परवाह न कर केवल पिंजड़े को निर्माण करना ही कहा जा सकता है। यह मानव को बंधनों में जकड़ने के अतिरिक्त और कुछ नहीं।”

मंगल इस विवेचना को सुन कर इसे समझने का प्रयत्न कर रहा था। दीप गम्भीर विचार में पड़ा हुआ अपने स्वप्नलोक में विचरने लगा था। वह सभक्त रहा था कि वह आत्मा को भूत कर केवल शरीर के पोषण में लग जायगा।

जगदीश और रामू जलपान कर चुके थे। रामू ने बात आरम्भ की, “दादा, मैं गुरुदेव के साथ भ्रमणार्थ जा रहा हूँ। इस कारण तुम से आशीर्वाद लेने आया हूँ।”

“पर तुम्हारा खर्च कैसे चलता है? तुम्हारे पास कोई सोने की खान तो नहीं?”

“यह सब माया है, मंगल भैया! जो कुछ तुम देखते हो, जिसमें धन भी सम्मिलित है, सब माया है, अर्थात् कुछ भी नहीं, केवल भ्रम है। इसी प्रकार हम ‘नहीं’ में से सब कुछ उत्पन्न कर सकते हैं।” जगदीश ने कहा।

“मैं समझा नहीं महाराज। एक अनपढ़, मोटी बुद्धि का आदमी हूँ। आप कैसे शून्य से सब कुछ उत्पन्न कर सकते हैं?”

“देखो मैं बताता हूँ! यहाँ से हम लाहौर जाना चाहते हैं। हम दोनों को वहाँ जाने और वहाँ एक मास तक रहने के लिये एक सहस्र रुपये के लगभग चाहिये। धन माया अर्थात् कल्पना का रूप है। इस कारण जो दूसरों की कल्पना को प्रोत्साहन दे सकता है वह धन भी पा सकता है। यह शक्ति एक सीमा तक मैंने और मुझ से कुछ कम सीमा तक रामू ने प्राप्त कर ली है। इस कारण हमें रुपये का अभाव कष्ट नहीं देता।”

मंगल अभी भी समझ नहीं सका कि कैसे शून्य से सब कुछ हो सकता है। इस कारण वह जगदीश चन्द्र का मुख देखता रहा। रामू ने अपने भाई के बितर-बितर देखने पर कहा, “भैया, देखो मैं समझाता हूँ। यह देखो क्या है ?”

“दीप की पैसिल है।” मंगल ने कहा।

“इसकी ओर देखते रहो।”

इतना कह कर रामू ने पैसिल का एक सिरा भूमि पर लगा दिया। पश्चात् उसको ऊपर उठाया। ज्यूँ-ज्यूँ पैसिल ऊपर उठती गई, खन खन करते हुए रुपये भूमि पर गिरते गये। एक मिनट में ही रुपयों का ढेर लग गया।

मंगल आँखें फाड़ फाड़ कर रुपयों को देखता रह गया। रामू ने कहा, “भैया, इनको गिन डालो।”

मंगल ने रुपयों को गिन डाला। एक सहस्र से कुछ ऊपर थे। उस ने गुरुदेव से पूछा, “तो क्या ये रुपये शून्य से बन गये, गुरुदेव !”

“नहीं ! बना कुछ नहीं। इसके तत्त्व सब पहले ही उपस्थित थे, हमने योगबल से वे एकत्रित कर दिये हैं परन्तु मैं तो इतना कष्ट नहीं करूँगा। मेरा उपाय दूसरा है। मैं तो कहता हूँ कि मैं रुपया जिससे माँगूँगा वह दे देगा। मान लो कि मैं आपसे कहता हूँ कि मंगल भैया, पचास रुपये दे दो। तो तुम स्वयं दे दोगे। यह भी योगबल का परिणाम है कि जिससे जो कुछ चाहूँ मैं करवा सकता हूँ।”

“यह तो बहुत मजेदार बात हुई।”

“हाँ, परन्तु इस शक्ति को प्राप्त करने के लिए भारी तपस्या की आवश्यकता है; और साथ ही यह शक्ति, ज्यों-ज्यों इसका दुरुपयोग किया जाता है, धीरे-धीरे क्षीण होती जाती है।”

“परन्तु जिस काम को एक मनुष्य उपयोगी समझेगा उसको दूसरा दुरुपयोगी मान सकता है, फिर वह क्षीण कब और कैसे होगी ?”

“किसी कार्य के अच्छे और बुरे होने में अपनी अन्तरात्मा की भावना निर्णय करती है। एक योगी की बुद्धि विकसित हो जाती है; और उसकी अन्तरात्मा के निर्णय प्रायः ठीक होते हैं। योगेश्वर कृष्ण ने अनेकों कार्य अपनी आत्मा की प्रेरणा पर ऐसे किए थे जो दूसरों को भले प्रतीत नहीं हुए। परन्तु परिणाम निकलने पर सबने उन्हें ठीक माना है। एक योगी की आत्मा ही इस बात का निर्णय करती है। इस पर भी योगी की आत्मा के पतन होने की सम्भावना रहती है। शक्तिशाली आसन के ग्रहण करने से अहंकार और मोह बुद्धि पर आच्छादित हो जाते हैं। यही अवस्था रावण की हुई थी।”

जाने का समय होने पर जगदीश चन्द्र ने मंगल से कहा, “मेरा आशय यह है कि मानिनी को संस्कृत पढ़ाने का यत्न किया जाय और मेरे लौटने से पूर्व उसके विवाह का निर्णय न किया जाय।”

“क्यों ?”

“इसमें एक रहस्य है। यह रहस्य मानिनी स्वयं एक दिन बतायेगी। जब तक उसमें उस रहस्य को प्रकट करने की शक्ति नहीं आ जाती तब तक प्रतीक्षा करनी चाहिये, और विवाह स्थगित रखना चाहिये।”

मंगल इस रहस्यमय कथन का अर्थ नहीं समझ सका। उसके विस्मय की ओर ध्यान न देते हुये जगदीश और रामू उठ खड़े हुए। रामू ने जाने से पूर्व कहा, “भैया, यह रुपया, जो अभी दना है, किसी धर्मकार्य में लगा देना। इसमें से एक पैसा भी अपने काम में मत लाना।”

शंकर पर से उसके पिता का विश्वास उठ जाने पर वह कभी कभी सोहिनी से मिलने को आने लगा। पहिली बार वह तब आया था जब उसके पास से तिजोरी की चाबी ले ली गई थी। वह आया और उसके आने की सूचना जब सोहिनी को दी गई तो वह माथे पर त्योंरी चढ़ा कर घर के आँगन में खाट डाल उस पर आ बैठी। शंकर के बैठने के लिए सामने कुर्सी रखवा दी।

उसने शंकर का उठ कर सत्कार नहीं किया। केवल यह कहा, “बैठिये।”

जब वह बैठ गया तो उसने पूछा, “कैसे आना हुआ ?”

“सोहिनी ! मुझे अपने किये पर लज्जा आ रही है।”

“अच्छी बात है। आप पुनः ऐसा न करिएगा।”

“तो तुम उस घर चलोगी क्या ?”

“नहीं ! मेरा और आपका सम्बन्ध भूल थी। वह भूल समाप्त हुई है और उसको फिर दुहराने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती।”

“तो तुमने मुझे त्याग दिया है क्या ?”

“मैं इसके अर्थ नहीं समझती। परित्याग की आवश्यकता हम हिन्दू औरतों को नहीं होती। किसी कंगले को, जिसके पास नए वस्त्र खरीदने के लिये पैसा नहीं होता, पुराने कपड़े मुरम्मत् करवा कर ही गुजर करना पड़ता है। हम जब समझते हैं कि कपड़ा गन्दा हो गया है तो फेंक कर नया पहन लेते हैं।”

“तो तुमने मुझे गन्दा कपड़ा समझ फेंक दिया है और अब नये कपड़े की खोज में हो ?”

“तुम मेरी बात समझने की शक्ति नहीं रखते। मैं नए पति की खोज में नहीं हूँ। मैं तो यह कह रही थी कि आपके सम्पर्क में आने

से मेरा शरीर दूषित हो गया था, इसे फेंक देना चाहिए। और मैं ऐसा कभी का कर देती, परन्तु रामू के गुरु जी ने एक मंत्र दिया है और उसका जप करने से उनका कहना है कि आगामी शरीर अच्छा मिलेगा।”

“आगामी शरीर तो भगवान् जाने कैसा मिलेगा। यह शरीर तो पहले से भी अधिक सुन्दर हो गया है।”

“यह तो देख रही हूँ। अन्यथा आप यहाँ क्यों आते ! आपका सम्बन्ध मेरे शरीर से ही था। वह शरीर के बनने बिगड़ने से बनता बिगड़ता है। मैं इस सम्बन्ध को अपना अपमान समझती हूँ।”

विवश शंकर बिना प्रयोजनसिद्धि के लौट आया। दुकान में पिता की दूषित मनोवृत्ति से और घर में लक्ष्मी के तिरस्कार से पीड़ित वह पुनः एक दिन गाँव में सोहिनी से मिलने गया। यह वह दिन था जब उसने रुपया तिजोरी से निकाला था। वह पाँच सौ रुपया, जो अपनी जेब में छुपा कर ले आया था, लक्ष्मी को दे गाँव में जा पहुँचा। मार्ग में वह यही विचार करता जा रहा था कि पाँच सौ रुपये का पता तो चल जायगा ही। वे भगड़ा करेंगे और लक्ष्मी इस भगड़े से और भी नाराज होगी। दोनों ओर से उमी पर मुसीबत आयगी। इस दुहरी मार से बचने के लिए वह गाँव में पहुँच गया।

सोहिनी उसके मुख का रंग उड़ा हुआ देख कर मुस्कराते हुए पूछने लगी, “क्या हुआ है ? आज पिता जी से भगड़ा हो गया है क्या ?”

“हाँ”

“क्यों ?”

“पिता जी को सन्देह है कि मैंने ही षड्यन्त्र कर तुम्हारी माता जी के भूषण दिलवाये हैं।”

“तो आपने नहीं दिलवाये ?”

“मैं तो उस दिन की बात को समझ ही नहीं सका। भूषणों का साँप दिखाई देने लगना, फिर पुलिस का आना-जाना सिनेमा के पर्दे पर बनते-बिगड़ते चित्रों के समान विस्मयकर था।”

“गुरु जी ने जो बताया था, क्या वह बात भी समझ में नहीं आई ?”

“उसके अतिरिक्त तो और कोई कारण प्रतीत ही नहीं होता। मैं अपने कर्मों का प्रायश्चित्त करने के लिए ही तो बार बार तुम्हारे पास आता हूँ।”

“यह विचित्र प्रायश्चित्त है कि एक कुरूप पत्नी के स्थान पर पत्नी पाने की लालसा करते हो। प्रायश्चित्त में तो त्याग, तपस्या, तितिक्षा करनी चाहिये न कि आनन्द और भोग-विलास।”

“तो क्या करूँ ?”

“मैं क्या बता सकती हूँ ! आप और आपके पिता ही तो बताने वाले थे। जिस मार्ग पर आप ने हमें चलाया, हम उस पर चले और परिणाम यह हुआ कि मेरी माँ, जो अपने घर में राज्य करती थी, दस वर्षों में ही समधियों के घर बर्तन मलने लगी।”

“यदि तुम मेरे पास चल कर रहना स्वीकार करो, तो मैं अपने पिता से लड़-भगड़ कर अपना कारोबार पृथक् कर लूँगा और फिर सुख से रहने लगेंगे।”

“मेरा आपके घर जाने और आप का पिता जी से लड़ने में क्या सम्बन्ध है ? मैं जाऊँगी तो अपने और आपके विषय में भला-बुरा विचार कर। आप अपने पिता से लड़ेंगे तो अपने और अपने पिता जी के व्यवहार को विचार कर। मुझे इन दोनों बातों में कोई सम्बन्ध प्रतीत नहीं होता।”

“तो अपना और मेरा ही भला-बुरा विचार कर मेरे साथ चली चलो।”

“आप के घर पर रहने में मेरा भला नहीं है।”

“तुम मेरी स्त्री हो। तुम्हारा मेरे साथ रहना ही शोभा देता है।”

“ठीक है। जब आपने दूसरा विवाह कर लिया है तो यह निर्णय हो गया कि आपको अपनी पहली पत्नी की आवश्यकता नहीं रही। आपकी ओर से विवाह-बन्धन तोड़ डाला गया है। अब क्या अपनी दूसरी पत्नी से भी विवाह-बन्धन को तोड़ना चाहते हैं?”

“शायद वह तोड़ना चाहती है।”

“तो वह टूट लेने दीजिए। पीछे मैं अपने विषय में विचार कर लूँगी।”

इस उत्तर में आशा की झलक पा शंकर नगर को लौट गया। घर पर पहुँच कर उसको पता लगा कि लक्ष्मी ने पाँच सौ रुपये लाला जी के मुख पर दे मारे हैं। पिता रुपया तिजोरी में रखने गए तो वह कपड़े पहिन मायके चली गई है और पिता जी दुकान पर चले गए हैं। शंकर दुकान पर गया तो लाला गत्थूमल्ल ने पूछा, “कहाँ गए थे तुम?”

“गाँव गया था। सोहिनी से मिलने के लिए।”

“दोनों से सम्बन्ध बनाये रखते हो। एक को रुपया देते हो, दूसरी से प्रेम करते हो?”

“आपने अपनी सम्मोहिनी शक्ति से मुझे मूर्ख बना रखा था। आपके कहने पर मैंने सोहिनी की माँ को मंगल के विरुद्ध भड़काया और उसका सत्यानाश करने का यत्न किया। आपने ही मुझे एक सुन्दर पत्नी को छोड़ एक कुरूपा से विवाह करने पर विवश किया। आपका यह प्रभाव एक सीमा से अधिक नहीं चल सका। मुझे अपनी भूल का पता चल गया है। मैं यह चाहता हूँ कि मुझे आप पृथक् कर दें।”

“तो किसने रोका है तुमको ? जाओ न, पृथक् दुकान कर लो ।”

“मुझे मेरा भाग दे दीजिए ।”

“मैं और तुम पत्नीदार हैं क्या ? मैंने यह धन-दौलत अपनी मेहनत से पैदा की है । मैं इसका मालिक हूँ । मैं तुम्हें कुछ नहीं दूँगा । निकल जाओ दुकान से बाहर ।”

इस पर भी शंकर अपने स्थान से हिला तक नहीं । बैठा बैठा अपने पिता का मुख देखता रहा । उसको अनिश्चित मन देख लाला नत्थूमल्ल फिर बोला, “जब से तुम दुकान पर काम करने लगे हो मैं तुम्हें खाने-पहिरने को देता रहा हूँ । तुमने मेरी चोरी करनी आरम्भ की है । मैं तुमको घर से और दुकान से निकालता हूँ ।”

शंकर अभी भी विस्मय में अपने पिता की बात को समझने का यत्न करता रहा । पिता ने आगे कहा, “अब जाओ । चले जाओ यहाँ से ।”

विवश शंकर उठा । जूता पहिन दुकान से निकल गया । वह दुकान से सीधा घर गया । वहाँ अपने कमरे में जा कर लेट गया । लेटा लेटा अपने भविष्य जीवन को चलाने के उपाय सोचने लगा । उनके पास स्त्री के पहिने के भूषण थे । उनके मन में विचार आया कि उनको बेच कर किसी दूसरे नगर में जा कर गौकरी कर ले । वह दुकान पर केवल मुन्नीमी कर सकता था और एक मुनीम का वेतन चालीस रुपये मात्र मासिक था । इतने में उसका गुजर कैसे होगा ! चालीस रुपये तो लक्ष्मी के साबुन तेल का खर्च था । वह भूषण बेच कर कोई छोटी-मोटी दुकान करने की योजना करने लगा । परन्तु भूषण कितने हैं और उनका

मिलेगा क्या ? वह यह विचार कर काँप उठा । भूषण लगभग बीस तोले सोने के थे । उनका दाम छै सौ रुपये से कम ही होगा । इस पर भी उसने विचार किया कि पहले देखूँ तो सही कि वहाँ है क्या ?

इतना विचार कर वह पलंग से उठा और उसने स्त्री के सन्दूक को खोलने के लिए चाबी ढूँढने के लिए चारों ओर दृष्टि दौड़ाई । चाबी सन्दूक के साथ ही लगी थी । उसने सन्दूक खोला तो उसको खाली पाया । एक भी भूषण अथवा कीमती कपड़ा वहाँ नहीं था । लक्ष्मी सब निकाल कर ले गई थी । जितने सन्दूक वहाँ रखे थे सबकी तलाशी उसने लेनी आरम्भ कर दी । एक भी पैसा नक़द नहीं मिला । जो कपड़े लक्ष्मी खरीद कर लाई थी और जिनका दाम चुकाने के लिये उसने पाँच सौ रुपया माँगा था, वे भी लक्ष्मी अपने साथ ले गई थी ।

इससे शंकर को भारी निराशा हुई । उसके सब हवाई किले रेत की दीवार के समान गिर गये । वह हतोत्साह हो कर पुनः पलंग पर गिर गया ।

दिन व्यतीत हो रात हो गई । भोजन का समय हुआ । माँ ने शंकर को रोटी खाने के लिए बुलाया । उसको भूख लग रही थी । वह उठा और चौके में भोजन करने बैठ गया । भोजन करते हुए उसने माँ से पूछा, “माँ, पिता जी खा चुके हैं ?”

“हाँ, वे सोने चले गए हैं ।”

“लक्ष्मी तुम्हें कुछ कह कर गई है, माँ ?

“हाँ, वह यह कह गई है कि इस घर में वह फिर नहीं आयेगी ।”

“क्यों ?”

“कहती थी कि हम कमीने हैं ।”

इस कहने से शंकर को क्रोध तो बहुत आया, परन्तु भीतर ही भीतर पी गया। भोजन कर जब उठने लगा तो माँ ने पूछा, “यह सब भगड़ा किस बात का है बेटा ?”

“माँ, हमने बहुत पापकर्म किए हैं। यह सब उसी का परिणाम है। पिता जी ने मुझे दुकान से निकाल दिया है। मेरे पास एक पैसा भी नहीं जो अपना कारोबार चला सकूँ। इधर लक्ष्मी सब भूषण-वस्त्र ले कर चली गई है।”

“मेरा कहा मानो बेटा। कुछ दिन के लिए कहीं टल जाओ। पीछे जब तुम्हारे पिता में तुम्हारा मोह बल पकड़ेगा तो तुम्हें बुला लूँगी।”

“कहाँ जाऊँ ? जेब में तो एक पैसा भी नहीं।”

“मैं तुम्हें कल प्रातःकाल पचास रुपया दूँगी। कुछ दिन के लिए हरिद्वार चले जाओ। किसी को बताना नहीं। जब उनका क्रोध शान्त होगा तो फिर तुम्हें बुला भेजूँगी।”

शंकर चुप रहा। उसको यह योजना पसन्द तो आई, परन्तु इसके सफल होने में कितना काल लगेगा, वह यह अनुमान नहीं लगा सका। हाथ धो, कुल्ला कर अपने कमरे में जा कर सो रहा।

प्रातःकाल माँ आई और पचास रुपए के नोट उसको पकड़ा कर बोली, “यदि उनके क्रोध उतरने में देरी लगी तो प्रतिमास इतने रुपए तुम्हें भेज दिया करूँगी। परन्तु मैं आशा करती हूँ कि इतनी देर नहीं लगेगी।”

११

शंकर तब तक अपने कमरे में छुपा रहा जब तक उसका पिता प्रातःकाल का भोजन कर दुकान पर नहीं गया। पश्चात् उसने अपना

बिस्तरा और ट्रंक ठीक किया और भाड़े का टांगा ले कर रेलवे स्टेशन को चल पड़ा ।

वह घर से अभी कुछ ही दूर पर गया था कि उसके टांगे को हाथ से संकेत कर उसके साले मनसाराम ने रोक लिया । टांगा रुकने पर उसने शंकर से पूछा, “भैया कहाँ जा रहे हो ?”

“नरक धाम को ।”

“मैं तुमको लेने आया हूँ ।”

“कहाँ के लिए ?”

“स्वर्गधाम के लिए । चलो भैया ! लक्ष्मी ने बुला भेजा है । उसका कहना है कि आपके लिए दुकान का प्रबन्ध कर दिया गया है ।”

इस समाचार से शंकर उसका मुख देखता रह गया । जिस बात के लिए वह लालायित था, वह लक्ष्मी से सम्पन्न होगी, यह जान कर उसके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा । भाग्य की गति विचित्र है ! उसने मनसाराम को टांगे में बैठा लिया और टांगे को ससुराल की ओर घुमा दिया ।

लक्ष्मी अपनी माँ के घर में अपने पिता लाला चूहडमल के सामने बैठी थी । शंकर वहाँ पहुँचा । उसने टांगा अभी छोड़ा नहीं था, अपना बिस्तरा और ट्रंक उभें ही रहने दिया था, और स्वयं पूरी बात जानने के लिए भीतर चला आया । उसको देख कर उसके ससुर ने कहा “आग्रो बेटा ! इधर आग्रो । मैंने मग बात लक्ष्मी से सुन ली है, और समझ ली है । दामाद क्या और बेटा क्या ! मैंने तुम्हारे काम-काज का प्रबन्ध कर दिया है । मनसाराम के साथ तुम्हारी आठ-आठ आने की साभेदारी रही । और नई मंडी में तुम दोनों काम करो । रुपया जितना भी चाहिए मिल जायगा ।”

“नई मंडी में तो पिता जी की दुकान है न ?”

“तो क्या हुआ। तुमने उनसे झगड़ा तो करना नहीं। ना ही उनसे रुपया लेना है।”

“पर उनसे प्रतिस्पर्धा चल पड़ेगी ?”

“तुम नहीं करना। वे करेंगे तो स्वयं फल पावेंगे।”

यद्यपि शंकर को बात पसन्द नहीं आई परन्तु अपने ससुर की सहायभूति की तुलना पिता की क्रूरता से कर वह विवश हो गया। और उसने अपनी नौका की पतवार अपने ससुर के हाथ में दे दी।

उसी दिन से वह घर-जमाई बन गया।

लाला चूहड़मल का मकान बहुत बड़ा था। उसका परिवार भी लम्बा-चौड़ा था। मकान के एक बाजू में दो कमरे शंकर और लक्ष्मी के लिये खाली कर दिये गए।

अगले दिन मनसाराम और शंकरदास के नाम से एक आड़त की दुकान नई मंडी में लाला नत्थूमल की बगल में खुल गई। जब शंकर वहाँ जा कर बैठा तो उसका पिता विस्मय में उसका मुख देखता रह गया। अपनी दुकान से अवकाश पा नत्थूमल अपने लड़के से आ कर पूछने लगा, “क्यों जी, तुम तो हरिद्वार गये थे ?”

“तो आपको मालूम है ! शायद आपके कहने पर ही माँ ने पचास रुपये देने की कृपा की थी। अच्छा हुआ नहीं गया।”

“पर अब तुम मेरे से मुकाबिला करोगे ?”

“अभी आज तो दुकान का मुहूर्त किया है। देखें कैसे पटती है। आपको और अधिक पैदा करने की कुछ आवश्यकता भी तो नहीं। आपका कौन लड़का-बाला है, जिसके लिये कुछ कमाने की आवश्यकता हो सकती है ?”

लाला चूहड़मल की नीति न तो शंकर की समझ में आई न ही नत्थूमल्ल की। दुकानों का मुकाबिला होना ही था। साथ ही लाला चूहड़मल ने बाज़ार में नत्थूमल्ल के विरुद्ध ऐसा वातावरण बनाया कि उनका लेन-देन ही बन्द हो गया। जहाँ नत्थूमल्ल की लाखों की हूँडी चलती थी वहाँ उसकी दस रुपये की भी साख नहीं रही।

जिन लोगों के पास नत्थूमल्ल के नाम की हूँडियाँ थीं, वे चिन्तित प्रतीत होने लगे और चूहड़मल उन हूँडियों को पच्चीस प्रतिशत कम पर खरीदने लगा। जब दो लाख की हूँडियाँ खरीदी जा चुकीं, तो चूहड़मल ने दाम और कम कर दिया। सौ के पचास रुपये हो गये। नत्थूमल्ल सब का एक दम भुगतान कर नहीं सकता था। कारण यह कि जहाँ उसका रुपया लगा था, वह एक दम वसूल नहीं हो रहा था।

मनसाराम-शंकरदास की दुकान खलने के तीन महीने के भीतर नत्थूमल्ल की दस लाख की हूँडियाँ चूहड़मल ने खरीद ली थीं। उनमें से कई पुग चुकी थीं और शेष एक दो महीने के भीतर पुग रही थीं।

इस समय लाला नत्थूमल्ल रुपया इकट्ठा कर रहा था। जिन की ओर उसका रुपया लगता था, जिस पर उसने कभी एहसान किया था, उनसे और वैंकों से वह रुपया जमा करने लगा, परन्तु दस लाख का प्रबन्ध बहुत कठिन था। परिणाम यह हुआ कि नत्थूमल्ल को अपनी हूँडियों का रुपया देने में असमर्थता प्रकट करनी पड़ी और उसकी दुकान और माल के गुदामों पर ताला लग गया। अन्त में नत्थूमल्ल को दिवाले के लिये प्रार्थना करनी पड़ी।

मकान और पूर्ण जायदाद की कुर्की हो नीलाम हो गई, और सारी सम्पत्ति चूहड़मल ने खरीद ली। इस सब झगड़े में दो वर्ष लग गये।

इस समय चूहड़मल का अन्तिम प्रहार हुआ। मकान की, जिसमें नत्थूमल्ल रहता था, बेदखली की आज्ञा ले कर शंकर को भेज दिया।

जब शंकर मकान पर अधिकार जमाने के लिए गया तो नत्थूमल्ल ने नम्रता से अपने पुत्र को कहा, “शंकर, मकान के नीचे एक कमरा मेरे रहने के लिए मेरे पास रहने दो। किराया दे दिया करूँगा।”

शंकर ने उत्तर दिया, “पिता जी, यह मकान मैंने नहीं खरीदा। मैं तो खरीदने वाले का गुमास्ता हूँ। यदि आप कहें तो आपकी प्रार्थना लाला जी तक पहुँचा देता हूँ।”

“तो आज बेदखली नहीं करवाओगे?”

“एक दिन रुक सकता हूँ।”

घर जा कर शंकर ने जब यह प्रस्ताव लाला चूहड़मल के सामने रखा, तो वह हँस दिया। उसने कहा, “देखो शंकर! नत्थूमल्ल मेरा सम्बन्धी है। परन्तु उसने मेरे दामाद को पचास रुपये देकर घर से निकाल दिया था, उसने मेरी लड़की का पाँच सौ रुपया कपड़ा खरीदने के लिये देने से इन्कार कर दिया था। अब भगवान ने उल्टी गंगा बहा दी है। मैं इसमें क्या कर सकता हूँ? मैंने सारे का सारा मकान एक आदमी के पास किराये पर उठा दिया है। इस कारण उसका कोई भाग यदि उसने किराये पर लेना है तो उससे जा कर ले सकता है। मैं आपत्ति नहीं करूँगा।”

“वह कौन है?”

“मेरी लड़की लक्ष्मी।”

“कितना किराया उससे तय हुआ है?”

“पचास रुपया मासिक।”

“बहुत अच्छी बात । किरायेदार से सीधी बात कर लेंगे ।”

रात को बात लक्ष्मी से कर दी गई । उसने यह कहा, “पिता जी ने यह मकान मुझे किराये पर दिया है । मैं स्वयं वहाँ पर जा कर रहूँगी । मैं वह मकान किसी को भाड़े पर नहीं दूँगी । उस मकान को किराये पर लेने का एक यह भी प्रयोजन है कि आपके पिता जी को घर से निकलवाया जाए ।”

“तो बेदखली ले कर कल मैं नहीं जाऊँगा ।”

“आपकी इच्छा । मैं स्वयं जाऊँगी ।”

“तुम जा सकती हो ।” शंकर ने क्रोध में बेदखली के कागजात उसके सामने फेंकते हुए कहा ।

लक्ष्मी ने कागजात उठाते हुए कहा, “आप एक निर्लज्ज बाप के बेटे हैं, इस कारण आपको अपना अपमान करा कर भी लज्जा नहीं आई। परन्तु मैं तो उस दिन को भूल नहीं सकती जब मेरा समुर मेरे पति को चोर कह रहा था ।”

१२

मंगल का कार्य सरलता से चल रहा था । मानिनी गरीर और बुद्धि, दोनों में द्रुत गति से उन्नति कर रही थी । पं० बृजलाल की सहायता से मानिनी की शिक्षा का प्रबन्ध कर दिया गया था । हिन्दी और संस्कृत भाषाओं को पढ़ाने का प्रबन्ध एक पंडित द्वारा हो गया था । अंग्रेजी और गणित वह घर पर अपने भाई दीप से पढ़ लेती थी । परन्तु बुद्धि का विकास केवल शिक्षा की धुरी पर नहीं चलता । शिक्षा के साथ-साथ घर का वातावरण और पूर्व जन्म के संस्कार भी कार्य करते प्रतीत होते हैं । मानिनी अनेकानेक संस्कारों के परिणामस्वरूप बन रही थी ।

मंगल को यह बात आश्चर्यजनक प्रतीत हुई कि मानिनी रामू

चाचा के गुरुदेव की चर्चा प्रायः करती रहती है। एक दिन सब बैठे हुए थे। मंगल की माँ, बहिन, स्त्री और बच्चे थे। मंगल रामू के एक सहस्र रुपये बना देने की बात कह रहा था। मंगल ने कहा था, नगर में गौरी शंकर का मन्दिर बन रहा है। मैं वहीं एक सहस्र रुपये चन्दा देना लिखवा आया हूँ। नाम रामू का लिखवा दिया है। मंगल की माँ ने कहा, “कैसी विचित्र बात है ! समझ नहीं आती।”

उत्तर मानिनी ने दिया, “कल रात को मैं लैम्प जला कर पेड़ के नीचे बैठी पढ़ रही थी। दूर से किसी के आने का शब्द हुआ। मैंने जब देखा तो कुछ भी दिखाई नहीं दिया। शब्द हो रहा था पर कुछ दिखाई नहीं देता था। धीरे-धीरे कोई श्वेत वस्तु आती दिखाई पड़ी। कुछ ठहरने पर कोई व्यक्ति श्वेत धोती-कुर्ता पहिने आता दिखाई दिया। फिर कुछ समय पश्चात् समीप आने पर पता चला कि “गुजारी ताऊ जी” चले आ रहे हैं। जब वे बिल्कुल समीप आ गये तो देखा कि वे मुस्करा रहे हैं।

मैंने उनसे कहा, “कैसी विचित्र बात है कि आप भी थे, मेरी आँखें भी थीं और प्रकाश भी था, परन्तु आप दिखाई नहीं दिये।”

मेरे इस कथन को सुन कर वे कुर्सी पर बैठ कर कहने लगे। “बेटी मानिनी ! मनुष्य की शक्ति सीमित है, बुद्धि सीमित है और इन्द्रियों की अनुभूति भी सीमित है। इस कारण जो कुछ उनकी सीमा के भीतर हो, वही प्रतीत होता है। पहले मैं तुम्हारी आँखों की अनुभव-शक्ति की सीमा के बाहिर था। धीरे-धीरे उस सीमा में आ गया और धीरे-धीरे मेरी प्रतीति तुम को हुई।”

उनका कहना था, “जितना-जितना मनुष्य शक्ति-सम्पन्न होता जाता है उतना-उतना वह अपने भूत और भविष्य की अधिक अधिक अनुभूति करने में सफल होता जाता है।

फिर उन्होंने कहा कि योगाभ्यास से ज्ञानचक्षु इतने तीव्र हो जाते हैं कि मनुष्य अपने पूर्व जन्मों के कर्मों को भी देखने लगता है। मैं समझती हूँ कि मुझे भी अपने पूर्व जन्म का कुछ धुँधला सा ज्ञान हो रहा है।”

इस पर सब हँस पड़े। यह पहली बार नहीं थी जब मानिनी ने ऐसा कहा था। आज उसने अंधकारमय खुले मैदान में दीपक से प्रकाश के क्षेत्र की सीमा का उदाहरण देकर अपना आशय समझाने का यत्न किया था। मंगल उसकी ऐसी बातों से विस्मय में डूब जाया करता था। मोहिनी उसकी बातें सुन कर गम्भीर हो चिन्ता में पड़ जाया करती थी।

दीप ने मानिनी की हँसी उड़ाने के लिए कह दिया, “तो तुम भी योगाभ्यास करने लगी हो?”

“हाँ! मैंने रामू चाचा से पूछा था। उसने मुझे एक बात बताई है। उससे मुझको ऐसा प्रतीत होता है कि मैं यहाँ से बहुत दूर पहाड़ी के ऊपर एक गाँव में, जो नदी के किनारे बसा था, रहती थी। रामू के गुरुदेव मेरे साथ खेला करते थे।

पश्चात् हमारा विवाह हो गया। परन्तु फिर क्या हुआ, समझ में नहीं आता। जैसे दीपक के प्रकाश से कोई रात के अन्धकार में विलीन हो जाता है वैसे ही नटेश्वर कहाँ गए, पता नहीं चला। मैं अब देखती हूँ कि जैसे पुरोहित जी रात को अंधकार में प्रकाश में आ गए थे वैसे ही पुनः प्रकाश में आ गये हैं।”

“पगली कहीं की!” मंगल की माँ ने कहा। “वे तो तुम्हारे पिता से भी बड़ी आयु के हैं।”

“पर यह मैं नित्य स्वप्नों में और कभी-कभी जब एकान्त में बैठी विचार करती हूँ तो देखा करती हूँ।”

“तुम्हारा तो मस्तिष्क बिगड़ रहा प्रतीत होता है।” मोहिनी ने कहा।

“माँ जी ! यह बात नहीं। योगेश्वर कृष्ण भगवान ने भी तो गीता में कहा है—“मेरे अनेक जन्म हुए हैं। हे अर्जुन ! तुम्हारे भी कई जन्म हो चुके हैं। तुम नहीं जानते, पर मैं जानता हूँ।”

अब फिर दीप ने पूछा, “मला बताओ तो योगाभ्यास कैसे करती हो ?”

सब हँसने लगे ! परन्तु मानिनी ने फिर कहा, “पुजारी ताऊ जी जानते हैं। मैं एक दिन पूजा कर रही थी कि ताऊ जी ने देख लिया था और उन्होंने मुझे मेरी भूल मुझाई थी।”

मंगल को ऐसा प्रतीत हो रहा था कि इस लड़की का विवाह जगदीश चन्द्र से हुए बिना नहीं रहेगा। उसकी चिन्ता का कारण यह था कि जगदीश चन्द्र सैंतालीस-अड़तालीस वर्ष की आयु का हो रहा है। मंगल की चिन्ता का कारण यह भी था कि वह विवाह सफल और सुखकारक होगा कि नहीं।

ऐसी चिन्ता और विचार होने पर भी मानिनी की उन्नति और विकास दिन दुगना रात चौगुना हो रहा था।

मंगल सप्ताह में एक दो बार काम से नगर जाया करता था। जब जाता तो नगर के समाचार, जैसे वह सुन पाता था, ला कर गाँव में सुनाया करता था। एक दिन वह समाचार लाया कि शंकर ने पिता जी से लड़ कर पृथक् दुकान खोल ली है। एक और दिन वह समाचार लाया कि ला० नत्थूमल्ल का दिवाला निकल गया है। पश्चात् समाचार मिला कि नत्थूमल्ल भिखमंगा हो गया है, उसकी पूर्ण सम्पत्ति कुड़व

हो गई है। एक और दिन समाचार आया कि लाला नत्थूमल्ल को घर से बेदखल कर दिया गया है।

एक दिन मंगल नई-मण्डी में अपना माल तुलवा रहा था। सारी मण्डी में नत्थूमल्ल के अपनी स्त्री सहित एक डोरी-लोटा ले कर घर से निकल जाने की चर्चा हो रही थी। कोई कहता था कि लाला जी ने पैदल ही हरिद्वार जाने का विचार किया है। कोई यह भी कहता था कि उसके पास काफी धन है और यह निर्धनता केवलमात्र ढोंग है।

मंगल की इच्छा हुई कि लाला जी से मिल कर उनके मन की अवस्था को जाने। इससे उसने बातें करने वाले से पूछा, “लाला नत्थूमल्ल की बात कर रहे हो?”

“हाँ!”

“वे घर से निकल गए हैं क्या?”

“हाँ। अभी-अभी समाचार मिला है कि ला० चूहड़मल की लड़की स्वयं बेदखली का परवाना लेकर गई थी। उसको देख कर लाला नत्थूमल्ल और उनकी स्त्री केवल एक लोटा-डोरो ले कर घर से निकल गए हैं।”

“वे किधर गए हैं?”

“यहाँ से नहर के किनारे-किनारे गुजराँवाला जायेंगे। वहाँ से लाहौर और फिर हरिद्वार जाने की बात मशहूर हो रही है।”

मंगल ने एक क्षण विचार किया और पश्चात् तुरन्त माल को दुकानदार को तोलने के लिए सौंप, स्वयं लाला नत्थूमल्ल को ढूँढने चल पड़ा। उसका विचार था कि नत्थूमल्ल अवश्य पैदल ही नहर की ओर चल पड़ा होगा। इससे उसने ताँगा किया और गुजराँवाला की सड़क पर नहर की ओर कुछ दूर तक ढूँढने के विचार से चल पड़ा।

नगर से तीन मील की दूरी पर सड़क के किनारे एक कुएँ की जगह पर लाला जी और उसकी स्त्री बैठे सुस्ता रहे थे। मंगल ने उनको देखा, पहचाना और ताँगा खड़ा कर उनके समीप जा पहुँचा। नत्थूमल्ल ने उसको देखा और विस्मय से पूछा, “कहाँ जा रहे हो मंगल ?”

“आपको ढूँढने निकला था। आप जल्दी ही मिल गए सो अच्छा हुआ।”

“तो क्या तुम्हें भी हम से कुछ लेना है ? इस समय तो हमारे पास कुछ भी नहीं है।”

“मैं कुछ लेने नहीं आया। एक विचार आपके सामने रखने आया हूँ। कहें तो निवेदन करूँ ?”

“हाँ भैया ! तुम भी कह लो।”

“मेरा विचार है कि आप हमारे गाँव में चल कर रहें। वहाँ आपकी वृद्धावस्था सुगमता से कट जावेगी।”

“हमारे पास खाने-पीने को एक कौड़ी भी नहीं।”

“लाला जी, कौड़ियाँ अथवा रुपये खाये-पिये नहीं जाते। अन्न और वस्त्र गाँव में बनते हैं, सो आपको मिल जावेंगे।”

“तुम क्यों दोगे मुझे, जब कि अपने लड़के ने ही मुझ से मुख मोड़ लिया है ?”

“वहाँ आपकी पुत्रवधू रहती है। वह आपको देगी।”

“वह क्यों देगी ! मैंने उसके साथ कुछ अच्छा व्यवहार तो किया नहीं।”

“देखिये लाला जी ! अच्छे बुरे का निर्णय और उसका फल देने वाले हम प्राणी नहीं हैं। इस बात का निर्णय और फल तो भगवान के हाथ है। हमने तो अपना कर्तव्य पालन करना है। सोहिनी को

आपके प्रति कोई द्वेष नहीं है। वह आपके जीवन की अंतिम घड़ियों को सुखमय बनाने का यत्न करेगी।”

“तुमने उससे पूछा है, मंगल ?”

“अब तो पूछ कर नहीं आया। परन्तु आपके विषय में चर्चा तो दो वर्ष से चल रही है। मुझे विश्वास है कि वह ऐसा ही समझती है जैसा मैं कह रहा हूँ।”

“क्यों शंकर की माँ ! क्या कहती हो तुम ?” लाला नत्थूमल्ल ने अपनी पत्नी को सम्बोधन कर पूछा।

“मैं तो गंगा के किनारे जा कर मरना चाहती हूँ।”

“माँ जी, यह सोभाग्य तो पूर्व जन्म के कर्मों से ही प्राप्त होता है। यदि आपने गंगाजी के तट पर मरना होगा तो हमारे गाँव में रहते हुए भी आप वहाँ जा सकेंगी। यदि नहीं तो वहाँ रहती हुई भी मरने के समय कहीं अन्यत्र टल जायेगी।”

“इस पर भी यत्न तो करना ही चाहिए।”

“इस पर भी मैं तो यही कहता हूँ कि इस प्रकार पैदल जाने से भारी कष्ट होगा। मेरे पास इस समय कुछ रुपये हैं। उन्हें ले लीजिए और रेल द्वारा वहाँ चले जाइये।”

इतना कह मंगल ने अपनी जेब से पच्चीस रुपये निकाल कर उनके सामने रख दिये। लाला नत्थूमल्ल ने रुपये देख सिर हिला दिया और कहा, “नहीं भैया ! यदि मरना है तो दूमेरे से दान ले कर नहीं मरेंगे।”

“तो इसका अर्थ यह हुआ कि आपके पास कुछ पैसा है।”

“हाँ। तुमसे झूठ कहने की आवश्यकता नहीं। परन्तु इतना कम है कि उसमें से पाई-पाई की रक्षा की आवश्यकता है।”

मंगल ने रुपये उठा कर अपनी जेब में रख लिये और कहा, “अच्छी बात है। देखिए, गाँव में आपकी पुत्रवधू रहती है। आवश्यकता पड़ने पर उसका घर आपके लिये खुला है।”

इतना कह कर मंगल ताँगे में सवार हो नगर को वापिस लौट गया। जब वह दृष्टि से ओझल हो गया तो शंकर की माँ ने कहा, “आपने यह क्यों बताया कि हमारे पास कुछ पैसा है ?”

“मंगल के सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार से मैं उससे कोई बात छुपा नहीं सका।”

“तुम वास्तव में सठिया गए हो। वह अब नगर में जा कर प्रकट कर देगा कि हमारे पास कुछ छुपा धन है, जो हमने रिसीवर को नहीं बताया।”

“जब तक यह बात फैलेगी और हमारे पकड़ने का यत्न होगा तब तक हम कहीं के कहीं पहुँच जावेंगे।”

जब चिड़ियाँ चुग गईं खेत

१

“जब तुम अपने जन्मदाता माता-पिता के साथ उचित व्यवहार नहीं रख सके तो तुम मेरे साथ क्या करोगे ?”

सोहिनी सामने बैठे शंकर को कह रही थी। शंकर उसे यह कहने आया था कि मेरा अपनी दूसरी पत्नी लक्ष्मी से प्रेम नहीं रहा, और यदि तुम मेरे साथ फिर चल कर रहोगी, तो तुम्हारे साथ मेरा पहिले जैसा व्यवहार न होगा।

शंकर मोहिनी का आरोप सुन हताश नहीं हुआ। उसने कहा, “माता-पिता ही तो सब भगड़े की जड़ थे। उन्होंने मुझे तुम्हारे भाई मंगल के विरुद्ध कार्य करने के लिए भड़काया था। उनकी ही प्रेरणा से मैंने तुम्हारी माता के तुम्हारे भाई और भाभी के विरुद्ध कान भरे थे। उन्होंने ही मुझे लक्ष्मी को तंग करने के लिए रुपया देना बन्द कर दिया था। मेरी श्रद्धा उनके लिए नहीं रही थी। यही कारण है कि उन पर जब विपत्ति आई तो उनके अपने ही कर्मों का भोग जान कर मैंने उनकी सहायता नहीं की।”

“माता-पिता से प्रेम रुपये-पैसे के बदले थोड़े ही किया जाता है। यह सम्बन्ध प्रकृति के सम्बन्ध से बना हुआ है। उस सम्बन्ध के नाते ही माता-पिता का आदर और उनकी सेवा की जाती है। जब वे केवल एक लोटा और डोरी ही ले कर घर से निकले थे तो यह तुम्हारा कर्तव्य था कि उनको कहीं अन्यत्र रख कर उनकी सेवा और सहायता करते।”

“ठीक है। यह बात तुम्हारे विचार के अनुकूल है; परन्तु मेरे विचार में तो उन्होंने मेरे साथ दुर्व्यवहार कर अपना सारा अधिकार खो दिया था।”

“अब आप जा सकते हैं। मुझे माँ के लिए दूध तैयार करना है।” सोहिनी ने उठ कर शंकर से विदा होने का संकेत कर रहा।

शंकर गाँव से लौट कर आया तो मंगल अभी भी मंडी में माल नुलवा कर उसका हिसाब-किताब करवा रहा था। उसको देरी इस कारण हो गई थी कि वह लाला नत्थूमल्ल को पैदल ही हरिद्वार जाने से रोकने के लिए गया था। जब वे नहीं माने तो वापिस आ कर अपने काम में लग गया था। शंकर जब दुकान पर आया तो मंगल को अपने आड़ती की दुकान पर बैठे देख कर उसके पास गया और कहने लगा, “मंगल भैया, देखा है न क्या हो गया है।”

“देखा है।”

“मैं इस विषय में आप से कुछ बातचीत करना चाहता हूँ।”

“करो।”

“यहाँ से छुट्टी पा कर हमारी दुकान पर आ जायें तो अच्छा हो।”

“मैंने गाँव जाना है और अंधेरा हो रहा है।”

“तो मैं भी तुम्हारे साथ-साथ गाँव तक ही चलूँगा।”

“अच्छी बात है।”

मार्ग में चलते हुए शंकर ने उसे अपने पिता से लड़ाई-भगड़े का सारा इतिहास बतलाया। इसमें उसने यह भी बताया कि लक्ष्मी से उसका विवाह पिता जी के पड़्यन्त्र का परिणाम था। वह आरम्भ से ही सोहिनी से प्रेम करता है और यह प्रेम ही उसके और पिता जी के भगड़े का कारण हुआ। अंत में शंकर ने मंगल को उसका सोहिनी से पुनः सम्बन्ध स्थापित करवा देने की प्रार्थना की। उसने कहा, “मैं लक्ष्मी

को छोड़ने को तैयार हूँ । यदि सोहिनी लौट आए तो मैं उसके साथ एक पृथक् मकान में रहने को तैयार हूँ ।”

मंगल ने बार-बार समझाया, “शंकर भैया, सोहिनी के इस मामले में मैं हस्तक्षेप नहीं कर सकता । वह चाहे तो तुम्हारे घर जा सकती है, वह चाहे तो यहीं रह सकती है । इन दोनों दिशाओं में मैं उसको कोई सम्मति नहीं दूँगा, वह स्वतन्त्र है ।”

“सो तो है ही । फिर भी तुम बड़े हो, अपनी राय तो दे सकते हो । औरत को अपने पति के घर पर ही रहना चाहिए ।”

“शंकर ! मैं उसे कुछ नहीं कहूँगा । तुम स्वयं क्यों नहीं कहते ? तुम्हारा मार्ग किसी ने रोका नहीं । साथ ही एक बात और बता देना चाहता हूँ । वह है त्याग की भावना । मैंने जीवन भर कोई सौदा नहीं किया, सदा यही विचार करता रहा हूँ कि दूसरे के हित में मैं क्या कर सकता हूँ । सोहिनी यदि तुम्हारे साथ जाना चाहेगी तो मैं उसको रोकूँगा नहीं । यदि वह नहीं जाना चाहेगी तो उसको सुखी रखने का पूर्ण यत्न करूँगा । यह कदापि नहीं हो सकेगा कि मैं उसे अपने मन की रूचि के विरुद्ध कुछ भी कहूँ ।”

उस रात शंकर घर पहुँचा तो लक्ष्मी ने प्रसन्नता से फूलते हुए कहा, “मैंने बूढ़े और बुढ़िया को घर से निकाल दिया है ।”

शंकर बितर-बितर उसका मुँह देखता रहा । लक्ष्मी ने कहना जारी रक्खा । उसने कहा, “वे इस आशा में आए थे कि आप वहाँ होंगे । परन्तु मुझे देख भौचक्के से हो गए । जब मैंने उनको वेदखली का नोटिस दिखाया तो उन्होंने नीचे का कमरा किराए पर माँगा । मैंने वह भी नहीं माना और स्पष्ट रूप में उन्हें कह दिया कि वे यहाँ नहीं रह सकते ।”

शंकर ने अब भी कुछ नहीं कहा। लक्ष्मी ने फिर कहा, “मैं समझती हूँ कि कल से हम उस मकान में चल कर रहेगे, यहाँ एक ही कमरे में रहते-रहते मेरा दम घुट रहा है।”

अब भी शंकर ने कुछ उत्तर नहीं दिया। इस पर लक्ष्मी ने विस्मय प्रकट करते हुए पूछा, “आप कुछ कह नहीं रहे?”

“मेरे कहने को कुछ है भी नहीं। अब तो तुम्हारे ही आदेश चलने हैं।”

“ठीक है ! पर हैं ये आपके लाभ के ही।”

“होगे !”

“तो आपको सन्देह है इसमें क्या ?”

“मुझे तो इसमें सर्वनाश का आरम्भ दिखाई देता है।”

“कैसे ?”

“अभी एक से मिल कर आया हूँ। वह कह रहा था कि पिता-पुत्र का सम्बन्ध प्राकृतिक है, यह हानि-लाभ पर आश्रित नहीं है। मैंने माता-पिता को घर से निकाल कर उस प्राकृतिक सम्बन्ध की अवहेलना की है। इससे प्रकृति बदला लिए बिना नहीं रहेगी। वह बदला क्या होगा, कहना कठिन है।

मेरे पिता जी ने एक माँ और एक पुत्र के प्राकृतिक सम्बन्ध में बाधा खड़ी की थी। और उसका ही फल हुआ है कि उनका अपने पुत्र से ही सम्बन्ध-विच्छेद हो गया है। मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि यदि मैं भी अपने माता-पिता से प्राकृतिक सम्बन्ध में किसी अन्य विचार को बाधक बनने देता हूँ तो मुझे भी उसका फल भोगना पड़ेगा।”

“यह कार्यों का विचार है। आप मेरा हाथ बटाते रहें और फिर देखूँगी कि प्रकृति को हम जीत सकते हैं या नहीं। प्रकृति बनाई जाती है। प्रकृति हमको बनाने वाली नहीं है।”

शंकर की हँसी निकल गई। लक्ष्मी ने प्रश्न भरी दृष्टि से उसकी ओर देखा तो शंकर ने कहा, “मैं भी यह कहा करता था, परन्तु प्रकृति ने मुझे परास्त कर दिया है।”

“वह इसलिए कि आपके पिता अयुक्ति-संगत व्यवहार कर रहे थे।”

“प्रकृति का विरोध भी अयुक्ति-संगत है।”

लक्ष्मी की समझ में यह नहीं आया। अगले दिन नौकर की सहायता से उसने अपना सामान बंधवा लिया और अपने ससुर के मकान में जाने के लिए तैयार हो गई।

शंकर दुकान पर जाने लगा तो उसने कहा, “आप दोपहर का भोजन उस मकान में आकर करियेगा।”

“किस मकान में?”

“जो अपना है। जिसमें से आपके पिता ने हमें निकाल दिया था, और जिस पर मैंने अपने पिता जी की सहायता से पुनः अधिकार पा लिया है।”

शंकर ने एक लम्बी साँस ली और कहा, “मैं वहाँ नहीं जाऊँगा।”

“तो यहाँ ससुर के घर की रोटियाँ तोड़ने में मज़ा आता है क्या?”

“मैं तो यहाँ भी नहीं रहूँगा।”

“तो कहाँ जाइएगा?”

“अभी निश्चय नहीं कर सका।”

“मैं उस मकान में न जाऊँ क्या?”

“मैं तुम्हें आदेश नहीं दे सकता।”

“यदि किसी और मकान में चलींगी तो आप रह सकेंगे वहाँ?”

“वह कौन-सा मकान है, यह जान कर ही बताऊँगा।”

शंकर ने अपने व्यवहार में इतनी दृढ़ता पहले कभी प्रकट नहीं की थी। आज भी लक्ष्मी को उस पर विश्वास नहीं आया। वह अपना सब सामान ले अपने ससुराल के मकान में चली गई।

दोपहर के समय शंकर वहाँ नहीं आया। उसने नौकर भेज कर पता कर लिया था कि लक्ष्मी उस मकान में चली गई है। शंकर बाज़ार में गया और ढाबे से भोजन कर दुकान पर लौट आया। सायंकाल तक कार्य में व्यस्त रहा। इस कारण उसको आगे के विषय में विचार करने का अवसर ही नहीं मिला।

जब दुकान का कार्य समाप्त हुआ, तो उसके सामने यह समस्या उत्पन्न हुई कि अब कहाँ जाय ? ससुराल वाले घर में जाने का कोई प्रयोजन नहीं था। उसकी स्त्री वहाँ नहीं थी। अपने पुराने घर में वह जाना नहीं चाहता था। माता-पिता को घर से निकाल कर वह वहाँ जा कर रहने में आत्मग्लानि अनुभव कर रहा था। इससे वह मकान की तलाश में घूमने लगा। रात पड़ गई थी, मकान मिलना सहज नहीं था। इससे उसने एक ढाबे पर भोजन किया और रेल के स्टेशन के समीप एक धर्मशाला में जा कर ठहर गया।

धर्मशाला का अध्यक्ष उसको जानता था। इससे उसने उसके धर्मशाला ठहरने पर विस्मय प्रकट किया। परन्तु शंकर के समझाने पर वह चुप हो गया।

२

शंकर की रात भर प्रतीक्षा करने पर लक्ष्मी क्रोध से लाल-पीली हो रही थी। वह प्रातः ही अपनी माँ के घर में जा पहुँची। पिता शौचादि से निवृत्त हो पूजा के लिए जा रहा था कि कि लक्ष्मी ने पूछ लिया, “वे रात यहाँ रहे हैं ?”

“कौन, शंकर ! वह घर पर नहीं गया क्या ?”

“रात भर प्रतीक्षा करती रही हूँ । वे नहीं आये ।”

ला० चूहड़मल इससे चिन्तित तो हुआ पर पूजा करने चला गया । लक्ष्मी की माँ भी बहुत बुरे विचार मन में करनी लगी । उसने कहा, “अब कहाँ पता करें उसका ?”

लक्ष्मी ने यह नहीं बताया कि वह अपने पुराने मकान में जाने से इन्कार कर चुका था । इस कारण घर भर में हल्ला मच गया । आठ बजे दुकान खुली और नित्यप्रति की भाँति शंकर समय पर दुकान पर आ गया । लक्ष्मी का भाई कुछ देरी से आया था । जन मनसाराम आया तो उसका पिता लाला चूहड़मल भी उसके साथ था । आते ही लाला जी ने ज़रा डाँट कर पूछा, “कहाँ रहे हो रात भर, शंकर ?”

“क्यों, घर में क्या था ?”

“वहाँ जाने को चित्त नहीं किया ।”

“क्यों ?”

“पिता जी ने उस मकान में एक कमरा किराये पर माँगा था और हम दे नहीं सके । मुझे उस मकान में रहते लज्जा लगती है ।”

“और बीवी को उस मकान में अकेला छोड़ने में लज्जा नहीं लगती क्या ?”

“मैंने उसको कह दिया था कि मैं वहाँ नहीं जाऊँगा । इस पर भी वह वहाँ चली गई, तो मैं क्या करूँ ?”

“करना क्या था ! उसको जा कर समझाते । बाप-बेटों की बात मेरी समझ में नहीं आई । दोनों अड़ियल टट्टियों की तरह चलते हो ।”

अपने पिता पर व्यंग उसको पसन्द नहीं आया। उसने होठ दाँतों तने दबा कर क्रोध भीतर ही पी लिया और वही में हिमाव लिखने लगा। इस प्रकार बिना उत्तर दिये अपना काम करता रहा।

इस अवहेलना को देख कर लाला चूहड़मल शंकर के सामने बैठते हुए बोला, “अब घर जाओगे या नहीं ?”

“मेरा उस घर में जाने का विचार नहीं।”

“लक्ष्मी हमारे यहाँ आई हुई है। जाओ, उससे बातचीत कर सब नय कर लो।”

शंकर यह समाचार पा कर उठ खड़ा हुआ और घर पर जा पहुँचा। लक्ष्मी उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। उसको पता चल गया कि उसका पति दुकान पर बैठा काम कर रहा है। जब वह आया तो उसको एक पृथक् कमरे में ले जा कर पूछने लगी, “रात कहाँ रहे हैं ?”

“धर्मशाला में।”

“वहाँ कब तक रहियेगा ?”

“जब तक रहने योग्य मकान नहीं मिल जाता।”

“तो क्या वह मकान रहने योग्य ही नहीं है ?”

“मेरे रहने योग्य नहीं है।”

“बहुत बड़े नवाब के लड़के हैं न ! वह मकान रहने योग्य ही नहीं। जहाँ जन्म हुआ, पले, बड़े हुए, अब वही स्थान पसन्द नहीं !”

“लक्ष्मी !,” शंकर ने बात रोक कर कहा, “यह अपनी-अपनी पसन्द है। पसन्द आय, समय और परिस्थिति से बदलती रहती है। अब मैं वहाँ नहीं रहूँगा।”

“अच्छी बात है। जब तक मकान का प्रबन्ध नहीं हो जाता तब तक तो वहाँ चल कर रहिये।”

“नहीं। अब मैं वहाँ जा कर नहीं रहूँगा।”

“मैंने और पिता जी ने जो कुछ आपके लिए किया है, आप इतने कृतघ्न हैं कि उस सब किये पर पानी फेर रहे हैं !”

“मैं उसका विरोध नहीं कर रहा। उन्होंने चतुराई से पिता जी का दिवाला निकलवा दिया। ठीक या ग़लत मैंने उन्हें नहीं रोका। मकान हमें मिला था। हम उसमें से एक कमरा उन्हें किराये पर दे सकते थे, हमने नहीं दिया। यह बात मुझे पसन्द नहीं आई।”

“उन्होंने मेरा और आपका अपमान जो किया था ?”

“कुछ भी हो, वे मेरे पिता हैं।”

“मेरे वे कुछ नहीं थे।”

“अभिप्राय यह कि मैं तुम्हारा कुछ नहीं हूँ। मेरे होने से ही तो वे कुछ थे।”

“जो थे जिस योग्य थे, उसी स्थान पर भेज दिये गए हैं।”

शंकर इस प्रकार की बातें सुन-सुन ऊब गया था। इससे वह उठ खड़ा हुआ। कहने लगा, “अच्छी बात है, मैं अभी निश्चय नहीं कर सका कि क्या करूँ। अब से पहले तो मैं यह सोच रहा था कि कोई नया मकान ले कर रहूँगा। परन्तु आज की बात से तो मैं यह भी विचार करने पर विवश हो गया हूँ कि उस नए मकान में भी किसके साथ रहूँ। तुम्हारे अथवा किसी और के।”

लक्ष्मी ऐसे उठ खड़ी हुई जैसे डंक खा गई हो। उठते हुए उसने पूछा, “क्या कहा ?”

“जो तुमने सुना है, वही।”

वह दुकान को लौट आया। परन्तु उसके साथ घर का नौकर भी आया और मनसाराम के कान में कुछ संदेश दे कर चला गया। शंकर

ने दोपहर तक काम किया। दोपहर के भोजन के लिए जाने लगा तो ला० चूहड़मल अपनी दुकान से वहाँ आ गये। शंकर जूता पहिन कर जाने लगा तो लाला जी ने पूछा, “कहाँ जा रहे हो?”

“भोजन करने।”

“कहाँ?”

“किसी ढाबे पर।”

“घर क्यों नहीं?”

“घर जाने की रुचि नहीं।”

“देखो, मैं तुम से यह कहता हूँ कि यदि तुम घर अपनी बीवी के पास नहीं जा सकते तो तुम्हें यहाँ दुकान पर भी आने की आवश्यकता नहीं है।”

“तो यह दुकान भी मुझे लक्ष्मी की कृपा से मिली थी?”

“कुछ भा समझो! यदि तुम अपनी बीवी से सम्बन्ध नहीं रख सकते तो हमारा सम्बन्ध भी नहीं रहेगा।”

“तो मेरा हिसाब कर दीजिये। मेरे भाग का जो कुछ बनता है मुझ को दे दीजिए।”

“हिसाब हो गया और तुम्हारा जो कुछ था तुम्हें मिल गया। अब यहाँ मत आना।”

“मैं समझता हूँ कि कम से कम दस हजार रुपया मेरे भाग का दुकान में मेरे नाम है।”

“मैं कहता हूँ, तुम्हारा यहाँ कुछ भी नहीं था। यदि मेरी बात स्वीकार नहीं तो जाओ, कचहरी में नालिश कर दो।”

शंकर मुख देखता रह गया। इस समय उसकी जेब में दो रुपये कुछ आने थे। उसके माता-पिता ने तो घर से निकलते समय उसको पचास

रुपये दिये थे । पर अब समुराल वालों ने एक पैसा भी देने से इन्कार कर दिया ।

शंकर वहाँ से चला आया । बाज़ार में ढाबे पर रोटी खाई और धर्मशाला में पहुँच परिस्थिति पर विचार करने लगा । उसको कोई मार्ग नहीं सूझ पड़ता था । कचहरी में जाना सुगम नहीं था । वहाँ बिना पैसे के तो जूँ भी नहीं रेंगती । उसके लिए समस्या यह नहीं थी कि नालिश कैसे करे, विचारणीय बात यह थी कि अपना निर्वाह कैसे करे । बहुत विचारोपरान्त वह धर्मशाला से निकला और आदत की अन्य दुकानों पर मुनीम की नौकरी के लिए बातचीत करने लगा ।

जिस दुकान पर मंगल का हिसाब था, वहाँ उसे नौकरी मिल गई । अगले दिन पच्चीस रुपये मासिक पर वह काम में लग गया ।

बात यही तक ही नहीं रही । लक्ष्मी ने गुज़ारे के लिए दावा कर दिया । उसका कहना था कि शंकर से उसका विवाह हुआ है । अब वह घर छोड़ कर चला गया है । अतः गुज़ारे के लिए मुझे कुछ मिलना चाहिए ।

जब शंकर को अदालत की ओर से इस बात के सम्मन मिले कि वह आ कर बताये कि क्यों न उसकी तनख्वाह कुर्क कर ली जाये, तो यह पढ़ कर उसकी हँसी निकल गई । उसके मालिक ने उसको पागलों की तरह हँसते देख विस्मय करते हुए पूछा, “शंकर, क्या बात है ?”

“मेरी बीवी ने दावा किया है कि मेरे वेतन का एक भाग उसके गुज़ारे के लिये कुर्क कर लिया जाय ।”

शंकर का मालिक जानता था कि लक्ष्मी के पास इतनी जायदाद है कि वह शंकर की वेतन के दस मुनीम नौकर रख सकती है ।

ला० बन्सीधर (यह शंकर के मालिक का नाम था) शंकर से पूछने लगा, “अब क्या करोगे ?”

“कुछ नहीं। मैं यह लिख कर दे आऊँगा कि मेरा वेतन पच्चीस रुपये महीना है, और उसमें से अदालत जितना उचित समझे, कुर्क कर ले।”

“मानो कि आधा वेतन कुर्क हो जाता है तो फिर साढ़े बारह में गुज़र कर सकोगे ?

“पर तुम भगड़ा क्यों नहीं करते ? चाहो तो हम तुम्हारी सहायता करेंगे। उस दिन मंगल आया था और कहता था कि यदि कुछ आवश्यकता हो तो वह सहायता कर सकता है।”

“मैं मुकद्दमा नहीं करूँगा। मुझे यह बात विदित है कि इस दुर्भाग्य में मैं ही दोषी हूँ।”

शंकर ने वही किया जो उसने विचार किया था। मुकद्दमे के दिन वह कचहरी में गया और एक प्रार्थना-पत्र दे आया। उसमें उसने लिख कर दे दिया कि वह पच्चीस रुपये प्रति मास वेतन पाता है। अदालत समझे तो उसके वेतन का उचित भाग कुर्क कर लिया जाय।

अदालत में पुनः शंकर नहीं गया। और एक दिन यह निर्णय उसको मिला कि सात रुपया मासिक उसके वेतन में से लक्ष्मी को मिलेंगे।

३

शंकर का निर्वाह पच्चीस रुपये में ही बहुत कठिनाई से होता था, अब सात और कटने लगे। अठारह रुपये महीने में से एक मकान में एक कोठरी के तीन रुपये मासिक किराया देता था। शेष पन्द्रह में रोटी और कपड़ा और अन्य आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो सकती थीं। उसने सूखी रोटी खाना आरम्भ कर दिया। एक दाल और दो रोटी प्रातः और दो रोटी सायं काल। दूध, घी इत्यादि खाना बन्द कर दिया। उसको भाजी तरकारी खाये महीनों व्यतीत होने लगे। कपड़े बहत

मैले हो जाते, तो उन्हें धोने के लिए दे देता था; फट जाते तो थिग-लियाँ लगा कर गुज़ारा करता था। उसके पास नया कपड़ा खरीदने को दाम नहीं थे।

परिणाम यह हुआ कि वह बीमार रहने लगा। पहले उसके बदन में खारिश शुरू हुई। इसकी चिकित्सा कराने को पैसा नहीं था। इस कारण सरकारी हस्पताल से दवाई लाने लगा। दवाई खाने से खाँसी होने लगी। खाँसी से ज्वर होने लगा और हस्पताल वालों ने तपेदिक होने की सम्भावना बता दी।

इस पर भी शंकर दुकान पर बैठ कर ज्वर से पीड़ित, समय-समय पर खाँसता हुआ काम करता रहता था। ढाबे पर खाना खाता और रात को आधा पेट खा कर सोया रहता। इससे वह बहुत ही दुर्बल हो गया था।

प्रातः उठ, स्नान कर वह हस्पताल जा पहुँचता। वहाँ से बोतल में कोई रंगदार दवाई और पानी भर कर ले आता, और दुकान पर बैठा-बैठा पिया करता। एक दिन वह वहाँ बैठा खाँस रहा था कि मंगल बैल-गाड़ियों में गेहूँ लदवाये हुये वहाँ आ पहुँचा। इस बार वह कई मासों के पश्चात् नगर में आया था। जब दुकान पर गाड़ियाँ खड़ी हुई और मंगल दुकान पर चढ़ कर लाला जी को “जैराम जी की” कर के बैठा तो उसकी दृष्टि शंकर पर जा पड़ी। वह इतना दुर्बल हो चुका था कि कठिनाई से पहिचाना जा सकता था। उसे पहिचान कर देर तक मंगल उसकी ओर देखता रहा। शंकर आँखें नीची किये हिसाब बही पर लिखता रहा।

मंगल से नहीं रहा गया। उसने पूछ ही लिया, “शंकर भैया, क्या बात है, बहुत ढल गए हो?”

शंकर कुछ कहना चाहता था, परन्तु उसको खाँसी छिड़ गई। उसने जेब से एक मैला रुमाल निकाला और उसे मुख के आगे रख कर खाँसने लगा। इससे तो मंगल और भी चिन्तित भाव से उसकी ओर देखने लगा। खंगार निकला और शंकर लड़खड़ाते कदमों से उठ दुकान के बाहर थूकने गया। थूकने पर थोड़ा खंगार उसकी गाल पर लगा और शंकर ने उस को रुमाल से पोंछ डाला। पोंछते समय मंगल ने देख लिया कि उसमें रक्त मिला हुआ था।

मंगल ने देखा तो उठ कर शंकर के पास आ पूछने लगा, “कब से बीमार हो भैया ?”

“नहीं, बीमार नहीं हूँ।” इतना कह शंकर पुनः अपने स्थान की ओर जाने लगा, परन्तु अब उसको चक्कर आ गया। वह गिरने लगा तो मंगल ने पकड़ कर संभाल लिया। शंकर संभल गया, परन्तु मंगल को उसके ज्वर से जलते हुए शरीर का ज्ञान हो गया।

मंगल ने बहुत जल्दी-जल्दी माल तुलवाया और हिमाब लिखवा कर जब घर जाने लगा तो लाला बनारसी दास से बोला, “लाला जी, शंकर भैया बीमार है। मैं इसको कुछ दिनों के लिए गाँव ले जा रहा हूँ। आप इसको दो सप्ताह की छुट्टी दे दें।”

“मैं तो इसको कई बार कह चुका हूँ कि कुछ दिन आराम कर ले। परन्तु यह कहता है कि मैं बीमार नहीं हूँ। मंगल, इसको देहात में ले जाओ। जब ठीक हो जायगा तो फिर नौकरी कर लेगा।”

शंकर ने कहा, “मंगल भैया ! मैं बीमार नहीं हूँ। दो तीन महीनों से यह खाँसी आ रही है, और डाक्टरों की दवाई की गर्मी की खुश्की से गले से खून आने लगा है। मुझे साथ ले जा कर क्या करोगे ?”

“नहीं शंकर भैया, मैं ताँगा ले कर आता हूँ। तुम्हें मेरे साथ चलना ही होगा।”

इतना कह, मंगल बाज़ार से ताँगा ले आया और शंकर को विवश कर अपने साथ गाँव ले गया।

मंगल उसको माँ के घर ले गया। सोहिनी ने उसको देखा तो अवाक् मुख खड़ी रह गई। आश्रय दे कर शंकर को ताँगे से उतारा गया और मकान के भीतर ले जाया गया। सोहिनी ने देखा, समझा और भाग कर भीतर गई। एक कमरे में उसके लिए बिस्तर लगा दिया गया और उसकी सेवा-सुश्रूषा होने लगी।

पहले कई दिन तो औषधि बन्द कर दी गई। उसका परिणाम यह हुआ कि ज्वर तो कम हो गया परन्तु खाँसी बढ़ती गई। श्लेष्मा के साथ रक्त का आना भी जारी रहा। इस पर नगर से एक वैद्य को बुला कर दिखाया गया। उसने रोग असाध्य बताया।

इस पर भी प्रयत्न जारी रहा। शंकर देख रहा था कि सोहिनी, जिसके साथ उसने और उसके पिता ने लक्ष्मी से कहीं अधिक बुरा व्यवहार किया था, उसकी सेवा में जी जान से लगी थी। शंकर की दुर्बलता दिन प्रति दिन बढ़ती जाती थी। इस पर भी उसकी मानसिक शक्तियाँ सर्वथा निर्मल और उग्र थीं। वह अपने पापों को जानता था।

एक दिन उसको दस्त लग गये। उसके विस्मय का ठिकाना नहीं रहा जब उसने सोहिनी को उसका मल-मूत्र उठाते तथा साफ करते ऐसे देखा मानो वह कोई दूधपीता बच्चा है। उसने उसकी सेवा और उससे अपने पुराने व्यवहार की तुलना कर कहा, “सोहिनी यह सब तुम क्यों करती हो?”

“मैं नहीं करूँगी तो और कौन करेगा?”

“तुम मुझे मरने दो, मेरी सेवा-टहल का क्या लाभ ! दो तीन दिन में समाप्त हो जाऊँगा ।”

“हम स्त्रियाँ ऐसा नहीं कर सकतीं । सेवा करना हमारे स्वभाव में है । हमारी आँखों के सामने कोई बीमार पड़ा हो, और हम उसकी देख-भाल न करें, यह अस्वाभाविक है ।”

“पर लक्ष्मी भी स्त्री ही थी । जब तक मैं नौकर रहा, मेरे वेतन में से वह सात रुपये मासिक वसूल करती रही । अब नौकरी छूट जाने पर उसने फिर गुजारे के लिए दावा कर दिया है ।”

“मैं समझती हूँ कि उसका कलेवर तो स्त्री का है पर हृदय पत्थर का है । उसका मन पशु का है, और आत्मा तो उसमें है ही नहीं ।”

“यह तो माना, परन्तु तुम्हारा भाई मंगल मेरे लिए इतना धन क्यों व्यय कर रहा है ?”

“धन किसी की बपौती नहीं । एक समय देश में अकाल पड़ गया था । मंगल तब तक सब को खिलाता पिलाता रहा जब तक उसके पास कुछ भी धन-धान्य था । अन्त में जब उसके पास कुछ न रहा तो अफ्रीका चला गया था । वह समझता था कि जब किसी के पास अपनी आवश्यकता से अधिक कुछ एकत्रित हो जाय तो वह वास्तव में दूसरों का भाग होता है । उसे आवश्यकता के अनुसार दूसरों में बाँट देना चाहिए ।”

“यह मनुष्य-स्वभाव के विपरीत नहीं है क्या ?”

“दीप को आप जानते हैं न ! मंगल भैया का लड़का है ।” सोहिनी ने मुस्कराते हुए कहा, “वह आज कल कालेज में पढ़ता है । उसका कहना है कि एक विद्वान् ने यह सिद्ध किया है कि आदमी पशुओं की सन्तान है और उसके स्वभाव में पशुओं के लक्षण दिखाई

देते हैं। इससे मेरा विचार है कि मनुष्य को पशुपन जन्म से पैतृक सम्पत्ति में मिलता है। और उसमें मनुष्यपन शिक्षा, संस्कार और अनुभव से उत्पन्न होता है। धन का निष्प्रयोजन लोभ तो पशुपन का चिन्ह है, परन्तु इस धन का दूसरों के लिए प्रयोग मनुष्यपन का लक्षण है।”

शंकर मन में सोच रहा था कि उसके पिता और इन लोगों के दृष्टिकोण में कितना अन्तर है ! वह धन संचय करता था धन संचय करने के लिए, और मंगल धन संचय करता है व्यय करने के लिए, दूसरों की सहायता करने के लिए। इस प्रकार दृष्टि में एकमात्र अन्तर से व्यवहार से आकाश-पाताल का अन्तर आ गया। और इसका परिणाम भी देख रहा था कि वह खाट पर लेटा हुआ जीवन की घड़ियाँ गिन रहा है और मंगल और उसके लड़के खेलते-कूदते और आनन्द मनाते दिखाई देते हैं।

वह बहुत चाहता था कि एक बार वह स्वस्थ हो जाय तो सोहिनी के साथ शेष जीवन सुख और शान्ति से व्यतीत कर सके। परन्तु यह इच्छा पूर्ण होती दिखाई नहीं देती थी। वह जानता था कि उसको तपेदिक हो गया है। इस सब के परिणाम को भी वह जानता था। जब सोहिनी को अपनी सेवा करते देखता था तो अपने पूर्व जीवन के व्यवहार पर उसको पश्चात्ताप होने लगता था। रह-रह कर उसके मुख से यह निकल जाया करता था “अब पछताए होत क्या, जब चिड़ियाँ चुग गई खेत।”

४

मानिनी की अवस्था दिन प्रति दिन विलक्षण होती जाती थी। घर में एक कमरा पूजा के लिए बना था। वहाँ ठाकुर की मूर्ति

स्थापित थी। उसके माता-पिता वहाँ पूजा करते थे और उनकी पूजा समाप्त हो जाने पर मानिनी की पूजा का समय आता था। वह घंटों ही बैठी हुई रामू के बताए मंत्र का जप करती रहती थी। पहले तो इस बात को उसके माता-पिता हँसी-मज़ाक में उड़ा देते थे, परन्तु जब यह बात सीमा से बढ़ने लगी तो उनको चिन्ता होने लगी।

मानिनी के व्यवहार को यदि कोई पसन्द कर रहा था तो वह पुजारी बृजलाल था। इस घर में वह पुजारी “ताऊ” के नाम से विख्यात था। बच्चे बचपन से ही उसके साथ खेला करते थे। इससे वे सब उस को अपने अंतरंग विचारों के बताने में विश्वासपात्र मानते थे। वह भी उनकी बातों को सुन सदा उनके हित की बात सोचा करता था।

मानिनी अनेकों बार मन में उठ रही तरंगों का दर्शन उसको कराया करती थी, और साधारण शिक्षा से युक्त पुजारी बृजलाल, कभी-कभी इन बातों को सुन उनका उत्तर देने में असमर्थ हो जाया करता था। इस समय मानिनी चौदह वर्ष में पदार्पण कर चुकी थी और यौवनारम्भ काल के कारण अनेकानेक ऐसी बातें उसके मन को आन्दोलित करती रहती थी कि जिनका अर्थ वह पा नहीं सकती थी। कभी बृजलाल से पूछ लेती तो वह बेचारा असमंजस में पड़ जाता, और उससे उत्तर नहीं बन पड़ता था।

मानिनी एक दिन पूजा से उठी तो खोई सी अनुभव करने लगी। बृजलाल ने उसको मन्दिर से निकलते देखा तो ऐसा अनुभव किया कि उसकी आँखों में अकथनीय मस्ती और ज्योति विराजमान थी। वह अपनी माँ के कमरे में जाने लगी तो पंडित उसका मुख देखता रह गया। मानिनी आँगन पार कर माँ के कमरे में प्रवेश करने लगी थी कि उसके मन में कुछ आया और रुक गई। उसने आवाज़ दी, “ताऊ जी !”

पण्डित तो पहिले ही उसकी ओर देख रहा था। उसका विचार था कि आज फिर वह किसी उलभन में पड़ी हुई है। इससे वह इस प्रकार बुलाये जाने की आशा कर रहा था। उसने कहा “हाँ बेटी।”

“आज मैंने एक विचित्र घटना देखी है।” मानिनी ने समीप आ कर कहा।

“क्या ?”

“आप भीतर आइये तो बताऊँ।” उसने मुस्कराते हुए कहा।

“आज मुझे एक रहस्य का ज्ञान हुआ है।”

पं० बृजलाल इस रहस्य को जानने के लिये उत्सुक हो उठा। इस पर भी वह एकान्त में मानिनी से बात-चीत करने में संकोच करता था। उसको भय बना रहता था कि कहीं वह कोई ऐसी बात न पूछ ले, जिसका उत्तर देना उचित न हो। इस कारण उसने पूछा, “तुम्हारी माता जी भी नहीं हैं क्या ?”

“भीतर हैं ! पिता जी भी हैं। मैं उन्हीं के पास जा रही थी।”

“अपना रहस्य बताने के लिये ही ?”

मानिनी गम्भीर विचार में खो गई। उसने कुछ विचार कर कहा, “उनसे ऐसी बात करने का कोई लाभ नहीं होता। आपसे कहती हूँ, क्योंकि आप बात को समझने का यत्न करते हैं। जब समझ जाते हैं तो फिर समस्या को सुलझाने का यत्न भी करते हैं।”

जब मानिनी घर के भीतर गई तो उसकी माँ और पिता प्रातः का अल्पाहार कर रहे थे। मानिनी के पीछे-पीछे पं० बृजलाल को देख कर मंगल ने कहा, “आइये पंडित जी ! क्या फिर यह आप में बहस करने वाली है ?”

बूजलाल हँस पड़ा। उसने मंगल के बताये आसन पर बैठते हुए कहा, “मंगल भैया ! यह भगड़ा नहीं करती। परन्तु कभी-कभी ऐसी-ऐसी बातें बताती है जो बड़े-बड़े शास्त्रवेत्ता विद्वानों के भी मस्तिष्क में नहीं आतीं। उस दिन इसने बताया था कि प्राणी में तीन वस्तुएँ हैं, आत्मा, शरीर और मन। यह बात सर्वथा सत्य है। आज यह एक और बात ले कर आई है।”

“यह बातें कौन सिखाता है इसे ?” मोहिनी ने पूछा।

उत्तर मानिनी ने दिया, “रामू चाचा मुझे एक मन्त्र बता गये हैं। मैं उसका जाप करती हूँ। इससे मेरी कुण्डिलनी खुल गई है। परिणाम यह हुआ है कि जब मैं ध्यानावस्थित होती हूँ तो मुझे सृष्टि के परमाणु पृथक्-पृथक् नाचते दिखाई देने लगते हैं। मैं उनको देखती हूँ और उनसे प्रपना अनुमान लगाती हूँ। मेरी आयु अभी कम है, मैंने संसार की बहुत कम बातें देखी हैं। इससे अनेकानेक वस्तुओं का अर्थ, जो मैं इस प्रकार देखती हूँ, जान नहीं सकती। इस गाँव में केवल ताऊ जी हैं, जो कभी मेरे मन के संशयों का निवारण करते हैं। इस कारण इनसे पूछती रहती हूँ।

आज मैंने एक अति विचित्र दृश्य देखा है। काल साक्षात् मेरे सामने चलता हुआ दिखाई दिया है। यह एक अति वेगवान नदी के रूप में था। मैं और सब प्राणी उसमें ऐसे बहते जा रहे हैं जैसे नदी में कभी-कभी लकड़ियाँ बहती दिखाई देती हैं। मैं उस कालरूपी नदी में बहती हुई अनुभव कर रही हूँ कि नदी के तट पर अति सुन्दर, मनमोहक और सुखदायक विश्राम-स्थान हैं। वहाँ जाने की इच्छा सब लोगों की होती है। मेरी भी हुई, परन्तु काल के बहाव के वेग से बाहिर निकलना कठिन है। नटेश्वर किनारे पर हाथ बढ़ा कर मुझे

बाहिर निकालने का यत्न कर रहे हैं। वे कहते हैं कि योगसिद्धि से काल की गति का विरोध किया जा सकता है। जो ऐसा कर पाता है वह अजर-अमर हो जाता है। काल की गति उस पर प्रभाव नहीं डाल सकती।

मैंने नटेश्वर जी से पूछा कि क्या वे काल के विकराल गाल से बच गये हैं? उन्होंने बताया कि बहुत सीमा तक, हाँ। फिर यह भी कहा कि यदि उनका हाथ पकड़ लूँगी तो वे मुझे इससे बाहिर निकाल लेंगे। तब सहस्रों वर्ष तक मैं इसी प्रकार बाल्यावस्था में ही जीवित रह सकूँगी।

“मैं ताऊ जी से पूछना चाहती थी कि क्या यह ठीक है?”

पं० बृजलाल ने गम्भीर भाव धारण कर कहा, “बात तो तुम्हारी ठीक है। काल एक द्रव्य है। इसकी लम्बाई, चौड़ाई और गहराई भी है। इसकी गति की लपेट में आया मनुष्य जन्म-मरण के बन्धन में तथा बाल्य-यौवन और वृद्धावस्था के भोग में फँसा रहता है। रहा इस से बाहिर निकलने का उपाय। उसे तो मेरे शास्त्र नहीं बताते, यूँ कहो कि मुझमें उनके समझने की शक्ति नहीं। नटेश्वर में वह है, अथवा नहीं, मैं नहीं जानता।”

“मैंने अपना हाथ बढ़ा कर नटेश्वर जी के हाथ में देने का यत्न किया। परन्तु कालरूपी नदी के वेग से मेरा हाथ वे पकड़ नहीं सके। इस पर भी मुझे निकालने के यत्न में वे किनारे-किनारे चलते चले आ रहे हैं।”

“कहाँ हैं वे?” पुजारी ने पूछा।

“आप उनको नहीं देख रहे। परन्तु मैं आँखें बन्द करती हूँ तो हाथ बढ़ाये हुए मुझे बाहिर निकालने का यत्न करते हुए दिखाई देते हैं।”

“मानिनी”, मोहिनी ने डाँटकर कहा —“तुम स्वप्न की बात कर रही हो क्या ? भला स्वप्नों की बातों की कौन चिंता करता है ।”

“स्वप्न नहीं है यह माँ ! मैं बैठी जप कर रही थी । और जप करते-करते यह दृश्य मेरे सामने आ गया । मैं एक बात और बताना चाहती हूँ । वह यह है कि मेरे में और उनमें इतना अन्तर रह गया है, जितना कि एक-डेढ़ वर्ष काल का होना चाहिये ।”

“वे तुम से एक-डेढ़ वर्ष पीछे हैं या आगे ?”

“वे उस ओर हैं जिस ओर मैं बहती जा रही हूँ । एक विशेष बात और है । वे नदी के आर-पार हो कर जा रहे हैं । नदी का बहाव उनको बहा कर नहीं ले जा सकता । कभी तो ऐसा प्रतीत होता है कि वे तट पर खड़े हैं । कभी ऐसा प्रतीत होता है कि नदी पार कर रहे हैं । इस पर भी वे नदी के साथ नहीं बह रहे । उन्होंने अपना हाथ बढ़ा कर बीच के अन्तर को मिटा देना चाहा, परन्तु वह मिट नहीं सका ।”

. मंगल, जो अभी तक ये सब बातें सुनता हुआ अल्पाहार कर रहा था, बोल उठा, “मानिनी, ऐसी बातें सोचती रही तो पागल हो जाओगी । फिर तुम्हें पागलखाने भेजना पड़ेगा । बताओ मास्टर साहब पढ़ाने आया करते हैं या नहीं ?”

“आया करते हैं पिता जी ! परन्तु वे ही तो उस दिन कहते थे कि काल और दिशा भी द्रव्य हैं । काल की गहराई में जाने वाला मनुष्य सृष्टि के उन रहस्यों को जान सकता है जिनको साधारण मनुष्य जान नहीं सकता । काल की चौड़ाई में जा सकने वाला मनुष्य काल की गति के विनाशकारी प्रभाव से बच सकता है ।

मैं जब जप करती हूँ तो मास्टर जी का कहना है कि मेरी कुंडलिनी खुल जाती है और मैं काल की गहराई में जाने की शक्ति

प्राप्त कर लेती हूँ। मुझमें अभी काल की चौड़ाई में जाने की शक्ति नहीं आई। मास्टर जी का कहना है कि यह शक्ति योगाभ्यास से आ जायगी और तब मैं इसी आयु की बनी रहूँगी।”

“हाँ !” बृजलाल ने कहा, “तब यह चोदह वर्ष की कुमारी ही बनी रहेगी।”

मंगल और मोहिनी हंस पड़े। मानिनी समझती थी कि इसमें हँसने की कोई बात नहीं। इससे उसका मुख लज्जा से लाल हो उठा था। पं० बृजलाल उसके मन की बात को समझ कर कहने लगा, “मंगल भैया ! इसमें हँसने की कोई बात नहीं। अचम्भा करने की बात अवश्य है। इतनी छोटी आयु में इसकी बुद्धि के बंधन कट गए हैं और शास्त्र के गूढ़ रहस्यों को यह समझने लगी है। हम लोग, जो शास्त्र पढ़ते-पढ़ते बूढ़े हो गये हैं, इस बात को नहीं समझ सकते।”

“कौन जप करती हो मानिनी ?” उसकी माँ ने पूछा।

“मंत्र तो सरल है। परन्तु उसकी विधि विशेष होने से उसका जप कठिन है। रामू चाचा का कहना था कि जप करते समय ध्यान ब्रह्म-रंध्य में ले जाना चाहिए।”

मंगल ने कहा, “मैं अब समझा हूँ, क्यों जगदीश चन्द्र ने तुम्हें अपनी ही भाँति पागल बनाने के लिए संस्कृत पढ़ने को कहा था। जिस प्रकार रामू बावरो की भाँति उसके पीछे धूमता-धूमता निकम्मा हो गया है, उसी तरह तेरी भी दशा होगी। मैं चाहता हूँ तुम्हारा संस्कृत पढ़ना बन्द करना, पर जब तुम्हारी आँखों में आँसू देखता हूँ, तो मन मसोस कर रह जाता हूँ।”

इस समय यथार्थ में ही मानिनी की आँखें तरल हो उठी थीं। पं० बृजलाल सदा की भाँति मानिनी की सहायता के लिए बोल उठा,

“मंगल भैया ! अपनी अज्ञानता के कारण ज्ञान की निंदा मत करो । यह बहुत बड़ा पाप है । तुम्हारा लड़की से मोह स्वार्थमय हो गया है । यही कारण है कि वह मोह उसी उन्नति में सहायक न हो, बाधक बन रहा है ।”

मोहिनी समझ नहीं सकी कि मानिनी की बातों की निंदा करे अथवा प्रशंसा । वह इस निर्गुन में अपने को योग्य नहीं समझती थी । उसको चिंता यह थी कि कहीं मानिनी जगदीश से विवाह करने के लिए हठ न करे । वह विवाह कैसे हो सकता है ? दोनों की आयु में बहुत अन्तर है ।

मानिनी को अपने विचारों से दूर रखने के लिए मोहिनी ने उसे वहाँ से बाहिर भेज दिया । कहा, “जाओ मानिनी ! अल्पाहार कर लो । फिर मास्टर जी से पढ़ने का समय हो जायगा ।”

मानिनी गई तो मोहिनी ने अपने पति की ओर देख कर कहा, “मेरे समझती हूँ कि मानिनी के विवाह का प्रबन्ध कर देना चाहिये । देरी करने से काम बिगड़ जायगा ।”

बृजलाल ने पूछा, “क्या बिगाड़ होने की सम्भावना है ?”

“इसकी रुचि जगदीश की ओर अधिक हो रही है । जब लगाव बहुत हो गया तो फिर दुःख और क्लेश के अतिरिक्त और कुछ नहीं होगा ।”

मंगल मन ही मन समझता था कि पं० बृजलाल जगदीश का पक्ष लेगा । इस कारण उसे ही मोहिनी को उत्तर देने का अवसर देने के लिए वह चुप हो रहा । बृजलाल ने कहा, “भाभी ! जीवन का उद्देश्य विवाह करना है अथवा जीवन में सुख और शान्ति की प्राप्ति ? विवाह साधन है सुख और शान्ति का । इस कारण मैं तो यह कहता हूँ कि

विवाह के लिये शीघ्रता करने की आवश्यकता नहीं। मानिनी के विचार परिपक्व होने दो। यदि उसका मन जगदीश से ही विवाह के लिए हो जाता है तो तुम लोगों को क्यों आपत्ति है ? आयु का अन्तर मैं देखता हूँ, परन्तु मेरा विश्वास है कि मुझ से और आप से भी अधिक युवावस्था इस अन्तर को देखेगी। उसमें देखने की योग्यता पैदा होने दो। घबरा-हट में कोई भी बात करने से हानि होगी।”

मंगल ने कहा, “पर मैं तो यह कहता हूँ कि यह पढ़ाई और मंत्र का जप उसको पागल बना देगा। एक बार मस्तिष्क बिगड़ा कि जीवन भर का भ्रमला सिर आ पड़ा।”

“इस बिगाड़ को तुम बन्द नहीं कर सकते, मंगल ! मैं भी वह मन्त्र जानता हूँ। मैं भी उसका जप करता हूँ। मैं भी अपना ध्यान ब्रह्म-रन्ध्र में स्थापित करने का यत्न करता हूँ, परन्तु मेरी कुण्डलिनी तो खुली नहीं। इससे कहता हूँ कि यह उसके पूर्व जन्मों के प्रयत्नों का फल इस जन्म में प्रकट हो रहा है। इसको आप रोक नहीं सकते। फिर यह हम लोगों को भले ही पागलपन प्रतीत हो, परन्तु वास्तव में है क्या, कहना कठिन है। मैं इसको पागलपन इस कारण नहीं कहता, कि उसकी शक्ति, उसकी युक्ति करने की शक्ति और उसकी भला और बुरा विचार करने की शक्ति सर्वथा सजग है।”

“एक बात है। मैं समझती हूँ कि उसकी बातें साधारण आदमियों से भिन्न हैं। इससे उन्हें साधारण लोग पसंद नहीं करेंगे।”

बृजलाल ने मुस्कराते हुये कहा, “भाभी का कहना विचित्र है। लोगों के समझने अथवा न समझने से अपने बच्चों का जीवन कटु करना, कैसे युक्ति-संगत है।”

“तो फिर क्या चाहते हैं आप पंडित जी ?” मंगल ने बात को समाप्त करने के लिए कहा ।

“मैं तो कहता हूँ कि आपकी लड़की विशेष प्रतिभा और अति-पुण्य कर्म की भागी है । उसका जीवन अपनी घबराहट से खराब न करो । उसके मन को अभी और विकसित होने दो और फिर देखेंगे कि क्या उचित है और क्या अनुचित है ।”

बात यही समाप्त हो गई ।

५

भारतवर्ष में जगदीश और रामू का भ्रमण निर्विघ्न और घटना-रहित रहा । बम्बई में जब वे लोग गये तो उनके दस-ग्यारह वर्ष पूर्व के परिचित कुछ लोग उनको मिल गए । उनकी सहायता से अनायास ही उनको पर्याप्त धन मिल गया और वे यूरोप और अमेरिका इत्यादि देशों को भ्रमणार्थ चल पड़े । परवाना राहदारी मिलने में कुछ कठिनाई हुई परन्तु जब बैक-बैलेंस दिखाया गया तो उसकी स्वीकृति भी मिल गई ।

जब तक इनकी जेब में रुपया रहा, तब तक वे केवल भ्रमण करते रहे । इटली, स्विटजरलैंड, आस्ट्रिया, रूस, स्वीडन, नार्वे, इंग्लैण्ड इत्यादि देशों में उन्होंने अपना परिचय केवल सैर करने वालों के रूप में दिया, परन्तु कठिनाई जर्मनी में आई । वहाँ देश का राजदूत बहुत ही साधारण बुद्धि का व्यक्ति था । वे जब नियमानुसार बर्लिन पहुँचे तो अंग्रेजी राजदूत से मिलने गए । अपना पासपोर्ट दूतावास में दिखा कर जब राजदूत, ड्रक क्रिपनिस से मिलने की याचना की तो पूछा गया, “आप किसके पुत्र हैं ?”

“एक बहुत ही साधारण माता-पिता के, जिन्हें अपने देश में शायद कोई नहीं जानता ।” जगदीश ने उत्तर दिया ।

“आप क्या काम करते हैं ? अपने देश में रईस हैं, जमींदार हैं, राजा हैं, व्यापारी हैं, अथवा क्या हैं ?”

“हम वैज्ञानिक हैं। मानव-विज्ञान के विद्यार्थी हैं।”

“यह भ्रमण के लिए धन कहाँ से मिला है आपको ?”

“हमने अपनी विद्या से पैदा किया है।”

प्रश्न पूछने वाले ने सिर हिलाते हुए कहा, “मुझे आशा नहीं कि आपको भेंट करने का अवसर मिलेगा।”

“मुझे विश्वास है कि वे मुझ से मिलना चाहेंगे।”

“अच्छी बात। आप जा सकते हैं।”

“यह मेरे निवास-स्थान का पता है।” इतना कह कर जगदीश ने अपना कार्ड उस कर्मचारी के सामने रख दिया और दूतावास से बाहिर को घूम पड़ा। फिर कुछ सोच कर और लौट कर उस कर्मचारी से पूछने लगा, “क्षमा कीजिये, क्या मैं आपका नाम जान सकता हूँ ?”

“कुछ जरूरत नहीं।” उसका उत्तर था।

जगदीश मुस्कराया और दूतावास से बाहिर निकल आया। बाहिर आकर रामू ने कहा, “गुरुदेव ! यह आदमी बहुत ही मूर्ख और उजड़ु प्रतीत होता है।”

“हमें इससे क्या ! हम अपना कार्य कर रहे हैं। जब तक उसमें कोई बाधा न पड़े हमें दूसरों की ओर ध्यान करने की आवश्यकता नहीं।”

“नहीं गुरुदेव, कुछ तो करना चाहिए। असभ्य लोगों को कभी-कभी सभ्यता का पाठ पढ़ाना ही चाहिये।”

“प्रकृति स्वयं इन्हें सुमार्ग दिखा देगी।”

“गुरुदेव, कुछ तो करना ही चाहिए। जब से हमने यूरोप में पैर रखा है, तब से हम केवल खाते-पीते और घूमते ही रहे हैं। कुछ ऐसा

कार्य अवश्य करना चाहिए जिससे यहाँ के भूले हुए मस्तिष्कों को कुछ ठेस पहुँचे ।”

“अच्छा रामू ! यह विज्ञान-प्रधान देश है । यहाँ के लोगों को यह बताने का यत्न करेंगे कि विज्ञान के विषय में उनका ज्ञान अधूरा है ।”

बात समाप्त हो गई । इस पर भी दूतावास में हुआ शुष्क व्यवहार रामू के मन में अखर रहा था । होटल-बर्लिन में, जहाँ वे ठहरे थे, वे पहुँचे और लिफ्ट में बैठ कर पाँचवीं मंज़िल पर, जहाँ उनका कमरा था, जाने ही वाले थे कि एक ‘वेटरैस’ एक चाँदी की प्लेट में रखी एक चिट्ठी उनके लिए लाई । जगदीश ने पत्र उठा कर पढ़ा और फिर रामू के हाथ में दे दिया, वेटरैस का धन्यवाद किया और लिफ्ट वाले को लिफ्ट चलाने के लिये कहा ।

रामू ने पढ़ा । लिखा था, हिज़ ऐक्सलेंसी ड्रेक किपनिस, अंग्रेज़ी राजदूत, मिस्टर जगदीश चन्द्र और मिस्टर रामचन्द्र के साथ सायं चार बजे चाय पी कर बहुत प्रसन्न होंगे । संदेश टेलीफोन द्वारा ।”

अपने कमरे में पहुँच कर रामू मुस्करा उठा । जगदीश चन्द्र ने कहा, “यूरोप में अज्ञात ही भ्रमण करना चाहता था, परन्तु अब बात छुपी नहीं रह सकती ।”

“यह कैसे हुआ गुरुदेव ?”

“सायं जब हम पहुँचेंगे तो वह स्वयं बतायेगा ।” उस समय तीन बज रहे थे । इस कारण दोनों ने उचित वस्त्र पहिने और अंग्रेज़ी दूतावास को चल पड़े ।

दूतावास के फाटक पर वही आदमी, जिसने उनसे प्रश्नोत्तर किया था, खड़ा उनकी प्रतीक्षा कर रहा था । जब वे दोनों टैक्सी से उतरे तो

वह आगे बढ़ कर बहुत विनय से उनसे हाथ मिला कर बोला, “हिज़ ऐक्सलेंसी आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।”

“हम समझते हैं कि हम ठीक समय पर आए हैं।”

“इस पर भी वे और हर ऐक्सलेंसी चाय पर बैठे हैं।”

अविलम्ब उनको भीतर पहुँचाया गया। वहाँ भैसे से एक मोटे-ताजे आदमी ने उठ कर इनसे हाथ मिलाते हुए कहा, “मिस्टर जगदीश, दि हिपनाटिस्ट, मुझे आप से मिल कर बहुत प्रसन्नता हुई।”

जब ये बैठ गए तो एक दुबली-पतली स्त्री से, जो उनके साथ की कुर्सी पर बैठी थी, उनका परिचय कराया गया, “ये मेरी स्त्री मिसेज़ किपनिस हैं।” जगदीश ने कुछ झुक कर उनसे हाथ मिलाया पश्चात् रामू का परिचय हुआ। मिस्टर डूके ने कहना आरम्भ किया, “मैं आपके विषय में आज से दस-ग्यारह वर्ष पूर्व एक नोट पढ़ चुका हूँ। आपके कुछ करतब मैंने पढ़े थे। तब से मैं बम्बई-स्थित अपने एक मित्र को कई बार आपके विषय में लिख चुका हूँ। वहाँ से यही सूचना मिलती रही थी कि आप कहीं गायब हो गए हैं। फिर एकाएक दो मास हुए कि उसी मित्र ने लिखा कि आप बम्बई गए थे और अपनी मानसिक शक्ति के चमत्कार दिखा कर लोगों को चकाचौंध कर रहे हैं। उन्होंने यह भी लिखा है कि आप युरोप भ्रमण के लिए आ रहे हैं। तब से मैं युरोप के भिन्न-भिन्न स्थानों से आपके विषय में समाचार जानने का यत्न करता रहा हूँ। मैं आपके विषय में कोई समाचार न पा निराश हो रहा था कि आज आपका कार्ड पा आप से मिलने के लिए व्याकुल हो उठा, और आपके होटल में टेलीफोन द्वारा सन्देश भेज दिया।”

इस बात पर श्रीमती किपनिस ने कहा, “हमारे मित्र ने बम्बई से

जो कुछ आपके विषय में लिखा है वह सत्य ही अविश्वसनीय है। हम जिन्हें इसके विषय में कुछ कहते थे वह सन्देह में सिर हिला देते थे।”

“मेरी इच्छा नहीं थी कि अपनी इस विद्या और ज्ञान का प्रदर्शन लोगों के सम्मुख करूँ, परन्तु केवल आपके बम्बई वाले मित्र की बात को सत्य सिद्ध करने के लिये तथा श्रीमती जी के संशयात्मक मित्रों के भ्रम-निवारणार्थ मैं कुछ दिखाने को बाधित हो गया हूँ। यदि आप आज्ञा दें तो एक दिन आप अपने मित्रों को बुला लीजिए, मैं आपकी सेवा करने आऊँगा।”

“धन्यवाद !” श्रीमती किपनिस ने मुख खोल कर कृतज्ञता के भाव से कहा।

इस समय चाय परस दी गई थी। वह आदमी, जिसने शुष्कता का व्यवहार किया था, उनके लिए चाय बनाने लगा था। रामू और जगदीश चाय पीते हुए इधर उधर की बातें करने लगे। मिस्टर किपनिस तो जगदीश चन्द्र से बातें कर रहा था। श्रीमती किपनिस रामू से बातें कर रही थी। उसने पूछा, “आप भी कुछ कर सकते हैं क्या ?”

“यदि आप आज्ञा दें, तो मैं आपको कुछ तो अभी दिखा सकता हूँ।”

“हाँ ! हाँ ! जरूर दिखाइये। इससे मुझे प्रसन्नता होगी।”

इस पर रामू ने अपनी जेब से एक रुमाल निकाला और कहा “क्या आप बता सकती हैं कि इसमें से कैसी सुगन्ध निकल रही है ?”

श्रीमती किपनिस ने रुमाल को सूँघ कर कहा, “वाह। इसमें तो मेरा प्रिय इतर लगा है। यहाँ इसे पैरिस ब्यूटी कहते हैं। इसकी एक औंस की शीशी पाँच पौंड में आती है।”

“आप कहीं गलती तो नहीं कर रहीं ?”

श्रीमती किपनिस ने पुनः सूँघा और कहा, “मुझे विश्वास है कि यह वही इतर है।”

“मेरी सम्मति है कि हिज़ ऐक्सलेंसी की भी राय ले ली जाय तो ठीक होगा।”

श्रीमती ने अपने पति का ध्यान आकर्षित करते हुए कहा, “ज़रा देखिये, इसमें कैसी सुगन्धि लगी है ?”

मिस्टर किपनिस ने रुमाल सूँघ कर कहा, “इसमें तो कोई सुगन्धि नहीं है। यह तो लौंडरी की गन्ध है।”

श्रीमती ने विस्मय से रुमाल वापिस लेकर पुनः सूँघा और अपने पति को कहा, “आप इतनी तेज़ गन्ध को भी नहीं सूँघ सकते ? यह तो मेरी प्रिय सुगन्धि ‘पैरिस ब्यूटी’ है।”

इस पर मिस्टर किपनिस ने पुनः सूँघा और कोई गन्ध न पा अपने पीछे खड़े उसी आदमी को कहा, “मिस्टर जौन तनिक देखो ! इसमें से कैसी सुगन्ध आती है ?”

उसने नाक से रुमाल को लगाया और तुरन्त ही नाक चढ़ा कर रुमाल को वापिस हिज़ ऐक्सलेंसी के हाथ में देकर कहा, “श्रीमान जी ! इसमें तो बदबू आती है।”

इस पर जगदीश हँसने लगा। उसने कहा, “श्रीमान जी, गन्ध की पहचान गँवार लोग नहीं कर सकते।”

श्रीमती किपनिस ने कई बार सूँघा और उसकी सुगन्धि से प्रसन्न हो रामू से पूछा, “यह क्या बात है ?”

“यही भ्रम है। संसार में सब कुछ, जो हम देखते हैं, सुनते हैं, चखते, सूँघते अथवा स्पर्श करते हैं, वह सब भ्रम है। इस कारण यह

हमाल का सूंघना भी भ्रम है। अपने-अपने मन की अवस्था के अनुसार ही इन्द्रियाँ काम करती हैं। आपके मन पर हम सम्मोहिनी का प्रभाव जमा सकते हैं, जिससे जो हम चाहते हैं वही आप देखने, सुनने अथवा सूंघने लगते हैं।”

“यही तो जानने की बात है कि आप कैसे हमारे मन को अपनी सम्मोहिनी के प्रभाव में ले आते हैं।”

“बैसे तो प्रत्येक मनुष्य में न्यूनाधिक यह सम्मोहिनी शक्ति विद्यमान होती है। वक्ता, नेता, आफिपर, व्यापारी, इंश्योरेंस एजेण्ट इत्यादि सब लोग, जो दूसरों से सम्पर्क रखते हैं, अपने में कुछ अंशों में यह शक्ति रखते हैं। उनका जितना अधिक प्रभाव दूसरों के मन पर पड़ता है, उतने ही वे वक्ता, नेता इत्यादि के प्रभाव में आ जाते हैं।

इस शक्ति का अधिकाधिक विकास किया जा सकता है। और वह यहाँ तक बढ़ सकता है कि दूसरों को चमत्कारिक प्रतीत होने लगता है। नैपोलियन, सिकन्दर, सीज़र इत्यादि सिपाही और बुद्ध, ईसा तथा मुहम्मद इत्यादि धर्मगुरु, इसी प्रकार के बल पर सहस्रों लोगों को मरने-मारने पर उद्यत करते रहे हैं।

“मैं भी उसी शक्ति को उन्नत कर यह दिखा रहा हूँ।”

“बहुत सुन्दर ! बहुत सुन्दर।” मिस्टर किपनिस ने कहा, “आई फोलो यू पर्फेक्टली ?”

सामने मिठाई की प्लेट रखी थी। जब वह खाली हो गई तो जगदीश चन्द्र ने कहा, “युअर ऐक्सलेंसी ! देखिए यह प्लेट है।”

“हाँ।” किपनिस ने कहा।

“यह देखिए।” जगदीश ने अपनी छुरी प्लेट में रखते हुए कहा। सब, मिस्टर किपनिस, मिसेज़ किपनिस, मिस्टर जोन तथा अन्य बैसे भी देखने लगे। जगदीश ने अपनी छुरी उठाई। एक छैं इंच धुँए का

स्तम्भ खड़ा हो गया। जगदीश ने अपनी छुरी को प्लेट पर घुमाया, तो धुँए का स्तम्भ घूमने लगा। देखते-देखते उस धुँए के स्तम्भ का रूप एक सुन्दर नाचने वाली का बन गया। सब आँखें फाड़-फाड़ कर उस छे इंच ऊँची स्त्री को देखने लगे थे। जगदीश ने कहा, “युअर ऐक्सी-लैसी, यह बम्बई की प्रसिद्ध नाचने वाली अमीर बाई हैं। ये आपको अपना नाच दिखायेंगी।” तुरन्त ही अदृश्य से आवाज आई, “धिक्-धिक् धा तिट्-पिट् तिरकट ता।” वह ठुनका देने लगी और फिर ‘छन-छन-छननन, छन-छन’ नाच आरम्भ हो गया।

कभी-कभी वह खड़ी हो जाती और बहुत मधुर और छोटी आवाज से, जो उसके शरीर के छोटेपन के अनुसार ही थी, गाने लगती। इस समय कहीं अदृष्ट से सारंगी और तबले की संगत होने लगी।

चाय समाप्त होने तक इस प्रकार का मनोरंजन कार्य होता रहा। जब सब चाय से उठ खड़े हुए तो श्रीमती किपनिस ने रामू को पृथक् ले जा कर पूछा, “आप कितने काल तक अपने गुरु से यह विद्या सीखते रहे हैं?”

“मुझे गुरु जी के साथ रहते और इस विद्या का अभ्यास करते चौदह वर्ष हो गए हैं।”

“दूसरे के मन पर जो प्रभाव आप उत्पन्न करते हैं, वह कितने काल तक स्थिर रहता है।”

“वर्षों तक, और कई अवस्थाओं में जीवन पर्यन्त भी यह प्रभाव रखा जा सकता है।”

“क्या आप किसी एक को दूसरे से प्रेम करने पर विवश कर सकते हैं?”

“यह तो एक साधारण सी बात है।”

इस कथन को सुन कर श्रीमती किपनिस गम्भीर विचार में पड़ गई। कितने ही समय तक वह रामू के मुख की ओर देखती रही। पश्चात् सचेत हो कहने लगी, “मैं आपसे किसी समय मिलूंगी। आप कब तक बर्लिन में रहेंगे ?”

“हमारा विचार यहाँ एक मास तक रहने का है।”

इसी समय मिस्टर किपनिस जगदीश चन्द्र से पूछ रहे थे, “कब आप अपनी विद्या का चमत्कार मेरे मित्रों को दिखायेंगे ?”

“जब आप कहें। मुझे इतना कुछ करने के लिये कुछ विशेष प्रयत्न की आवश्यकता नहीं पड़ती।”

६

अंग्रेजी राजदूत द्वारा आयोजित जगदीश चन्द्र की विद्या और शक्ति का प्रदर्शन दूतावास के एक हाल में हुआ। बर्लिन के एक सौ के लगभग विख्यात और प्रमुख व्यक्ति वहाँ उपस्थित थे। इनमें फौन हिण्डन वर्ग, जर्मन फौजों के सब से बड़े कमाण्डर, लूई कोहन, जर्मनी के सब से बड़े वैज्ञानिक, कमाण्डर क्रिप्टन विस्मार्क, विलहैलम कैसर का प्राइवेट सैक्रेटरी और अन्य व्यापारी और कारखानों के मालिक उपस्थित थे।

सबसे पूर्व श्रीमान् ड्रेक किपनिस ने जगदीश चन्द्र का संक्षिप्त परिचय दिया और पश्चात् जगदीश चन्द्र ने अपने विषय पर प्रकाश डाला। उसने कहा, “हिपनोटिज्म का कार्य दर्शक के मन में भ्रांति उत्पन्न करता है। परन्तु योगाभ्यास का क्षेत्र इससे बहुत ही विस्तृत है। योगी न केवल दूसरे के मन को मोह सकता है अथवा उसमें भ्रांति उत्पन्न कर सकता है, प्रत्युत सृष्टि के गूढ़तम रहस्यों को जान, संसार का निर्माण भी कर सकता है।

“मैं दोनों अंशों का प्रदर्शन करूँगा।”

अब उसने अनेकानेक भ्रान्तियों का प्रदर्शन किया। उसने गीत सुनवाये, नाच दिखाये, अनेकानेक सुगन्धियों को सुँघाया और बिना खाये अनेकानेक स्वादिष्ट पदार्थों के रस का आस्वादन कराया।

अपने दूसरे प्रोग्राम के अन्तर्गत उसने कहा, “अब कोई ऐसी बात बतायें जो आपका विज्ञान अभी न कर सका हो। मैं बताऊँगा कि मैं उसे कर सकता हूँ या नहीं। मैं बिना वायु जी सकता हूँ, हृदय की गति को रोक कर भाग सकता हूँ, मैं जलती आग में घंटा भर खड़ा रह सकता हूँ। परन्तु यह कुछ नहीं। इससे भी अधिक मैं निर्माण कार्य कर सकता हूँ, बताइये आप क्या चाहते हैं?”

कैसर विलहैलम के प्राईवेट सैक्रेटरी मिस्टर क्रिप्टन ने कहा, “मिस्टर मैजीशियन ! माननीय कैसर के लिये भारतवर्ष के सबसे बढ़िया आम बना सकते हैं क्या?”

“हाँ।”

“वे खाने के कार्य में आयेंगे क्या?”

“हाँ।”

“तो एक टोकरा उनके लिये भेंट के रूप में बनाइये।”

“वह आपकी मोटर में सामान रखने के स्थान पर रखा है। आप मंगवा कर सब दर्शकों को दिखा सकते हैं।”

मिस्टर क्रिप्टन आवाक् मुख खड़ा रह गया। उसने अपने आतिथेय से कहा, “कृपया नौकर को भेज कर यहाँ मंगवाइये।”

मिस्टर किपनिस ने दो चपरासी भेजे और दो तीन मिनट में उन्होंने एक आमो का टोकरा, जिसमें से आमों की सुगन्धि आ रही थी, लाकर दर्शकों के बीच में रख दिया। जगदीश चन्द्र ने टोकरा खोल दिया और उसमें से आम निकाल कर एक-एक सब दर्शकों को बाँट दिए।

टोकरा खाली हो गया। जब उसमें कुछ नहीं रहा तो उसने मिस्टर क्रिप्टन की ओर देख कर कहा, “आपके मालिक के लिये एक दूसरा टोकरा मोटर में रखवा दिया है।”

सब चकित हो उसको देखने लगे। मिस्टर क्रिप्टन को सन्देह हो गया कि शायद मिस्टर किपनिस इस जादूगर से मिल कर धोखा न दे रहा हो। इस कारण उसने अन्य दर्शकों को कहा, “मैं स्वयं जा कर देखना चाहता हूँ। मैं अभी आ कर आपको पूरी बात बताता हूँ।”

वह स्वयं गया और वहाँ एक और आमों का बड़ा टोकरा देख कर लौट आया। आ कर उसने बताया, “मैंने मोटर के शोफर से पूछा है। उसने बताया कि जब मिस्टर किपनिस के नौकर आये और आमों का टोकरा माँगने लगे तो वह हँस पड़ा था, और मोटर का सामान रखने का स्थान खोल कर दिखाने लगा। परन्तु फिर उसके विस्मय का ठिकाना नहीं रहा, जब उसने एक टोकरा वहाँ पड़ा देखा। अब तो वह आश्चर्य से पागल हो गया है। वह कहता है कि पहला टोकरा निकालते समय उसने देखा था कि उस स्थान पर और कुछ नहीं था। सब समय वह मोटर के पास खड़ा रहा है और वह कसम खा कर कहता है कि वहाँ मोटर के समीप कोई आदमी नहीं आया।”

इस समय मिस्टर लूई कोहन पूछने लगे, “हम जर्मन के वैज्ञानिक सीसे से सोना बनाने का यत्न कर रहे हैं। अभी तक सफलता नहीं मिली। क्या आप यह भी कर सकते हैं?”

“हाँ, मुझे कोई सीसे की वस्तु दीजिये।” लूई कोहनी ने अपनी जेब में से एक लैड पेंसिल दी। एक लड़की की डण्डी के आगे एक सीसे की टोपी लगी थी जो जोर से कागज पर घिसने से लिखती थी। जगदीश चन्द्र ने वह पेंसिल देख कर कहा, “प्रोफेसर साहब, यह तो

कुछ भी नहीं। इसे आप ले लीजिये। मैं आप को इससे भी अधिक चमत्कारपूर्ण काम दिखाऊंगा। भारी से हल्की वस्तु बनाना सुगम है। यह लो सोना हो गया है।” इतना कह कर उसने वह पेंसिल वापिस कर दी। उसकी सीसे की टोपी सोने की हो गई थी। जगदीश पुनः कहने लगा, “परन्तु मैं तो कहता हूँ कि किसी के पास लोहे का कोई बड़ा टुकड़ा हो तो मैं सारे टुकड़े को ही स्वर्ण का बना दूंगा। लोहा सोने से हल्का होता है। वह सोना बनते समय सुकड़ जायेगा।”

लूई कोहिनी ने अपनी लोहे की छड़ी आगे कर दी और कहा, “ठीक है, यह लीजिये।”

जगदीश ने छड़ी पकड़ कर सामने मेज पर रख दी। ऊपर कपड़ा डाल दिया। और कहा, “सोना लोहे से लगभग एक तिहाई भारी होता है। अतएव लोहा सोना बनते समय इसी अनुपात में सिकुड़ जायेगा। इस कारण सोना तो असली बनेगा, तोल में लगभग उतना ही होगा जितनी यह छड़ी है परन्तु उसका आयतन इससे एक तिहाई कम हो जायेगा।”

इतना कह कर उसने कपड़ा उठाया। छड़ी लम्बाई-चौड़ाई में छोटी हो गई थी, परन्तु लोहे के स्थान वह उज्ज्वल सोने के रंग की हो गई थी। छड़ी डाक्टर कोहिनी को देते हुए जगदीश ने कहा, “मे डाक्टर साहब से यह निवेदन करता हूँ कि वे इस धन को किसी सार्वजनिक कार्य में व्यय करें, अपने निजी प्रयोग में न लावें।”

वह छड़ी सब दर्शकों ने देखी और हाथ पर उसका भार जाँच कर उसके सोना होने का अनुमान लगाया। पश्चात् डाक्टर कोहिनी ने कहा, “मैं इसकी कैमिकल और फिजीकल परीक्षा करवाऊंगा। पश्चात् आप से मिलूंगा।”

इसी प्रकार अनेकानेक परीक्षणों के पश्चात् प्रदर्शन समाप्त हुआ । प्रायः सब दर्शक आँखें मलते रहे । जब सब लोग चले गये तो जगदीश चन्द्र ने कहा, “मुझे डर है कि यूरोप के लोभी समाज से मैं एक विस्मय और लूट-खसूट का केन्द्र बन जाऊँगा । इस कारण मैं अपना स्थान बदल कर किसी अपरिचित स्थान पर चला जाना चाहता हूँ ।”

“आप दोनों दूतावास में आकर ठहर सकते हैं ।”

“इससे लाभ कुछ नहीं होगा । मैं यहाँ कैदी-सा हो जा जाऊँगा । मैं शान्ति से निर्बाध देश-देशान्तर-भ्रमण के लिए आया हूँ, और उसमें सफलता चाहता हूँ ।”

“अभी तो आपकी भेंट जर्मन शाहंशाह के साथ होगी । वे आपको धन्यवाद भेजेंगे ।”

“वह तो इस दूतावास के पते पर हो सकती है, परन्तु मैं सर्व-साधारण से पीछा किया जाना पसन्द नहीं करता ।”

“तो आप क्या चाहते हैं ?”

“मैं आप से संरक्षण चाहता हूँ ।”

“मेरा विचार है कि आप अभी तो यहाँ दूतावास में आ जायें । फिर आपको गुप्त रूप से निकाल दिया जायेगा ।”

जगदीश चन्द्र और रामू वहाँ दूतावास में ठहर गए । होटल से उनका सामान मंगवा लिया गया । परन्तु यहाँ एक और समस्या उत्पन्न हो गई ।

श्रीमती किपनिस दूतावास के एक फौजी अफसर से प्रेम करती थी । परन्तु वह श्रीमती किपनिस के प्रस्ताव को अस्वीकार कर चुका था । श्रीमती किपनिस इस विषय में रामू से सहायता माँग रही थी । रामू ने उसे बहुत समझाया कि वह उचित कृत्य नहीं है । परन्तु उसने

उससे इतना अनुरोध किया कि रामू को विवश हो यह बात गुरुदेव को बतानी पड़ी ।

जगदीश चन्द्र ने कहा, “तुम उसे कहो कि यह काम तुरन्त नहीं हो सकता, इसमें कुछ समय लगेगा । तब तक मैं यत्न करूँगा कि वह उस अफसर का विचार ही छोड़ दे ।”

दूसरी और एक रात को मिस्टर किपनिस के कहने पर जगदीश चन्द्र को कैसर के महल में पहुँचा दिया गया । वहाँ उसे कैसर के सामने उपस्थित किया गया । कैसर ने शुद्ध अंग्रेजी भाषा में बात-चीत की और कहा, “डाक्टर कोहन ने मुझे आपके विषय में जो लिखा है उससे मेरा मन बहुत प्रसन्न हुआ है । मैं चाहता हूँ कि आप जर्मनी में रह कर अपने ज्ञान से संसार को लाभ पहुँचाने का यत्न करें । यहाँ पर सबसे बड़ा संस्कृत-पुस्तकालय है । यहाँ की सरकार विज्ञान की उन्नति के लिये अतुल धन व्यय कर सकती है । संसार में कोई ऐसा देश आप को नहीं मिलेगा जहाँ विज्ञान को इतनी ऊँची पदवी प्राप्त हो, जितनी जर्मनी में है । इस कारण यहाँ रहने से जहाँ अपने आप को अनुकूल वातावरण में पावेंगे वहाँ आपको सुख और आराम भी मिलेगा । आप चाहें तो आपको एकान्त में एक बहुत ही आराम देने वाला भवन दिया जाय और उसमें आपके खाने-पीने और आराम का प्रबन्ध कर दिया जाय ।”

जगदीश इस प्रस्ताव से चकित रह गया । परन्तु वह जानता था कि इसका उत्तर कैसे दिया जा सकता है । उसने कहा, “श्रीमान् की मुझ पर इतनी कृपा है, यह जान कर मैं बहुत ही अनुगृहीत अनुभव करता हूँ । आप जो सुविधाएँ मुझको देना चाहते हैं उनसे मेरा मन अति प्रसन्न हुआ है । अभी तो दुनियाँ में भ्रमण कर मैं अपनी ज्ञान

वृद्धि कर रहा हूँ। इसके पश्चात् मेरा विवाह होगा और फिर मैं अपना शेष जीवन लोक-सेवा में व्यतीत करना चाहता हूँ। उस समय श्रीमान् जी के प्रस्ताव से लाभ उठा कर अपने को कृतकृत्य करूँगा।”

“तो यह पक्का वचन है ?”

“इतना ही पक्का जितना कोई मनुष्य दे सकता है।”

“पर आप तो मनुष्य से कुछ ऊपर ‘सुपर ह्यूमन’ हैं।”

“मैं अपने वचन-पालन का पूरा प्रयत्न करूँगा।”

“कब तक आप भ्रमण से अवकाश प्राप्त कर सकेंगे ?”

“अभी एक वर्ष और लगेगा।”

“धन्यवाद ! जर्मन कोम आपके इस देश को अपना निवासस्थान बना कर शोभा प्रदान करने के लिए आपकी कृतज्ञ रहेगी।”

जब जगदीश चन्द्र उठ कर विदा होने लगा तो उसने एक निवेदन किया, “मैं चाहता हूँ कि श्रीमान् जी को अपनी स्मृतिस्वरूप एक भेंट दूँ।”

कैसर उत्सुकता से उसको देखता रहा कि वह आगे क्या कहता है। जगदीश चन्द्र ने अपना दाहिना हाथ, जो खुला था, उस की मुट्ठी कर ली और जब एक क्षण बाद उसे खोला तो उसमें से एक बहुत सुन्दर बड़े से हीरे की अँगूठी निकल आई। यह अँगूठी कैसर की अँगुली पर पूरी आ गई। अँगूठी अँगुली में डाल कर कैसर ने प्रसन्नता अनुभव की। तब जगदीश चन्द्र ने भुक्त कर उसे प्रणाम किया और जाने को आज्ञा माँगी।

डाक्टर कोहन का वक्तव्य जब समाचार-पत्र में निकला तो भारत के योगाभ्यासियों के दर्शन के लिये अंग्रेजी दूतावास के सम्मुख दर्शकों

का ताँता लगना आरम्भ हो गया । प्रति दिन इतनी भीड़ बढ़ने लगी कि दूतावास के बाहिर मार्ग को यातायात के लिये खुला रहने के लिये पुलिस और फिर फौज बुलानी पड़ी ।

जब स्थिति यह हो गई तो 'एकैडमी ऑफ सायंसिज़' की ओर से जगदीश चन्द्र का अभिनन्दन करने के लिये आयोजन होने लगा । इससे जगदीश चन्द्र ने समझा कि वहाँ रहने से वह और भी उलझन में फँस जावेगा । उसने यह वचन दे कर कि यह वियाना से लौटते समय उनका अभिनन्दन स्वीकार कर सकेगा, उस समय उसे स्वीकार न किया । इस पर बर्लिन के समाचार पत्रों में यह छप गया कि वह वियाना जा रहा है ।

जगदीश और रामू अंग्रेजी राजदूत से विदा हो भाग जाना चाहते थे । मिस्टर किपनिस तो उन्हें जाने की स्वीकृति देना चाहता था, परन्तु श्रीमती किपनिस उनके वहाँ पर रहने पर आग्रह कर रही थी । यह एक कारण था कि मिस्टर किपनिस दिखावे के लिये उन्हें कुछ दिन और ठहरने के लिये कह रहा था । इस परिस्थिति में एक दिन सायंकाल जगदीश चन्द्र रामू को साथ ले गुप्त मार्ग से दूतावास से निकल गया । वे दोनों अदृश्य हो वहाँ से चले गये ।

लोगों का विचार था कि वे वियाना चले गये हैं । वास्तव में वे पैरिस जा पहुँचे थे । उसके पश्चात् उन्होंने पुनः लोगों को ऐसा प्रदर्शन देना स्वीकार नहीं किया, जैसा बर्लिन में दिया था । पैरिस में उनकी कुछ पूछ-ताछ रही, परन्तु उसके पश्चात् वे समाचार पत्रों की दृष्टि से ओझल हो गये ।

यूरोप से अमेरिका और वहाँ से आस्ट्रेलिया, फिलिपाईन्स, जावा, सुमात्रा और वहाँ से जापान, चीन, तिब्बत और काश्मीर होते हुये वे अपने घर ऊधमपुर पहुँच गये ।

घर से निकले इनको छै वर्ष के लगभग हो गये थे। उनके वहाँ पहुँचने से न तो घर वालों को प्रसन्नता हुई और न ही दुःख। ठकुर-सुहाती करने सब बन्धु आये और लौट गये।

रामू के चेहरे का ओज पहले से और भी बढ़ गया था। जगदीश के घर वालों का विचार था कि रामू किसी बहुत ही धनी बाप का बेटा है और जगदीश जैसे निकम्मे का इतने वर्षों से खाने, पहिरने और भ्रमण करने का साधन बना हुआ है। इस विचारानुसार मीना के विवाह का विचार पुनः उपस्थित हुआ। पर रामू तैयार नहीं हुआ। इससे जगदीश के सम्बन्धी उससे और भी रुष्ट हो गए।

परिणाम यह हुआ कि जगदीश पुनः घर से जाने को तैयार हो गया। रामू ने एक दिन उन से कहा कि यदि आप आदेश देते हैं तो मैं विवाह कर लेता हूँ।

जगदीश का कहना था, “तुम वही करो जो तुम्हारा मन करने को कहता है।”

इस प्रकार बात रह गई। इस बार रामू ने जगदीश की अनुमति से मीना के विवाह के लिए पाँच हजार रुपयों का प्रबन्ध कर दिया।

इससे मीना के पिता को सन्तोष हुआ, परन्तु जगदीश के भाइयों की ईर्ष्या और भी बढ़ गई। नित्य ही झगड़ा होने लगा।

एक दिन जगदीश के बड़े भाई महेश ने उनके पास आ कर कहा, “जगदीश, अब तुम्हारी आयु पैंतालीस के लगभग हो गई है। तुम अपना विवाह क्यों नहीं करते? इससे रामू को भी अविवाहित रहना पड़ा है।”

“मैं अपना विवाह तो कर रहा हूँ। आगामी मास में विवाह के लिए जाऊँगा। रही रामू की बात। यह उसकी अपनी इच्छा पर

निभर है। मीना से वह विवाह करना नहीं चाहता। इस कारण मैं उस पर दबाव नहीं डाल सकता।”

“यह मकान किसका है—तुम्हारा या रामू का !”

“भैया ! तुम किसका समझते हो ?”

“सब लोग रामू का समझते हैं।”

“तो उसी का समझ लो।”

“तो विवाह के बाद कहाँ रहोगे ?”

“जहाँ रहूँगा देख लेना। रामू शायद यह मकान मुझे ही दे दे।”

“क्यों ?”

“यह तुम उसी से पूछ लो न ! क्या सब कुछ मुझसे ही पूछना है ?”

“मैं इस कारण पूछ रहा हूँ कि कल तहसीलदार आया था और रामू की आय का स्रोत पूछ रहा था। वह कहता था कि तुम लोग चोरी कर रुपया लाते हो और उससे अपना राजाओं के से ठाटबाट से निर्वाह करते हो।”

जगदीश ने बात साधारण समझी थी, परन्तु बात अधिक विकट हो गई थी। वास्तव में महेश ही जगदीश और रामू को तंग करने के लिये तहसीलदार को भड़का रहा था। इस कारण अगले दिन तहसीलदार स्वयं रामू को मिलने आ गया। रामू उसको देख कर विस्मय से पूछने लगा, “क्या आज्ञा है जो आपने कष्ट किया है ?”

“बात यह है कि यहाँ मुझे मजिस्ट्रेट के अधिकार मिले हुए हैं। इस कारण इस इलाके में शान्ति रखने का उत्तरदायित्व मुझ पर है। मैं देख रहा हूँ कि आप लोग इतने ठाटबाट से रहते हैं, परन्तु आपकी आय का कोई स्रोत नहीं दीखता। वह क्या है ?”

“मेरी विद्या ।”

“विद्या क्या रुपयों के अंडे देती है ? विद्या से कुछ किया जाता है तो रुपये मिलते हैं ।”

“हमारी विद्या सीधे ही धन-सम्पत्ति देती है ।”

“तब तो यह अनोखी विद्या है, जो अनायास धन बरसाती रहती है ।”

“जी हाँ, ऐसा ही है ।”

“ऐसी विद्या तो चोरों और डाकुओं के पास होती है ।”

“कुछ भी समझ लो । यदि चोरी डाका हमने डाला है तो हमें पकड़ लो ।”

“यही तो करने आया हूँ ।” इतना कह तहसीलदार ने बाहिर खड़े पुलिस वालों को भीतर बुला कर रामू को हथकड़ी लगवा दी । इस समय जगदीश भी बाहिर आ गया । उसने बहुत कहा कि रामू की गिरफ्तारी के वारंट दिखाये जायें, परन्तु रियासती बात थी, जहाँ कायदे-कानून नहीं चलते । तहसीलदार ने कहा, “बहुत बोलने की आवश्यकता नहीं, कहीं तुम भी न पकड़ लिये जाओ ।” जगदीश मुस्कराता हुआ खड़ा रहा । रामू को हथकड़ी डालते हुए वे तहसील की हवालत में ले गए, और वहाँ तीन दिन तक रख कर उसे जम्मू भेज दिया गया ।

जगदीश चन्द्र पहिले ही वहाँ पहुँच चुका था । वहाँ उसने रामू के विरुद्ध आरोप बताये जाने की माँग की । इस पर भी पाँच दिन के उपरान्त रामू को जम्मू की अदालत में उपस्थित किया गया । उस पर यह आरोप लगाया गया था कि उसके निर्वाह का कोई साधन

नहीं है। इससे अवारा घोषित कर रियासत से निकाल दिया जाये।

अदालत ने रामू से पूछा, “क्या नाम है तुम्हारा ?”

रामू चुप रहा।

“कहाँ के रहने वाले हो ?”

इसका उत्तर भी रामू ने नहीं दिया।

“तुम्हारे बाप का क्या नाम है ?”

इस पर रामू ने कहा, “मैं किसी बात का उत्तर नहीं देना चाहता। मैं समझता हूँ कि मुझे पकड़ना अन्याय है। मेरे विरुद्ध कोई आरोप नहीं।”

“यह तो देखा जायगा। पहिले नाम-पता तो लिखवाओ।”

“जब मेरा पकड़ा जाना ही अकारण है तो फिर उसके सम्बन्ध में जो भी कार्यवाही आप करेंगे वह भी अन्याय-संगत होगी। मैं इस अन्यायपूर्ण कार्यवाही में भाग लेना नहीं चाहता।”

“और कोई अपराध हो या न हो, पर इस अदालत के प्रश्नों का उत्तर न देना ही एक भारी अपराध है। अदालत का अपमान है। इस कारण मैं अब भी पूछता हूँ कि बताओ तुम्हारा क्या नाम है ?”

“अदालत का अपमान करने की मेरी कोई इच्छा नहीं है। पर मैं पूछता हूँ कि जब ऊधमपुर में कोई चोरी, डाका अथवा इसी प्रकार की घटना नहीं हुई, तो फिर यह कैसे अनुमान लगा लिया गया कि मैं चोरी-डाके से अपना पेट भरता हूँ। मुझे अकारण पकड़ना, मेरा अपमान करना है। मुझे तुरन्त छोड़ देना चाहिए। मुझे मुक्त करने के पश्चात् मेरे विषय में जो कुछ भी पूछियेगा उसका उत्तर दूंगा, परन्तु जब तक मैं इन हथकड़ियों और बेड़ियों से अकारण अपमानित किया जा रहा हूँ तब तक मैं अपने विषय में कुछ भी उत्तर देने को तैयार नहीं।”

“देखो मिस्टर रामू ! तुम्हारे यौवन और स्वास्थ्य को देख कर हर्ष होता है और मन तुम्हारे साथ अच्छा सलूक करने को कहता है । परन्तु तुम कानून को नहीं जानते । इस कारण कहता हूँ कि तुम अपना नाम और पता लिखवा दो, तो मैं तुम को छोड़ दूंगा । पर बिना नाम और पता लिखे मैं फैसला नहीं लिख सकता ।”

रामू ने मुस्करा कर कहा, “यह तो घोड़े के आगे गाड़ी जोतने की बात हो जायगी ।

“देखिये साहब ! मैं केवल यह बताने के लिए यहाँ खड़ा हूँ कि तहसीलदार ने एक निरपराध आदमी को पकड़ कर धोर अन्याय किया है । यदि आपका कानून भी इसकी स्वीकृति देता है तो यह और भी अधिक अन्याय है । ऐसे कानून को मानना मानवता से पतन है । रहा आपका मुझे छोड़ देना, सो आप में यह शक्ति ही नहीं कि मुझे पकड़ कर यहाँ कैद रख सकें । मैं जाता हूँ ।”

“क्या ?” मैजिस्ट्रेट ने धूर कर देखते हुए पूछा । परन्तु वह आँखें फाड़ कर देखता रह गया । उसके मुख से “क्या” के अतिरिक्त और कुछ नहीं निकला । रामू ऐसे हो गया जैसे धुएँ का बादल और फिर वह भी नहीं रहा । हथकड़ियाँ और बेड़ियाँ खट से भूमि पर गिर पड़ीं । सब लोग जो अदालत में खड़े थे, आश्चर्य में देखते रह गये । मैजिस्ट्रेट के शरीर पर रोएँ खड़े हो गये और वह कुर्सी से उठ खड़ा हो गया । वह कुछ कहना चाहता था, परन्तु उसके मुख से आवाज़ नहीं निकली ।

जगदीश ने झुक कर अदालत को सलाम की और बिना कुछ कहे अदालत से निकल गया ।

८

जगदीश अदालत से निकल रेल के स्टेशन की ओर चल पड़ा । कुछ दूर जाने पर रामू उसके साथ हो लिया और चलता हुआ कहने

लगा, “गुरु ! अब तो बड़ा गाँव को चलना चाहिए । ऊधमपुर वापिस जाने से व्यर्थ में भारी हट्ला होगा । सरकार फिर पकड़ना चाहेगी । इधर इस घटना का समाचार फैल जाने से हमारे दर्शकों का ताँता लग जायगा ।”

जगदीश ने हँसते हुए कहा, “मूर्ख, अदालत को कई दिन की सिरदर्द दे आये हो । जाने इस विषय में समाचार-पत्रों में कैसी-कैसी बातें प्रकाशित होंगी ।”

“सिर पटकने दो इन मूर्खों को । आज ही चल दें बड़े गाँव को ।”

‘मैं जानता हूँ कि मेरे वहाँ जाने से फिर भगड़ा खड़ा हो जायगा । इस पर भी मानिनी की उत्पीड़ित आत्मा को भी मुक्त करना है । इसीलिए चलेगे ।’

अगले दिन रामू और जगदीश बड़ा गाँव जा पहुँचे । जिस दिन वे वहाँ पहुँचे, शंकर का देहान्त हो चुका था । उसका अंत्येष्टि संस्कार कर लौट आये थे ।

इन्हें आया देख कर मंगल ने आगे बढ़ कर उस दुर्घटना का परिचय दिया । इससे दोनों को बहुत शोक हुआ । रामू भीतर गया तो सोहिनी को सांत्वना देने के लिए कहने लगा, “बहिन ! धैर्य धरो । बहुत दुःखी न हो ?”

“रामू ! मुझे इसमें सुख अथवा दुःख किसी का भी अनुभव नहीं हो रहा । एक बोझा सा प्रतीत होता था कि मैं उन्हें छोड़ कर ससुराल से चली आई थी । परन्तु अपने अन्तिम दिनों में उन्होंने मुझे अपनी सेवा का अवसर दे कर मेरा बोझा हल्का कर दिया है । भगवान जो करता है भलाई के लिए ही करता है ।”

“बहिन, मुझे सन्तोष है कि तुम अपने मन को वश में रख सकी हो। मैं अब अनुभव करता हूँ कि तुम्हारा विवाह-सम्बन्ध ठीक नहीं हुआ था। इस का परिणाम यही होना था। खैर, छोड़ो इस बात को, तुम्हारी सास और समुर कहाँ हैं?”

“उनका कुछ पता नहीं। दिवाला निकल जाने पर वे हरिद्वार चले गए थे। वहाँ से कभी सूचना नहीं आई कि वे कहाँ रहते हैं।”

रामू घर से बाहर आ रहा था कि बाहर रोने-पीटने का शब्द सुनाई दिया। रामू भागा हुआ बाहर आया तो उसने देखा कि एक घोड़ा गाड़ी में से दो औरतें रोती हुई उतरी और घर के भीतर जाने लगीं। रामू को सन्देह हुआ कि ये सोहिनी की सौतन और उसकी माँ है। इससे वह दरवाजे पर खड़ा हो गया। इतने में मंगल भी समीप आ गया और रामू से उनका परिचय दे कर बोला, “इन्हें भीतर जाने दो।”

“पहले माँ से पूछ आऊँ।”

माँ ने जब सुना कि लक्ष्मी और उसकी सास आई हैं तो उसने रामू का समर्थन किया। वह स्वयं बाहर चली आई और उनसे बोली, “आप यहाँ रोये-पीटे नहीं। रोना-धोना है तो इमशान भूमि पर जा कर रोयें।”

विवश हो वे पुनः अपनी घोड़ा-गाड़ी में सवार हो, नगर को लौट गईं।

जगदीश रामू की माँ के घर में ठहर गया। तेरह दिन तक शंकर की मृत्यु का शोक रहा और इन दिनों जगदीश और रामू मंगल के घर में आते-जाते रहे और वहाँ मोहिनी से और मानिनी से मिलते रहे।

इन दिनों मानिनी के मन की अवस्था विचित्र थी। उसके मन में अकथनीय चंचलता और अधीरता बनी रहती थी। वह अब घर से

बाहिर बहुत कम निकलती थी। इस कारण जब जगदीश घर के भीतर आता तब ही मानिनी उसको देख सकती थी। और वह ऐसे अवसरों के लिए व्याकुल रहती थी। इधर जगदीश की इच्छा भी मानिनी से मिलने को रहती। परन्तु मिलने का अवसर ही न मिलता था।

फिर भी किसी न किसी बहाने से उसे कोई न कोई अवसर मिल जाता था। उस समय मानिनी भी सब काम छोड़ कर वहाँ आ पहुँचती थी। मानिनी संस्कृत की बाल्मीकि की रामायण का पाठ करती थी। जगदीश उससे भाँति-भाँति के प्रश्न पूछता करता था जिससे वह उसके मानसिक विकास का अनुमान लगा सके।

इस प्रकार आँख-मिचौनी अधिक काल तक नहीं चल सकी। शंकर का तेरहवाँ हो जाने पर मानिनी का प्रश्न उपस्थित हुआ। मंगल और मोहिनी ने रामू तथा पंडित बृजलाल को पृथक् बैठा कर अपने मन की बात उपस्थित की। मंगल ने कहा, “रामू, तुम्हारे गुरु जी का मानिनी के विषय में क्या विचार है? वे उससे बार बार मिलने का आग्रह क्यों करते हैं?”

रामू ने अपने मन की बात कहने का यह उपयुक्त अवसर समझा। उसने कहा, “भैया! गुरुदेव और मानिनी का विवाह विधि ने लिखा है। मेरी और गुरुदेव की विद्या यह बताती है कि दोनों का जन्म-जन्मांतर का सम्बन्ध है। किसी कारण से गुरुदेव और मानिनी में इस जन्म में आयु का अन्तर हो गया है। परन्तु योगियों की आयु में बीस-तीस वर्ष कोई बड़ा अन्तर नहीं माना जाता।”

“रामू! लोग क्या कहेंगे! सब निन्दा करेंगे कि पन्द्रह सोलह वर्ष की लड़की को किसी लोभ में पड़ कर पचास वर्ष के बूढ़े के गले में बाँध दिया है।”

“ठीक है भैया ! परन्तु साधारण लोग इस बात को नहीं जानते । और न ही इस गूढ़ रहस्य को समझने की शक्ति रखते हैं । इससे उनके कहने से दो जन्म-जन्मान्तर के साथियों के मिलन में बाधा करना क्या उचित है ?”

“पर यही तो जानने की बात है कि कैसे यह पता लगा है कि ये जन्म-जन्मान्तर के साथी हैं ?”

“इसका प्रमाण तो मानिनी स्वयं दे सकती है । आप उससे पूछ सकते हैं ।”

“वह तो कहती है कि तुमने एक मंत्र जपने के लिए उसको दिया था । उससे उसके मन में अनेकानेक विचार ऐसे उठते रहते हैं जो साधारण लोगों में पागलों के लक्षण कहे जा सकते हैं ।”

“मंत्र तो बुद्धि के विकास के लिए दिया था । और ऐसा प्रतीत होता है कि उसने जप डलनी अच्छी तरह से किया है कि उसमें दूर-दृष्टि उत्पन्न हो गई है । भूत को तो जान गई है, साथ ही भविष्य के विषय में भी जानने का यत्न कर रही प्रतीत होती है । जो लोग इस प्रकार की शक्ति को नहीं समझते वे ही इसको पागलपन कहेंगे । परन्तु भैया, “उससे भी पूछ कर देखो तो वह क्या चाहती है ?”

इस पर मोहिनी ने कहा, “वह अभी बालिका है । वह क्या समझेगी है कि विवाहित जीवन क्या होता है । किसी कारण से तुम्हारे गुरु ने उस पर जादू कर रखा है । इससे वह पागल हो रही है ।”

“देखो भाभी ! सारे संसार में यही सम्मोहिनी मंत्र चल रहा है । एक का दूसरे पर न्यूनाधिक प्रभाव रहता है । इसी से एक दूसरे का कार्य करता है । गुरुदेव ने यह प्रभाव शक्ति दूसरों से अधिक प्राप्त कर ली है । यदि यह प्रभाव जीवन भर रह सके तो बताओ इसमें क्या हानि है ?”

“पर एक का जीवन तो दूसरे के जीवन से बहुत पहले ही समाप्त हो जायगा। पीछे दूसरे को अपना जीवन काटना दूबर हो जायेगा। न वह सम्मोहिनी प्रभाव रहेगा और न ही प्रभाव का उद्देश्य।”

“भाभी ! बात जैसी तुम समझती हो उससे उल्टी होने वाली है। जिसका जीवन तुम पहले समाप्त हो जाने की सम्भावना समझती हो, शायद वहीं पीछे रह जाय। यत्न तो यह करने की आवश्यकता है कि दूसरा भी योग-सिद्धि के द्वारा अपने साथी के साथ दीर्घ जीवन व्यतीत कर सके।”

“मुझे तो पूरे बातें समझ में नहीं आतीं। मैं समझती हूँ कि यदि तुम्हारे गुरु यहाँ से चले ही जायें तो मानिनी किसी अन्य से विवाह के लिए तैयार हो जायेगी। नगर के एक बड़े रईम के लड़के से रिश्ते की बातचीत हो रही है। वह लखपति है।”

इसे सुनते ही रामू हँस पड़ा। जब सब उसकी ओर प्रश्नभरी दृष्टि से देखने लगे, तो उसने कहा, “भाभी ! सोहिनी बहिन के लिए भी लखपति देखा था पिता जी ने। शंकर के पिता ने शंकर के दूसरे विवाह के लिए एक और लखपति देखा था। अब तुम भी नगर के एक और लखपति को देख रही हो। भगवान तुम लोगों को सुबुद्धि दे।

रहे गुरुदेव के चले जाने की बात। वे छः वर्ष तो दूर रहे थे। इस अन्तर में मानिनी उनसे दूर हुई है अथवा उनके समीप आई है।”

युक्ति से मंगल और सोहिनी निरुत्तर हो गए थे। इस पर भी उनका मन नहीं मानता था। अब पं० बृजलाल बोले, ‘मंगल भैया, मानिनी बालिका अवश्य है। इस पर भी उससे पूछ लेना आवश्यक है। यदि वह कोई ऐसी बात कहे जो तुम्हारी बुद्धि में न आवे तो उसको सम-

भाने का यत्न करो। यह तो मानना ही पड़ेगा कि वह तुम दोनों से अधिक विद्या और बुद्धि रखती है। मेरी सम्मति यह है कि उसको यह बताया जाये कि उसके विवाह के लिए दो प्रस्ताव हैं। दोनों का उसे पूरा विवरण दे दिया जाय। और यदि वह आपको निर्णय करने को कहे, तो तुम अपनी बुद्धि से निर्णय कर देना और यदि वह स्वयं निर्णय करना चाहे, तो उसको विचार करने के लिए समय दे कर अपना मत प्रकट करने को कहा जाए।”

“क्यों रामू, तुम क्या समझते हो?”

“मैं पंडित जी से सोलह आने सहमत हूँ। केवल इतना कह देना चाहता हूँ कि गुरु जी को निर्धन मत कहना। जितना रुपया चाहो आप के पास जमानत के रूप में जमा करा सकते हैं। सारे संसार की सम्पत्ति जिसकी उंगलियों पर खेलती हो उसको निर्धन नहीं कहना चाहिए।”

मोहिनी को रामू का एक सहस्र रुपया देखते-देखते बना देना याद हो आया। उसने कहा, “कितना रुपया जमानत दे सकते हो?”

“कहो तो तुम्हारे घर की उस कोठरी को सोने, हीरे, जवाहरातों में भर दें। तुम बताओ कितना चाहती हो?”

मंगल को भी हज़ार रुपए की बात स्मरण हो आई। उसने कहा, “मोहिनी, छोड़ो धन-दौलत की बात। नगर के धनियों पर मुझको किंचित् भी विश्वास नहीं रहा। उनकी भलमनसाहत उनके धन के उल्टे अनुपात से बढ़ती और घटती है। तुम मानिनी को बुलाओ।”

“जाओ रामू, बुला लाओ। रसोईघर में होगी।”

रामू भीतर गया। मोहिनी लस्सी बिलो रही थी। उसकी पीठ दरवाज़े की ओर थी और वह बिलोती हुई गा रही थी।

“आवत मोरी गलियन में गिरधारी ।

में तो छुप गई लाज की मारी ।”

“मानिनी” रामू ने हँसते हुए आवाज दी, “चलो हाज़िर हो जाओ ।”

मानिनी ने कहा, “लाती हूँ चाचा, अभी थोड़ी कसर है ।”

“अरी क्या लाती हो ? आज तुम्हारी लस्सी कोई नहीं पिएगा-चलो तुम्हारी पेशी है ।”

“चाचा ! क्या है ?” उसने मथनी छोड़, उठ कर चिन्तित भाव में उसकी ओर देखते हुए पूछा ।

“माँ बुला रही हैं ।”

“क्या है चाचा ?”

“मैं क्या जानूँ ।”

मानिनी ने रामू की ओर देखा । वह जानती थी कि वही उसके मन के भावों को समझता है । इस पर भी बिना कुछ और कहे वं पूछे बाहिर बैठक में जा पहुँची । वहाँ माता, पिता और पं० बृजलाल को गम्भीर भाव धारण किए बैठे देख कर दरवाज़े के समीप खड़ी हो गई । उसके पीछे-पीछे रामू आ रहा था । उसने कहा, “चलो न भीतर । डरो नहीं ।”

“आओ बेटी ।” पं० बृजलाल ने उसको बुलाते हुए कहा ।

मानिनी भीतर गई तो माँ के समीप बैठ गई । रामू पंडित जी के पास बैठ गया । बात पं० बृजलाल ने आरम्भ कर दी, “देखो मानिनी बेटी, आज तुम्हारे माता-पिता तुम्हारे विवाह के विषय में बात कर रहे हैं । दो-तीन स्थानों से तुम्हारे विवाह की बात हो रही है । तुम्हारे

माता-पिता यह निश्चय करना चाहते हैं कि कहाँ तुम्हारा सम्बन्ध करें। रामू भैया ने कहा है कि तुम से भी राय ली जाय। इस कारण तुमको बुला भेजा है।”

मानिनी चुपचाप बैठी हुई भूमि की ओर देखती रही। उसने इसमें अभी कुछ कहना उचित नहीं समझा। उसे चुप देख कर रामू ने कहा, “बताओ मानिनी, क्या कहती हो तुम?”

“कहने को क्या है?” उसने माथे पर त्योष्ठी चढ़ा कर कहा।

“तुम्हारा विवाह जो हो रहा है।”

“मेरा विवाह हो चुका है।”

“कब? किससे? किसने किया है?” मंगल ने पूछा।

“पूर्व जन्म में नटेश्वर जी से। तब भी भगड़ा खड़ा हुआ था। परन्तु मेरे एक मामा थे, वे मेरे पक्षपाती थे। उनकी सहायता से विवाह हो गया था। वही मेरे मामा आज मेरे चाचा हैं।”

“यह क्या पागलपन की बात करती हो? मानिनी!” उसकी माँ ने कहा। कौन नटेश्वर था, कौन तुम्हारा मामा था, तुम कौन हो, यह तो भगवान ही जानता है। जो कुछ तुम कहती हो यह भ्रममात्र है। इसमें कोई प्रमाण नहीं।”

“तो जैसा आप के मन में आये करिये। मैं आप जैसी बुद्धि नहीं रखती। आप मेरे पूज्य हैं, मैं आप की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करूँगी।”

इतना कह वह एक क्षण तक चुप रही, पश्चात् फिर कहने लगी, “मे क्या जाऊँ?” वह अब भी भूमि की ओर देख रही थी।

“नहीं, ठहरो।” मंगल ने कहा, “वह नटेश्वर कौन है? कैसे पता

चले कि यह वही है जिसको तुम नटेश्वर कहती हो ? रामू तुम्हारे मामा थे यह भी किस प्रकार समझ में आवे ?”

“मेरा मन ऐसा कहता है । इस पर भी मैं प्रमाण नहीं दे सकती । इसी कारण कहती हूँ कि जैसा आप कहेंगे वैसा ही करने का यत्न करूंगी ।”

इतना कहते-कहते वह उठ खड़ी हुई । उसे अब किसी ने रोका नहीं । वह बैठक से निकल कर पुनः रसोईघर में जा पहुँची और दही बिलोने लगी । गररं घूं, मथनी का चाटी में चलने का शब्द होने लगा ।

६

रामू, मोहिनी, मंगल और पं० बृजलाल मानिनी के चले जाने से एक दूसरे का मुख देखते रह गये । कितनी ही देर तक सब अपने मन में विचार करते रहे । रामू ने सब को स्वप्नलोक से निकालने के लिए कहा, “भैया ! गुरुदेव चाहते तो आप पर अपना सम्मोहिनी मंत्र चला कर विवाह कर यहाँ से चले जाते । परन्तु उनकी ऐसी इच्छा नहीं है । आप विचार कर बता दीजिये कि आप यह विवाह स्वीकार करते हैं या नहीं । मेरी प्रार्थना है कि आप उनसे भी इस विषय में बात कर लें । जब मानिनी से पूछा है तो उनसे पूछने में क्या हानि है ?”

पं० बृजलाल को मार्ग सूझ आया । वह मंगल के मुख की ओर देखने लगा । मोहिनी ने कह दिया, “ठीक है । उनको बुला लो और आज निर्णय कर दो । यदि तो विवाह होना है तो हो जाये” नहीं तो मैं उनके पाँव पड़ कर कह देना चाहती हूँ कि वे यहाँ से चले जायें और लड़की के मन की शान्ति को भंग न करें ।”

नौकर को भेज कर जगदीश चन्द्र को बुला लिया गया । वह आया तो फिर बातचीत आरम्भ हो गई । मंगल ने कहा “गुरुदेव ! मानिनी

